नागरिक शास्त्र के सिद्धांत
तथा
भारतीय शासन-प्रणाली

(प्रथम भाग)

के० एम० कौल
अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग,
गवर्नमेन्ट कालेज, अजमेर

प्रकाशक—
महेश बुक डिपो
पुरानी मण्डी, अजमेर

(१४)

कांटों का ताज पहना

सन् १९२९ में लाहौर कांग्रेस के सभापति

इसी अधिवेशन में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हुआ था

(१३) सारा परिवार देश-प्रेम में डूब गया

कमला नेहरू (पत्नी) : [illegible] : इन्दिरा गांधी (पुत्री)

भूमिका

इस पुस्तक में पाठ्यक्रम की सारी बातें सम्मिलित हैं, परन्तु इसमें अंग्रेजी लेखकों की लिखी हुई पुस्तकों का शब्दानुवाद नहीं किया गया है। विषय प्रवेश को भारत माता की संस्कृति के आधार पर वैज्ञानिक रुप से समझाने का प्रयत्न किया गया है और यही इस पुस्तक की विशेषता है। भारत के इतिहास में यह ऐसा समय है जब कि जीवन की सारी महत्त्वपूर्ण बातों में परिवर्तन हो रहा है। प्राचीन सिद्धान्तों का महत्व कम हो रहा है और नवीन सिद्धान्त समाज में जोर पकड़ रहे हैं वर्तमान स्थिति की पूर्ति के लिये भारत की संस्कृति को एक नया रुप दिया जा रहा है। विद्यार्थी जो कि भविष्य के नेता हैं उनको इन बातों का ज्ञान देना आवश्यक है जिससे वो जीवन यात्रा में प्रवेश करने पर नये भारत के नव-निर्माण में हाथ बटायें।

प्रथम अध्याय में कई धाराएें जिनके द्वारा राष्ट्रीय कोष को समृद्ध करने का प्रयत्न हो रहा है उनका इसमें वर्णन है। विद्यार्थियों का ध्यान इसकी ओर आर्कषित किया गया है और इस संदेश को हर एक ग्राम में पहुंचा कर लोगों को अपनी बचत इन धाराओं में जमा कराने पर जोर दिया गया है।

परिवार के अध्याय में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि छोटे परिवार में लक्ष्मी का निवास होता है। बड़ा परिवार दरिद्रता और बीमारी का घर है। छोटे परिवार में बालकों को अनुशासन की मर्यादा में नागरिकता का पाठ दिया जा सकता है। जीवन का बीमा हो जाने से भविष्य भी उज्ज्वल रहता है। सरकार की स्थापित की हुई Family Planning Clinic से सलाह लेना अपने नैतिक उत्तरदायित्व को समझना, अच्छे नागरिक होने को सिद्ध करना है। इस प्रकार जीवन से सम्बन्ध रखने वाली बातों का भी इस अध्याय में वर्णन है।

अध्याय आठवें में धर्म का वास्तविक महत्व बतलाया गया है और धर्म के नाम पर पाखण्ड का जाल जो समाज में बिछा हुआ है उसकी हानियां बतलाई गई हैं परन्तु इस नये दृष्टिकोण पर, हिन्दु संस्कृति के आधार पर ही प्रकाश डाला गया है।

तुलसी या संसार में सबसे मिलिये धाय।
क्या जाने किस रूप में नारायण मिल जाय ।।
तुलसी या संसार में भांति भांति के लोग।
हिलिये मिलिये प्रेम से नदी नाव संजोग ।।

राजनैतिक क्षेत्र में हमने प्रजातन्त्र के स्वर को बदल दिया है जो कि स्वतन्त्राता, समानता और सामाजिक न्याय पर निर्भर है ।

अध्याय तेरहवीं में पाठ्यक्रम की सारी बातों का वर्णन किया गया है। परन्तु सिद्धान्तिक बातों का वर्णन करते हुए वास्तविक महत्व रखने वाली बातों का भी वर्णन है। अन्न की कमी जो सरकार ने प्रजातन्त्र के आधार पर कार्य करते हुए इतने कम समय में पूरी करदी है उसका वर्णन है और विदेशी संवाददाताओं ने और दूसरे राजदूतों ने भारत सरकार की जो प्रशंसा की है उसका भी उल्लेख है जिससे कि नवयुवकों को प्रजातन्त्र विचार-धारा में विश्वास उत्पन्न हो और कार्य करने की क्षमता बढ़े।

नागरिकता का पाठ तुलसीदासजी की निम्नलिखित दो पद्य से आरम्भ किया गया है।

जेन मित्र दुख होंहि दुखारी। तिन्ह हि बिलोकत पातक भारी ।।
निज दुख गिरि समरज कर जाना। मित्रक दुख रजमेरु समाना ।।

इससे अपनी धार्मिक पुस्तकों को वैज्ञानिक रुप से अध्ययन करने की रुचि उत्पन्न की गई है और पाठ्यक्रम की सारी बातें लिखने के पश्चात भारत सेवक समाज जो कि पंच वर्षिय योजना के अन्तरगत स्थापित की गई है। उसका भी वर्णन है। विद्यार्थियों को इसका सदस्य बनकर कार्य करने पर जोर दिया गया है।

राष्ट्रवाद, साम्राज्यवाद और अन्तर-राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में भी संक्षेप में वर्णन है, परन्तु जो नई बात इस पुस्तक में दी गई है, वह एशिया का राष्ट्रवाद है जो कि अभी तक हिन्दी की किसी पुस्तक में नहीं देखने में आया है। इस प्रकार हिन्दुस्तान की विदेशी नीति का चित्र उनके सामने रखा गया है। इसके अध्ययन करने से पूर्ण ज्ञान हो जायगा कि अन्तर-राष्ट्रीय स्थिति में भारत की कितनी अधिक मात्रा में संसार के लिये लाभदायक सिद्ध हुई है। यह नीति भारत के आध्यात्मिक दृष्टिकोण के आधार पर है। विचारधारा में भिन्नता होते हुए हम एकता की झलक सब में देखते हैं और सारे संसार को यह पाठ पढ़ा रहे हैं कि विचारधारा के भेदभाव के कारण एक दूसरे से घृणा न करो और एक दूसरे से मिलजुल कर परस्पर के सहयोग से रहो इसी में मनुष्य जाति का कल्याण है।

साम्राज्यवाद और समाजवाद की विशेषताओं का वर्णन करते हुए उनका तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। साम्यवाद का दक्षिणी-पूर्वी एशिया में जो भय है उसका कारण बतलाया गया है। साथ-साथ उपाय भी दिया गया है। प्रजातन्त्र राज्य साम्यवाद का क्यों विरोध कर रहे हैं इसका भी कारण बतलाया गया है। चीन और हिन्दुस्तान की आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करके यह सिद्ध किया गया है कि दोनों राज्यों की आर्थिक स्थिती एक ही नीति के आधार पर है और इस प्रकार साम्राज्यवाद, साम्यवाद और अन्यवाद यह सब सैद्धान्तिक हैं और इनका वास्तव में कोई महत्व नहीं है।

अन्त में सर्वोदय समाज और भूमिदान यज्ञ, भारत की इस नयी विचारधारा का संक्षेप में वर्णन है जिनका कि ध्येय मनुष्य में काम, क्रोध, मोह, लोभ और तृष्णा की मात्रा को कम करके व्यक्ति में परिवर्तन लाना है और इस प्रकार समाज में परिवर्तन की एक दृढ़ नींव डालनी है। इस नीति के आधार पर ही मनुष्य जाति का कल्याण हो सकता है।

यह पुस्तक इस विषय की अन्य पुस्तकों से कुछ मात्रा में भिन्न हैं। इस विषय की अन्य पुस्तकों के समान इसमें पाठ्यक्रम की सैद्धान्तिक बातें, जिनका कि महत्व परीक्षा में सफलता प्राप्त करना होता है उन पर ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें वास्तविक बातें जिनका कि जीवन से सम्बन्ध है उनका भी वर्णन है। इस पुस्तक का ध्येय नवयुवकों को नये भारत के चित्र की झलक दिखलाना, उनमें देश प्रेम, समाज सेवा, नयी जाग्रति उत्पन्न करना, उनके चरित्र को सुधारना, सोच-विचार की योग्यता को विस्तृत करना और वर्तमान स्थिति का ठोस ज्ञान देना है जिससे कि उनमें नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न हो। प्रजातन्त्र में इस प्रकार के कई अवसर समय समय पर आते हैं जब कि समाचार पत्र या कुछ व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह अपने स्वार्थ के लिये वर्तमान स्थिति का खण्डन करते हुए लोगों को सब्ज बाग दिखला कर अनुचित मार्ग ग्रहण करने पर जोर देते हैं। वास्तविक ज्ञान न होने के कारण पढ़े-लिखे लोग तक उनके जाल में फँस जाते हैं। यदि यह पुस्तक वर्तमान स्थिति का वास्तविक ज्ञान और सही सोच विचार की योग्यता उत्पन्न कराने में सफल सिद्ध हो सकी तो मैं इस तुच्छ प्रयास को सफल समझूँगा। जय भारत का नाम लेकर इस पुस्तक रूपी नाव को में प्रजातन्त्ररूपी समुद्र में छोड़ रहा हूँ और विद्या मन्दिर रूपी बन्दरगाह जहां यह रुकेगी वहां पर विद्यार्थियों में मनुष्यता के भाव उत्पन्न करने में उपयोगी सिद्ध होगी।

ईश्वर तो मिलता है, लेकिन इन्सान नहीं मिलता।
ये चीज वो है जो देखी कहीं कहीं मैंने।।

दिनांक ५ नवम्बर, १९५४ (जय भारत)

के० एम० कौल
अध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग,
गवर्नमेन्ट कॉलेज, अजमेर।

विषय-सूची

PAPER—I PRINCIPLES OF CIVICS

CIVICS—Ist scope and methods. The relation of Civics with other social Sciences. How man is related to Society. The main evils of existing Society.

Types of Associations: Social, Economic, Political, and Cultural. The importance of the family. *Religion as a factor in social life. Social education.*

Definition of State: Its essential elements. Theories of the origin of the State. The meaning of sovereignty. *The nature* and sources of law. Organs of Government and their inter-relationship.

The classification of States & Governments. Democracy compared with other forms of Government. The essential conditions of the successful working of Democracy. *Ends and functions of the States.* Local self-governing bodies.

The ethicae and legal connotation of citizenship. Hindrances to good citizenship. The rights and duties of citizens. Liberty and equality. The Civics ideal. Political parties; Public opinion. Nationalism, Imperialism and internationalism.

अध्याय प्रथम

विषय प्रवेश

नागरिक शास्त्र क्या है

भारत के नागरिकों का धार्मिक दृष्टिकोणः—हमारे देश के प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू अपनी पुस्तक हिन्दुस्तान की कहानी में लिखते हैं कि हिन्दुओं में आचार की शुद्धता का बहुत बड़ा विचार रहा है। उसका एक अच्छा नतीजा रहा और बहुत से बुरे नतीजे भी हुए। अच्छा नतीजा तो शरीर की सफाई थी। रोज का नहाना हिन्दुओं की जिंदगी का एक खास अंग रहा है। इसमें ज्यादातर दलित वर्ग भी शामिल है। हिन्दुस्तान से ही यह आदत इंगलिस्तान और दुसरी जगहों में फैली। साधारण हिन्दु और गरीब से गरीब किसान को अपने बर्तनों को साफ और चमकता हुआ रखने में गर्व का अनुभव होता है। सफाई का यह विचार वैज्ञानिक न समझना चाहिये। क्योंकि वही आदमी जो दिन में दो बार स्नान करेगा बिना संकोच के ऐसा पानी पी लेगा जो कि साफ नहीं है और जिसमें कीटाणु भरे पड़े हैं। इस विचार में समाज की ओर परस्पर के सहयोग की भावना भी नहीं हैं, कम से कम यह अब नहीं रहा है। वही मनुष्य जो अपने झोंपड़े में काफी सफाई रखता है सारा कूड़ा करकट गांवों की गलियों में या अपने पड़ौसी के घर के आगे डाल देगा। गांव आम तौर पर बड़े गन्दे होते हैं और जगह जगह कूड़ा करकट के ढेर लगे हुए मिलते है। यह भी देखने में आ गया कि सफाई का खुद कोई ख्याल पैदा नहीं होता। इसलिये उसका ख्याल किया जाता है कि उसको धर्म के आकार का रूप दिया गया है। जहां यह धर्म की आज्ञा का ख्याल नहीं वहाँ सफाई का दर्जा प्रत्यक्ष रूप में गिरा हुआ है।

परस्पर का सहयोगः—हमारे यहाँ धर्म का बोलबाला रहा और धर्म की आज्ञा का ही लोगों ने पालन किया। परन्तु अब समाज

उन्नति के मैदान में आगे बढ़ चुका है, और इसका रण धर्म का महत्व बहुत कम हो गया है। धर्म अधिकतर व्यक्तिगत सुधार की ओर ध्यान देता है। और इस कारण साधारण व्यक्ति का दृष्टिकोण छोटा बनाता है। वर्तमान समय में नागरिक शास्त्र का महत्व अधिक हो गया है जो कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है और समाज की ओर परस्पर के सहयोग का पाठ पढ़ाता है। यह प्रत्यक्ष है कि समाज की नींव परस्पर के सहयोग पर खड़ी है और यह परस्पर का सहयोग और वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्राणी मात्र में जितना ही व्यापक अधिक और सत्य होगा, विश्व में उतना ही शान्ति सुख होगा।

सामाजिक अधिकार और कर्तव्यः—समाज मनुष्य को कुछ अधिकार देता है जिसके सहयोग से वह केवल अपना ही विकास नहीं करता है; बल्कि साथ साथ औरों के विकास में भी सहयोग देता है। प्रत्येक अधिकार के प्रति उसका कुछ न कुछ कर्तव्य भी हो जाता है। जो समाज उसे अधिकार देता है, वह समाज व्यक्ति से भी यह आशा रखता है कि वो उसकी उन्नति के लिये पूरा सहयोग देगा, यह व्यक्ति का कर्तव्य हो जाता है कि वो अपने अधिकार की पूर्ती पूर्ण रूप से करे। इन अधिकारों और कर्तव्यों को सुरचित तथा सुव्यवस्थित रखने के लिये एक संघठन का होना आवश्यक है। नागरिक शास्त्र में इन अधिकारों और कर्तव्यों का जो मनुष्य का पथ प्रदर्शन करते हैं तथा उन समस्त संस्थाओं का अध्ययन है। आचार्य गोल्ड लिखते हैं कि नागरिक शास्त्र मनुष्य की संस्थाओं आचरणों, क्रियाओं और आदर्शों का अध्ययन कराता है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने अधिकारों और कर्तव्यों का पालन करते हुए राजनैतिक समुदायों की सदस्यता से लाभ उठा सकते हैं।

"वाइट" साहब का कथनः—नागरिक शास्त्र में प्रथम हम इस बात का अध्ययन करते हैं कि मनुष्य स्वयं के लिये उसके समाज के लिये राज्य के लिये और तमाम मनुष्य जाति के लिये किस प्रकार का जीवन

व्यतीत करे जिससे कि सब सुखमय जीवन व्यतीत कर सकें। द्वितीय हम यह अध्ययन करते हैं कि भूत काल की संस्कृति को स्थापित रखते हुए भविष्य में उन्नति के लिये इस प्रकार आगे कदम उठाना चाहिये जिससे कि हम वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा कर सकें और अपनी संस्कृति की अच्छाईयों को ग्रहण करते हुए उन्नति के मार्ग में तेजी से कदम बढ़ा सकें।

वर्तमान स्थिति में नागरिक शास्त्रका ध्येयः—कई शताब्दियों की तबाही के बाद एशिया का महा द्वीप और खास तौर पर हिन्दुस्तान ने फिर उन्नति के मार्ग में आगे पद रक्खा है। हमारे देश भारतवर्ष में वर्तमान समय में दो प्रकार के मनुष्य हैं। एक तो वे जो वर्तमान विज्ञान की उन्नति को ठुकरा कर फिर प्राचीन सभ्यता और सादगी का जीवन बिताने पर जोर देते हैं। दूसरे प्रकार के मनुष्य वे है जो कि पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगे हुए हैं और अपनी तमाम विरासत में आई हुई संस्कृति का अंत करके वर्तमान पश्चिमी संस्कृति को ग्रहण करने पर जोर देते है। नागरिक शास्त्र का अध्ययन हमें मध्य श्रेणी की नीति ग्रहण करने पर जोर देता है। उसका ध्येय मनुष्य में रचनात्मक आदर्श उत्पन्न करना है। अपने सामान्य जीवन का विकास अपनी संस्कृति तथा परम्पराओं के विचारधाराओं पर करते हुए हमको वर्तमान स्थिति की पूर्ती के लिये नयी अच्छाइयां तथा रीति रिवाज ग्रहण करना चाहिये ताकि समाज की उन्नति का क्रम जारी रहे नागरिक शास्त्र हमको पश्चिमी प्रगति और वर्तमान विज्ञान की उन्नति को हिन्दुस्तान की दार्शनिक और आध्यात्मिक विचारधारा से मिलाने पर जोर देता है इसी में हमारा कल्याण है, यही नागरिक शास्त्र हमको सिखलाता है।

* "The glory of India consists in learning from the west all that is good in their scientific progress and materialism, but it should be combined with India's spiritual background. Make a European Society with India's culture", and thus preserve the acquisition already made and bring about future development of our culture.

*** Discovery of India Page 401**

आचार्य गिडी की परिभाषाः—आचार्य गिडी (Gedde) ने नागरिक शास्त्र का वर्णन इस प्रकार किया है:—

Civics is the application of social survey to social service.

अर्थात समाज की देख भाल के बाद जो ज्ञान प्राप्त हो और जो बुराइयां मालूम हो उनको समाज सेवा द्वारा दूर करने को नागरिक शास्त्र कहते हैं।

सोशल सर्वे का अर्थः—इसका अर्थ यह है कि सरकार को चाहिये कि अपने नागरिकों की सामाजिक स्थिति की जाँच पड़ताल कराये वह यह मालूम करे कि नागरिकों की आमदनी क्या है और खर्च क्या होता है ? यदि वे खेती करते हैं तो साल में कितने समय तक बेरोजगार रहते हैं ? यह और इस प्रकार के दूसरे प्रश्नों की जाँच-पड़ताल आवश्यक है। इसी को social survey या समाज की जांच-पड़ताल कहते हैं।

सोशल सर्वे से लाभः—इससे सरकार को यह मालूम हो जायगा कि किन किन कारणों से जनता की उन्नति रुकी हुई है। कुछ बुराइयां तो इसमें ऐसी होगी जिनको कि सरकार कानून द्वारा दूर कर सकती है और सरकार को इनको दूर करने के लिये उचित नियम बनाने चाहिये जिनसे साधारण मनुष्यों की उन्नति में रोड़े अटक रहे हैं, वह दूर हो जाय। यदि सरकार ऐसा करे तो वह समाज सेवा कर रही है।

कुछ ऐसी बुराइयों का भी पता लगेगा जो सरकार के बनाये कानून द्वारा दूर नहीं हो सकती। उनके दूर करने के लिये नागरिकों को स्वयं प्रयत्न करना होगा। नागरिकों को चाहिये कि हर प्रकार के सुधार के लिये सरकार पर निर्भर न रहें; बल्कि इस प्रकार संस्थाओं का निर्माण करें जिससे कि दूसरे साथियों का सुधार हो।

गिडी साहब के कथन का यही अर्थ है कि कुछ बुराइयाँ सरकार कानून द्वारा दूर करे और दूसरी बुराइयां जो कानून के द्वारा दूर नहीं

हो सकती उनको लोग स्वयं अपने प्रयत्न से दूर करें और इस प्रकार समाज का सुधार करें। नागरिक शास्त्र का उद्देश्य केवल सामाजिक संस्थाओं का ज्ञान तथा उनकी उत्पत्ति तथा विकास का वर्णन ही नहीं अपितु मनुष्यों की जाति में के प्रति सजीव प्रेम भर देना है।

वर्तमान काल में सर्वे का महत्वः--अजमेर और भारत के अन्य दूसरे राज्यों में आर्थिक स्थिति की जांच पड़ताल के लिये बोर्ड आफ एकनोमिक इनक्वारी के दफ्तर स्थापित हुए हैं। अजमेर में यह महकमा श्री मान बाकची साहब की अध्ययक्षता में कार्य कर रहा है। सोशल सर्वे खतम होने पर हमें समाज की बुराइयों का पता लगेगा।

समाज का बंठवाराः--कई कारणों से हम समस्त मानव समाज का विकास नहीं कर पाये। मनुष्य कई नसलों और जातियों में विभाजित है। इनकी फिर भिन्न भिन्न शाखायें हो गई हैं। भूगोल के कारण कई राज्य उत्पन्न हो गये हैं। इन राज्यों में धर्म और भिन्न २ विचार धाराओं के कारण आपस में भेद भाव हो गये हैं। भिन्न २ समूहों की रीति रिवाज और संस्कृत अलग २ है। धन, पैदाइश और पेशों के कारण भिन्न २ वर्ग उत्पन्न हो गए हैं। पेशों ने अपने विकास के लिये भिन्न २ समुदाय स्थापित कर लिये हैं। मनुष्यों ने भी अपनी रुचि और शिक्षा के अनुसार अलग २ संघ बना लिये हैं। अन्त में अनेक कुटुम्ब हैं जो कि चन्द व्यक्तियों से मिल कर बने हैं। हर एक व्यक्ति का पहले तो अपने कुटुम्ब से और उसके पश्चात उसकी सहानुभूति दूसरे उन समूहों से हैं जिससे कि उसका सम्बन्ध है। परन्तु हर एक व्यक्ति का सम्पूर्ण समाज से सम्बन्ध नहीं होता।

मनुष्य का सम्बन्धः--व्यक्ति अधिकतर समूहों के सुधार का प्रयत्न करता है जिससे कि उसका सम्बन्ध हो। और दूसरे समूह से सम्बन्ध बहुत सीमित है। संसार में इस प्रकार के मनुष्य गिनती ही के मिलेंगे जिनको कि मनुष्य जाति से प्रेम हो। और जिनमें मनुष्य जाति के

सुधार की लगन हो। अधिकतर मनुष्यों को अपने राज्य और जाति ही से प्रेम होता है। और अपने राज्य की रक्षा के लिये वे अपना जीवन तक बलिदान करने को तैयार रहते हैं। परन्तु दूसरे राज्यों से उसकी सहानभूति इतनी कम होती है कि उनकी आर्थिक स्थिति गिरा कर वे अपने राज्य की स्थिति सुधारने को तैयार रहते हैं। इससे उतर कर इस प्रकार के भी अधिक मनुष्य होते हैं। जिनको राज्य की उन्नति का बिलकुल ख्याल नहीं होता और अधिकतर वे यही प्रयत्न करते हैं कि उनकी जाति या समाज की उन्नति हो। इसके अतिरिक्त इस प्रकार के मनुष्य भी हैं जिसका कि ध्येय अपने पेशे के लोगों के सुधार का होता है। अधिकतर मनुष्यों को अपने कुटुम्ब के सुधार और उन्नति की लगन लगी रहती है और दूसरे समूहों से उनको सहानुभूति बहुत कम होती है।

मनुष्य के सम्बन्ध का रहस्यः- मनुष्य के अन्दर स्वार्थ प्रकृति की देन है। ऐसा कोई भी मनुष्य नहीं होगा जिससे स्वार्थ न हो। हर एक व्यक्ति को अपनी कुटम्ब के उन्नति की लगन लगी रहती है। कुटम्ब की सहानभूति और प्रेम पैदा करने के लिये मनुष्य को प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं है। यह तो प्रकृति की ओर से मनुष्य में पाई जाती है। उन्नति तभी होगी जब कि इस भावना का गोला चौड़ा किया जाय। और मनुष्य अपने कुटुम्ब का बलिदान करके दूसरे समूह के साथ ही इतना प्रेम और सहानभूति रख सके। जितना कि वह अपने कुटम्ब के साथ रखता है।

त्येजेत्कुलये पुरुष, ग्रामस्याये कुल त्येजत्।
ग्राम जनपदस्यार्थ आत्मार्थ प्रथिवि त्येत त्॥

इसका मतलब यह है कि इन्सान को गांव की उन्नति के लिये कुटुम्ब को और राज्य की उन्नति के लिये गांव को और संसार की उन्नति के लिये अपने राज्य को न्योछावर करने को तैयार रहना चाहिये। हमारी परम्परा के आधार पर ही नागरिक शास्त्र का भी यही ध्येय

है और वो भी हमको यही पाठ पढ़ाता है कि छोटे समूह को बड़े समूह के आगे झुक जाना चाहिये।

मनुष्य जाति से प्रेमः—रंग, नसल, राज्य और इस प्रकार की दूसरी बातों ने मनुष्य मनुष्य के बीच में दीवारें खड़ी करके उनको एक दूसरे से अलग कर दिया है। परन्तु मनुष्य मनुष्य एक है और एक मनुष्य के दूसरे मनुष्य से मिलना आवश्यक है विज्ञान की उन्नति के कारण ये दिवारें अब गिर चुकी है और एक राज्य में जो घटना होती है उसका प्रभाव दूसरे राज्यों पर भी पड़ता है। एक राज्य की विचार धारा तमाम मनुष्य जाति को प्रभावित करती है। इन सब कारणों से हम अलग २ रहते हुए भी एक हो गये हैं। और इन कारणों से समस्त मनुष्य जाति से सहानभूति और प्रेम करना हमारे लिये बहुत आवश्यक है।

राज्य से प्रेमः—हर एक मनुष्य के लिये देश भक्त होना आवश्यक है परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि वह अपने देश की उन्नति के लिये ऐसा कार्य करे जिससे कि समस्त मनुष्य जाति को धक्का लगे या समस्त मानव समाज की उन्नति के विपरीत हो। किसी राज्य को, दूसरे राज्य को कमजोर देखकर उसकी कमजोरी से फायदा उठा कर उसकी स्वतन्त्रता को कुचल देने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। और अभिमान के कारण, दूसरी जातियों से मनुष्य जाति की उन्नति करने के लिये हमें सम्पर्क स्थापित करने के लिये पीछे नहीं हटना चाहिये। मतलब यह है कि मनुष्य की देश भक्ति इतनी अधिक नहीं होनी चाहिये जिससे कि मनुष्य जाति को धक्का लगे। इस बात का ही ख्याल रखते हुए हमें और दूसरी जगहों में अपनी देश की सेवा और उन्नति का पूरा पूरा प्रयत्न करना चाहिये देश की सेवा से ही मनुष्य के गुणों का विकास हो सकता है।

समूह से प्रेमः—हर एक राज्य में कई प्रकार के समूह होते हैं।

जैसे कि मजदूर संघ, पूंजीपति का संघ, शिक्षक का संघ, विद्यार्थियों का संघ, मजहब का संघ इत्यादि २। साधारण तौर से यह समूह मनुष्य के एक खास ध्येय को प्राप्त करने के लिये होते हैं। परन्तु ये समूह देश की उन्नति में जभी साझेदार हो सकते हैं जब कि वे राज्य के सुधार का ख्याल भी अपने सामने रखते हों। और राज्य की उन्नति के लिये एक दूसरे समूह से सम्पर्क स्थापित करने को तैयार रहें। मजदूर संघ का ध्येय मजदूरों की आर्थिक उन्नति करना होता है। परन्तु वह देश की उन्नति में जभी साझेदार हो सकता है जब कि वह पूंजीपति के संघ के साथ मेलजोल का बर्ताव रखे। यदि वो अपना ही लाभ आगे रखे और अपना वेतन बढ़ाने की मांग आगे रखता जाय और पूंजीपति के संघ की स्थिति का ध्यान न दे तो इस प्रकार के दृष्टिकोण से राज्य की उन्नति भंग होती है। व्यक्ति को अपने सुधार और उन्नति के आगे राज्य की उन्नति और सुधार को नहीं भूल जाना चाहिये।

कुटम्ब से सम्बन्धः—जैसे कि हम पहले लिख चुके हैं कि कुटम्ब के सुधार की लगन हर एक मनुष्य में प्रकृति की ओर से होती है और इस लगन को पैदा करने के लिए किसी प्रकार की शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं होती। इसके विपरित हमेशा यह कोशिश रहती है। कि इस लगन का घेरा चौड़ा अधिक किया जाय और जिस प्रकार से कि मनुष्य अपने कुटुम्ब के सुधार का प्रयत्न करने को तैयार रहता है। वैसे ही उतनी ही लगन अपने गांव या शहर या प्रान्त या राज्य की सेवा के लिये उत्पन्न हो जाय! कुटुम्ब की सेवा की भावना अधिक मात्रा में होने से आदमी स्वार्थी बन जाता है। और फिर शहर प्रान्त राज्य की उन्नति रुक जाती है। और फिर इसका प्रभाव व्यक्ति पर अपने आप खराब पड़ता है। जिस शहर या गाँव में व्यक्ति में स्वार्थ अधिक होता है। और वे कुटम्ब की सेवा और धन एकत्रित करने में इतने लगे रहते हैं कि वे गांव और शहर की ओर ध्यान नहीं देते हैं तो फिर उन

जगहों का प्रबन्ध खराब हो जाता है। शहर और गांव में बीमारियाँ फैलती हैं और हर एक व्यक्ति उन बीमारियों के शिकार बनते हैं। और उनको धन प्राप्त करने में रुकावटें पैदा होती हैं।

व्यक्ति को चाहिये कि कुटुम्ब की उन्नति को बलिदान करके अपने नगर या गांव के प्रबन्ध में पूरा पूरा भाग लें। इससे नगर की स्थिति सुधरेगी। शुरु में इस बलिदान से तुम्हें कुछ आर्थिक हानि होती हो परन्तु भविष्य में इससे जरुर लाभ होगा और तुम्हारी कमी पूरी हो जायेगी। इसी प्रकार से जब प्रान्त में आवश्यकता हो तो तुम्हें शहर को बलिदान करना होगा और जब राज्य को आवश्यकता हो तो तुम्हें अपने प्रान्त को बलिदान करके अपने राज्य की सेवा के लिये तैयार रहना चाहिये। जब ही देश की उन्नति होगी। नागरिक शास्त्र का यही मुख्य पाठ है। डाक्टर बेनी प्रसाद ने लिखा है कि नागरिक शास्त्र यह शिक्षा देता है कि मनुष्य का सम्बन्ध गांव, प्रान्त, राज्य और संसार से इस प्रकार हो कि सब समूहों की एक साथ उन्नति हो। व छोटे समूह को बड़े समूह के आगे झुक जाना चाहिये! गांव को राज्य के आगे और राज्य को संसार के आगे। मनुष्य केवल अपने राज्य का ही नागरिक नहीं है! बल्कि विश्व का भी नागरिक है और इस नाते विश्व के प्रति उसका कुछ कर्तव्य है। मानव की सेवा करना और उसे उन्नति और विकास पथ पर ले जाना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। नागरिक शास्त्र हमको यही पाठ पढ़ाता है और इसके आधार पर ही कार्य करने से विश्व में शान्ति स्थापित होगी।

इस दृष्टिकोण को उत्पन्न करने का तरीका:—इन सब बातों के लिये पहली चीज तो दया और सहानुभूति है। परन्तु इसके साथ साथ ज्ञान और सोच विचार भी बहुत आवश्यक है। क्योंकि वर्तमान समय में समाज की राजनैतिक और आर्थिक स्थितियां इतनी कठिन हैं कि उनके सुधार के प्रयत्न के लिये बहुत सोच विचार की आवश्यकता है। इसलिये शिक्षा ग्रहण करना बहुत आवश्यक है। तीसरे हमको अपना

दृष्टिकोण बड़ा बनाना चाहिये जिससे कि साधारण भेदभाव उन्नति में बाधा नहीं पहुंचा सके। हमको दूसरे देशों से संपर्क स्थापित करके एक दूसरे के गलत विचारों को दूर करना चाहिये। अपना धन उनको देना चाहिये और जो हममें कमियां है उनको उनसे ग्रहण करनी चाहिये। इस प्रकार से दिमाग में ताजगी पैदा होती है और सब की उन्नति एक साथ होती है। मेल से युद्ध की भावना कम हो जाती है और फिर समस्त मनुष्य जाति को उन्नति करने का अवसर मिलता है।

Council of world Affairs:—हमारे देश के नेता डा० तेज बहादुर सप्रू को पहले से इस बात की जानकारी थी कि भविष्य में हिन्दुस्तान के नागरिकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में अधिक भाग लेना होगा। इसी कारण उन्होंने Council of World Affair का स्थापना की थी जिसका कि दफ्तर अब देहली में है और इसकी शाखायें करीब करीब सब शहरों में हैं। अजमेर में भी महीने में एक बार इसकी बैठक गवर्नमेन्टकॉलेज में होती है और श्रीमान् जान साहब इसके सेक्रेटरी हैं।

सारांश:—(१) धार्मिक दृष्टिकोण समाज के हित में नहीं है। (२) परस्पर के सहयोग से समाज की उन्नति होती है (३) नागरिक शास्त्र में अधिकार तथा कर्तव्य और संस्थाएँ जिनके द्वारा ये सुरक्षित रहते हैं उनका अध्ययन होता है (४) व्हाइट साहब के कथन के अनुसार नागरिक शास्त्र हमको यह ज्ञान देता है कि किस प्रकार का जीवन व्यतीत किया जाय जिससे संसार में सुख और शान्ति स्थापित हो और उन्नति का सिलसिला जारी रहे (५) गिडी साहब के कथन के अनुसार नागरिक शास्त्र ने सामाजिक ज्ञान को सामाजिक सेवा में परिवर्तित कर दिया है।

Questions.

1. What do you mean by Civics? Explain fully its meanings.

2. Civics in the application of social survey to Social service (Gedde) Explain and discuss the meaning of Civics.

3 Civics is the right ordering of loyalties to family, society country and the world at large (Dr. Beni Prasad) Explain and discuss.

Work hard, spend less and invest your savings in any one of the followings

12–Year National Saving Certificate

4·16% per annum interest at maturity

10–Year Treasury Savings Deposits

3·5% interest paid annually

Post office Saving Bank Deposits

2% per annum interest on deposits upto Rs. 10,000 (upto Rs. 20,000 in case of joint accounts.)

10–Year National Plan Certificate

4·5% per annuam interest at maturity

Interest in all cases is free of Indian Income tax. Mere book knowledge and cramming for passing examinations is not education. If education is to serve any purpose, it should be correlated with national life and coordinated with main activities of a welfare state. Here is an opportunity for constructive work. Carry the message in every house and hamlet in every city and village of this vast subcontinent and urge the people to subscribe generousy to the National Loan. This will profit those who invest money and prosperity to the Nation.

Civics consists of the development in the public mind of the will for constructive, intelligent and helpful participation in the work which governments are empowered by the people to perform.

अध्याय द्वितीय

नागरिक शास्त्र, विज्ञान तथा कला, इसका विस्तार, अन्य विषयों से सम्बन्ध

नागरिक शास्त्र विज्ञान और कला दोनों है

विज्ञान किसे कहते हैं:—विज्ञान उस ज्ञान की शिक्षा को कहते है जिसमें नियम अनुसार ज्ञान प्राप्त किया जाता है। और उसमें प्रयोग और निरिक्षण के द्वारा परिणाम निकाला जाता है। जिनकी कि सच्चाई हमेशा और हर जगह रहती है।

विज्ञान की शाखाएं:—विज्ञान दो प्रकार के होते है एक तो Physical Science भौतिक ज्ञान जैसे भौतिक शास्त्र और रसायन शास्त्र जिनका कि वस्तुओं से सम्बन्ध रहता है जो कि बेजान होती है अर इस कारण उसमें हम भिन्न २ प्रकार का अनुभव अपने विज्ञान शाला में कर सकते है और फिर जिस परिणाम पर हम पहुँचते हैं वो वर्तमान और भविष्य तथा संसार के हर कोने के लिये सिद्ध होता है।

दूसरा समाजिक विज्ञान होता है जिसका कि सम्बन्ध मनुष्य से है जो कि एक जीवित वस्तु है और भिन्न बातों से वह प्रभावित होता है। नागरिक शास्त्र सामाजिक विज्ञान है और इस कारण यह भौतिक विज्ञान से कुछ भिन्न है। भौतिक विज्ञान के लिये विज्ञान शाला होती है जिसमें कि भिन्न भिन्न प्रकार के प्रयोग (Experiments) होते हैं। इस प्रकार की विज्ञान शाला नागरिक शास्त्र और दूसरे सामाजिक विज्ञानों के लिये नहीं हैं। इसीलिये यह कहा जाता है कि यह नागरिक शास्त्र प्रयोग किया हुआ ज्ञान (Experimental Science) नहीं है परन्तु यह निरिक्षण पद्धति पर निर्भर है और इस कारण विज्ञान आवश्यक है।

नागरिक शास्त्र के अध्ययन करने का तरीका:—नागरिक

शास्त्र (observational study) पर निर्भर है। तामम संसार इसकी विज्ञान शाला है। संसार में भिन्न २ राज्यों में भिन्न २ समय पर भिन्न २ प्रकार के कानून बनें। भिन्न २ प्रकार की संस्थाएं स्थापित हुईं। कई प्रकार के सुधार हुए। कई बार क्रान्तियाँ आईं और भिन्न २ प्रकार से समाज को सुधारने का प्रयत्न किया। इनका महत्व, प्रयोग (experiments) के समान ही होता है। इनकी हम आपस में तुलना करते हैं और फिर देख भाल, सोच विचार के बाद हम एक नतीजे पर पहुँचते कि किस प्रकार का कार्य करने से किस प्रकार का परिणाम होगा। इस प्रकार के अध्ययन के लिये निम्नलिखित तीन बातों की आवश्यकता है।

(१) स्वतन्त्र सोच विचार:—सही नतीजे पर पहुँचने के लिये पहली आवश्यक बात तो यह है कि हम दूसरों की बातों को स्वीकार न कर लें बल्कि हर एक स्थिति के ठीक नतीजे पर आने के लिये स्वयं स्वतन्त्र सोच विचार करें। सोचते समय पक्षपात को अपने मस्तक से दूर करदें, और जाति, धर्म, रंग और वातावरण की दूसरी बातों से प्रभावित न हों।

(२) कल्पना:—दूसरी आवश्यक चीज कल्पना है। हमको दूसरों की स्थिति में अपने सही कल्पना द्वारा विचार करना चाहिये। और फिर जाँच पड़ताल और तुलना के बाद सही विचार पर आना चाहिये। इससे हमें दूर दृष्टि प्राप्त होती है। और फिर हम भविष्य में आने वाली बातों का अन्दाजा लगा सकते हैं।

(३) सहानुभूति:—(Sympathy) हर एक समाज के लिये और खास तौर से उस समाज के लिये जो कि रंग, नसल, धर्म और जाति के आधार पर भिन्न २ भागों में बंट गई है। उसकी स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने के लिये हमें सहानुभूति आवश्यक है जिसके द्वारा हम उनके

दुख दर्द और बुराइयाँ और उत्साह का ज्ञान प्राप्त कर सकें और फिर वैज्ञानिक तौर पर उनकी स्थिति का ज्ञान प्राप्त करके सुधार का रास्ता बतला सकें।

नागरिक शास्त्र और कला:—विज्ञान के द्वारा अध्ययन करने से हम कुछ नतीजों पर पहुँचते हैं और हमें यह ज्ञान प्राप्त होता है कि किस प्रकार से कार्य किया जाय जिससे कि समाज का उत्थान हो और इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो नागरिक शास्त्र कला भी है।

कला क्या है:—कला में हमको एक ध्येय प्राप्त करने का प्रयत्न करना होता है और उस ध्येय के प्राप्त करने के लिये कलाकार को नियमानुसार कार्य करना पड़ता है। अनुभव से जो बातें लाभ दायक सिद्ध हुई हैं उनको वह प्रयोग में लाता है और उन नियमों को वह छोड़ देता है जिससे कि उनको अपना ध्येय प्राप्त करने में नुकसान पहुँचे। इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो नागरिक शास्त्र भी कला है उदाहरण के तौर पर लीजिये कि हमारा ध्येय किसान की स्थिति सुधारना है विज्ञान के द्वारा हम इस नतीजे पर पहुँचते है कि किसान और सरकार के बीच में जो मध्य श्रेणी के लोग हैं जब तक उनका अन्त नहीं होगा किसान की स्थिति नहीं सुधर सकेगी। और इसलिये हम जमींदारी को उन्मूलन करने के लिये कानून बनाते है या (money lenders act) लेने देने के बारे में कानून बनाते हैं तो हम एक कलाकार का कार्य कर रहे हैं। एक कलाकार के सामने हमारा ध्येय किसान व साधारण मनुष्य की आर्थिक स्थिति सुधारना है और इस ध्येय को प्राप्त करने के लिये हम कुछ सिद्धान्त और नियम के अनुसार कार्य कर रहे हैं। अनुभव से यह सिद्ध हुआ है कि यदि किसान जमीन का मालिक होगा तो जमीन की पैदावार बढ़ाने में वह अधिक दिलचस्पी लेगा और फिर वह अपनी और राज्य की स्थिति सुधारने में सफल होगा इसलिये नागरिक शास्त्र की गिनती कला में भी है।

नागरिक शास्त्र का विस्तार

नगर राज्य के समय में नागरिक शास्त्र का सीमित विस्तार:—इस शास्त्र का ज्ञान आधुनिक आवश्यकताओं को हल करने के लिये है, परन्तु उसका नाम बहुत प्राचीन है। नागरिक शास्त्र अंग्रेजी शब्द सीविक्स का अर्थ है और लेटिन शब्द सीवस और सीवीटस से निकला है। सीवस का अर्थ नागरिक और सीवीटस का अर्थ नगर राज्य है। प्राचीन रोम और ग्रीस में हर एक नगर एक स्वतन्त्र राज्य था और आवागमन के साधन न होने के कारण आपस में एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं था। हर एक मनुष्य जो अपने नगर के सामाजिक जीवन में भाग लेता था उसको नागरिक कहा जाता था, और इस कारण नागरिक शास्त्र का विस्तार नगर तक सीमित था।

वर्तमान स्थिति:—वर्तमान काल में राष्ट्रीय राज्यों के प्रादुर्भाव ने नागरिक शास्त्र का विस्तार बहुत अधिक कर दिया है, आज कल एक राज्य कई भागों में विभाजित है। हर एक भाग में कई जिले होते हैं, हर एक जिले में कुछ नगर और अधिक संख्या में गाँव होते हैं। यातायात के साधन के कारण नगर और गाँव का भेदभाव जाता रहा। हर नर व नारी चाहे वो गाँव में रहता हो या नगर में उसको राज्य प्रबन्ध में भाग लेने का पूरा पूरा अधिकार है और यह सब नागरिक कहलाते हैं। विज्ञान की उन्नति के कारण एक राज्य का दूसरे राज्यों से भी सम्बन्ध स्थापित हो गया है और आपस में परस्पर का सहयोग है। तमाम संसार कुटुम्ब के समान होगया है। नागरिक शास्त्र का महत्व नगर की स्थाई संस्थाओं की देखभाल और सुधार पर ही सीमित नहीं है और न ही राज्य की उन्नति इसका ध्येय है, बल्कि इसका ध्येय अन्तर-राष्ट्रीय दृष्टिकोण और सम्पूर्ण मनुष्य जाति की उन्नति करना है। आचार्य पुताम्बेकर लिखते हैं कि नागरिक शास्त्र के क्षेत्र में मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन और उसके समस्त कार्य सम्मिलित हैं और इसके

साथ साथ भूतकाल के अनुभव और भविष्य के उद्देश्य के दृष्टिकोण से उन कार्यों का उचित मूल्यांकन और उचित निर्देशन भी नागरिक शास्त्र के क्षेत्र में सम्मिलित है।

मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन और उसके समस्त कार्यों का वर्णन

भूत काल, वर्त्तमान और भविष्य में आदर्श राज्य उत्पन्न करना, इन तीन दृष्टिकोण से राज्य का अध्ययनः—

१—नागरिक शास्त्र राज्य का अध्ययन तीन प्रकार से करता है, प्रथम ऐतिहासिक दृष्टिकोण से वह राज्य का उद्भव और विकास का अध्ययन करता है और देखता है कि भूतकाल में राज्य के अन्तर्गत नागरिकों के क्या क्या कर्तव्य और अधिकार थे। द्वितीय वह वर्तमान राज्य में राज्य का संगठन और शासन प्रणाली का अध्ययन करता है। वह यह मालूम करता है कि किस प्रकार की सरकार स्थापित है और वह सरकार व्यक्ति के विकास में क्या क्या सुविधायें दे रही है। तीसरे, राज्य के विगत और वर्तमान काल के अध्ययन और अनुभव के आधार पर वह यह बतलाने की कोशिश करता है कि भविष्य में किस प्रकार का राज्य हो और उसमें किस प्रकार की सरकार की नींव डाली जाय ताकि भविष्य में व्यक्ति का पूरा पूरा विकास हो सके और वह राज्य में रहते हुए भी पूरी तौर से स्वतन्त्र हो।

भूत, वर्त्तमान और भविष्य काल में आदर्श नागरिकता उत्पन्न करना, इन तीनों दृष्टिकोण से नागरिकता का अध्ययन

२—इसी प्रकार से नागरिक शास्त्र समाज और व्यक्ति का समाज से सम्बन्ध का उद्भाव और विकास का तीन प्रकार से अध्ययन करता है। पहले तो वह यह पता लगता है कि विगत में मनुष्य ने किस तरह समाज का निर्माण किया और उस समय व्यक्ति का समाज से क्या सम्बन्ध था, उसकी प्रारम्भिक आवश्यकतायें कैसी थी और उसमें व्यक्ति

का क्या स्थान था, दूसरे वह यह पता लगाता है कि वर्तमान समय में समाज का निर्माण किन तरीकों से हुआ है। इसमें व्यक्ति का क्या स्थान है। समाज में किस प्रकार की समुदाय और संस्थ ये हैं और व्यक्ति के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और अध्यात्मिक उन्नति में सहायक है या बाधा डालती है। तीसरे इन विगत और वर्तमान काल के अध्ययन के आधार पर वह भविष्य की आदर्श समाज का नकशा खींचने का प्रयत्न करता है। जिसमें नागरिक को अपने विकास के लिये पूरा पूरा अवसर मिले।

भूत काल का उद्देश्यः—विज्ञान की उन्नति ने तमाम संसार को एक कुटुम्ब का रुप दे दया है और इस कारण नागरिक शास्त्र, नागरिकों में अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। वह यह रास्ता बतलाता है कि यदि एक राज्य, दूसरे राज्यों के साथ मिलजुल कर परस्पर का सहयाग रखे तो आपस के भेद-भाव और गलत विचार दूर होंगे और समस्त मनुष्य जाति आपस में मिलकर भली-भाँति उन्नति कर पायेगी और इस प्रकार नागरिक शास्त्र को क्षेत्र में उचित मूल्यांकन और उचित निर्देशन भी सम्मिलित हैं।

नागरिकों के चरित्र सुधारने का प्रबन्धः—आदर्श राज्य और आदर्श समाज उत्पन्न करने के लिये नागरिक का उच्च कोटि का चरित्र होना आवश्यक है इस कारण से नागरिक शास्त्र चरित्र सुधारने का पाठ पढ़ाता है। इसमें कर्त्तव्य और अधिकारों का वर्णन होता है परन्तु वह नागरिक को कर्त्तव्य का पालन करने पर अधिक जोर देता है। क्योंकि इससे उत्तरदायित्व आता है। यह विद्या तथा कला के विषय में नागरिकों में रूचि उत्पन्न करता है। इसमें नैतिकता और आचारों की शुद्धता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। वह बन्धुता और शुद्ध भावना का प्रचार करता है और इस प्रकार नागरिकों का चरित्र सुधारने का प्रयत्न करता है जो कि नागरिक शास्त्र का मुख्य ध्येय है। चरित्र सुधरने पर ही आदर्श समाज और आदर्श राज्य की नींव डल सकती है।

इन सब बातों का मूल्यांकनः—इन ऊपर वर्णन की हुई बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि नागरिक शास्त्र के क्षेत्र में मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन और उसका समस्त कार्य समिलित है। वाईट साहब ने नागरिक शास्त्र का विस्तृत वर्णन करते हुए लिखा है कि यह वह शास्त्र है जो नागरिकता का व्यापक रूप से अध्ययन करता है। वह उसके भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों काल का अध्ययन करता है चाहे वह स्थानीय हो, राष्ट्रीय हो या अन्तर्राष्ट्रीय ही क्यों न हो। इन सब दृष्टिकोण से नागरिक शास्त्र में अध्ययन करता है।

नागरिक शास्त्र का दूसरे विषयों से सम्बन्धः—कारणः- नागरिक शास्त्र ने दूसरे शास्त्रों की तरह एक अलग स्वतन्त्र स्थान विद्या में ग्रहण कर लिया है। परन्तु विद्या इकाई है और अध्ययन की सहुलियत के लिये विभिन्न विषयों में बंट गई है। नागरिक शास्त्र व अन्य दूसरे शास्त्र अलग होते हुए भी दूसरे विषयों और शास्त्रों पर निर्भर हैं और उनका इन दूसरे शास्त्रों से गहरा सम्बन्ध है। नागरिक शास्त्र अनिवार्यतः सम्बन्ध बतलाने वाला विषय है। जैसा कि हम पहले बतला चुके हैं कि नागरिक शास्त्र एक विश्व व्यापक विषय है जो कि भूतकाल, वर्तमान काल और भविष्य काल में आदर्श राज्य उत्पन्न करना, और भविष्य में आदर्श नागरिक बनाने का प्रयत्न करना और अन्तर-राष्ट्रीय दृष्टिकोण उत्पन्न करना, इन सबका अध्ययन नागरिक शास्त्र में होता है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि नागरिक शास्त्र विभिन्न युगों में प्रचलित सभ्यता और उसकी सफलताओं को एक लम्बी जंज़ीर की कड़ियों की भाँति जोड़ता है। और इस कारण हर एक दूसरे सामाजिक विषय से इसका गहरा सम्बन्ध है।

नागरिक शास्त्र तथा राजनैतिक शास्त्र में सम्बन्ध

यूनान में पोलिस शब्द का प्रयोगः—करीब ढ़ाई वर्ष पहले यूनान उन्नति के मार्ग में अधिक बढ़ा चढ़ा था और रोम की तरह

यूनान में भी हर एक नगर एक स्वतन्त्र राज्य था, यूनान में नगर के लिये पोलिस (Polis) शब्द का प्रयोग था, और चूंकि हर एक नगर स्वतन्त्र होने के कारण राज्य भी था, इस कारण पोलिस का शब्द राज्य के लिये भी प्रयोग होता था। यूनान में नगर और राज्य एक ही थे और इन दोनों विचारों के प्रकट करने के लिये एक ही शब्द पोलस का प्रयोग किया जाता था। पोलिस से वर्तमान शब्द पोलीटिक्स निकला है। पौलिटिक्स (राजनैतिक-शास्त्र) विद्या के उस विषय को कहते हैं जिसमें कि नगर या राज्य के बारे में अध्ययन किया जाय। ईसा से चार शताब्दी पहले यूनान ने अपनी स्वतन्त्रता खोदी और उसका महत्व जाता रहा, परन्तु उसकी कला और साहित्य का प्रभाव कम या ज्यादा मात्रा में प्रचलित है और उनके शब्द पोलिटिक्स से राज्य के मामलों का अध्ययन करना है।

रोम में सीवस शब्द का प्रयोगः—करीब करीब उसी समय जब कि यूनान उन्नति पर था, इटली में रोमन लोग भी काफी उन्नति पर थे। इसी समय यूनान की तरह रोमन लोगों ने भी अपने यहाँ नगर राज्य की स्थापना की और नगर के लिये वो सीविटस का शब्द प्रयोग करते थे। जिससे वर्तमान अंग्रेजी शब्द सीविक्स निकला है और लेटिन शब्द सिवस निकला है जिसका कि अर्थ नागरिक है। जिस प्रकार से पौलिटिक्स से प्राचीन यूनान के नगर के प्रबन्ध से सम्बन्ध था, इसी प्रकार सिविक्स से प्राचीन इटली के नगर राज्य से सम्बन्ध था इस प्रकार सीविक्स और पौलिटिक्स दोनों शब्दों के एक ही मानते थे, अब कुछ अन्तर हो गया है।

विषय प्रवेश का करीब-करीब एक होनाः—इन दोनों के विषय प्रवेश करीब २ एक हैं। दोनों का सम्बन्ध संघस्थ राजनितिक समाज से है। दोनों में राज्य और उसमें भिन्न २ समुदायों का अध्ययन होता है। दोनों में भूतकाल, वर्तमान काल और भविष्य काल में आदर्श राज्य और आदर्श समाज और आदर्श नागरिक के बारे में अध्ययन

होता है। दोनों में नागरिक और भिन्न २ समुदायों में परस्पर का सहयोग स्थापित करने पर जोर दिया जाता है और आपस में भेद-भाव और गलत विचार दूर करने का प्रयत्न किया जाता है। दोनों में यह मालूम करने की कोशिश की जाती है कि किस प्रकार का वातावरण स्थापित किया जाय ताकि व्यक्ति सुख, शान्ति, तथा स्वतन्त्रता के साथ जीवन व्यतीत कर सके। दोनों में इस बात का अध्ययन होता है कि किस प्रकार की संस्थाएँ स्थापित की जायें ताकि परस्पर का सहयोग जारी रहे और समाज उन्नति करता रहे।

इन दोनों में भेद भावः—इन दोनों का विषय प्रवेश एक ही है, परन्तु इनमें मात्रा का भेद भाव है। पहला पोलिटिक्स या राजनैतिक शास्त्र का नगर से कोई सम्बन्ध नहीं। नागरिक शास्त्र या Civics ने अपना पुराना सम्बन्ध अभी तक जारी रखा है और सीविक्स में नगर पर अधिक जोर है।

२. राजनैतिक शास्त्र का सम्बन्ध राष्ट्र और अन्तर राष्ट्रीय मामलात से है। नागरिक शास्त्र का सम्बन्ध नगर और आस पड़ोस की संस्थाओं से है और वो भाई चारा तथा परस्पर का सहयोग पर जोर देता है।

३. राजनैतिक शास्त्र में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि राजनैतिक संस्थाओं का किस प्रकार विकास हुआ और उन्होंने वर्तमान शक्ल किन किन कारणों से ग्रहण की। नागरिक शास्त्र इन बातों पर अधिक जोर नहीं देता है।

४. राजनैतिक शास्त्र का जोर अधिकारों पर है वो यह बतलाता है कि व्यक्ति के विकास के लिये कौन कौन से अधिकार आवश्यक हैं। और किस प्रकार उन अधिकारों को ग्रहण करना चाहिये राजनैतिक शास्त्र का जोर नागरिकों के कर्तव्य उनकी शिक्षा और उनके चरित्र सुधारने पर है ताकि वो अच्छे नागरिक बनकर राज्य का प्रबन्ध भलि भाँति कर सकें इस प्रकार दोनों शास्त्रों का एक दूसरे से गहरा सम्बन्ध है।

नागरिक शास्त्र का अर्थ शास्त्र से सम्बन्धः—अर्थ शास्त्र में उन कार्यों और उन संस्थाओं का वर्णन होता है जिनके द्वारा मनुष्य अपनी आवश्यकतायें पूरी करता है इसका अध्ययन क्षेत्र उत्पादन वितरण, विनियम और उपभोग। यह शास्त्र मनुष्य की भौतिक आवश्यकतों की पूर्ति के साधनों की खोज द्वारा मानव जीवन को सुखी बनाने का प्रयत्न करता है। नागरिक शास्त्र का ध्येय नागरिक जीवन को सुखी बनाना है। यदि समाज में सम्पत्ति का बटवारा उचित नहीं है और यदि धन कुछ व्यक्तियों के हाथ में एकत्रित हो गया है और अधिक संख्या में व्यक्ति निर्धन है तो ऐसे समाज में लोगों में अशान्ति होगी और ऐसी स्थिति में राजनैतिक और आर्थिक संस्थाओं में परिवर्तन लाना आवश्यक हो जायेगा ताकि धन का उचित बटवारा हो और शान्ति फिर से स्थापित हों। एक अच्छे जीवन के लिये आर्थिक सहुलियतें होना आवश्यक है। इसी कारण वर्तमान राज्य में हर समय आर्थिक समस्याओं का हल करने का प्रयत्न करना पड़ता है। धन का उत्पादन और वितरण, उचित प्रकार का कर लगाना, मजदूर और पूंजीपति के भेद भाव दूर करना इन सब आर्थिक बातों का नागरिक शास्त्र में अधिक महत्व है। इन सब बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि नागरिक शास्त्र का क्षेत्रफल अर्थ शास्त्र की अपेक्षा अधिक विस्तृत है। अर्थ शास्त्र सिर्फ आर्थिक समस्याओं का ही अध्ययन करता है और भौतिक आवश्यकताओं पर ही सीमित है परन्तु नागरिक शास्त्र मनुष्य का हर दृष्टिकोण से अध्ययन करता है। इसमें आर्थिक, राजनैतिक, नैतिक और अन्य प्रकार के दूसरे दृष्टिकोण भी सम्मिलत हैं नागरिक शास्त्र का ध्येय भविष्य में एक ऐसे समाज और राज्य उत्पन्न करना है जिसमें सब मनुष्य पूरी स्वतन्त्रता के साथ जीवन व्यतीत कर सकें।

नागरिक शास्त्र तथा इतिहासः—हम पहले बतला चुके हैं कि नागरिक शास्त्र विज्ञान है और हर विज्ञान में परिणामों को

निकालने के लिये विज्ञान शाला की आवश्यकता होती है। नागरिक शास्त्र की विज्ञान शाला सम्पूर्ण संसार है और इतिहास के अनुभवों का खजाना है। भिन्न भिन्न समय में भिन्न भिन्न देशों में मनुष्य जाति की उन्नति के लिये जो उपाय किये हैं उन सबका उसमें वर्णन होता है, इन अनुभवों की तुलना ही से नागरिक शास्त्र जातियों को उन्नति का मार्ग बतलाता है। इसलिए नागरिक शास्त्र और इतिहास का गहरा सम्बन्ध है।

नागरिक शास्त्र तथा नैतिक शास्त्रः—नैतिक शास्त्र में मनुष्य के विचारों में पवित्रता लाने के लिये जोर दिया जाता है किन्तु नागरिक शास्त्र का सम्बन्ध विचारों से नहीं है, वह कार्य से सम्बन्ध रखता है। यदि कोई मनुष्य नियम के विरुद्ध कार्य करेगा तो कानून के द्वारा उसको रोका जाता है परन्तु मनुष्य नियमों के विरुद्ध कार्य तब ही करता है जब कि उसके विचारों में अशुद्धता आ जाती है। मनुष्य में पहले विचार उत्पन्न होते हैं तत्पश्चात् वह कार्य करता है। इसलिये इन दोनों विषयों में अधिक सम्बन्ध है। क्योंकि विचारों का शुद्ध होना सद्कार्यों के लिये परमावश्यक है।

सारांशः—नागरिक शास्त्र में विज्ञान और कला दोनों ही हैं। विज्ञान इस दृष्टिकोण से है कि भूतकाल में भिन्न भिन्न स्थानों पर जो सुधार के प्रयन्न हुए है उनकी एक दूसरे से तुलना करके हम एक जो कि भविष्य के लिए उन्नति का मार्ग बतलाता है। कला इस दृष्टिकोण से है जो नतीजे पर आते हैं जो नतीजा कि हम विज्ञान द्वारा प्राप्त करते हैं उसको हम समाज सुधार के लिये कार्य रूप में लाते और इस प्रकार समाज का सुधार करते हैं जब कि हम कलाकार का कार्य कर रहे हैं।

२. नागरिक शास्त्र का अध्ययन करने का तरीका निरीक्षण पद्धति पर निर्भर है और इस तरीके में सफलता के लिये इसमें स्वतन्त्र सोच

विचार करना, सहानुभूति का होना आवश्यक है (३) नागरिक शास्त्र का विस्तार अधिक व्यापक है इसमें मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन और उसके समस्त कार्यों का अध्ययन चार दृष्टिकोण से होता है (i) भूत-वर्तमान और भविष्यकाल, में आदर्श राज्य उत्पन्न करना, इन तीनों दृष्टिकोण से राज्य का अध्ययन होता है (ii) भूत, वर्तमान और भविष्यकाल में आदर्श नागरिकता उत्पन्न करना, इन तीन दृष्टिकोण से नागरिकता का अध्ययन होता है (iii) भूतकाल के आदर्श का भी अध्ययन होता है (iii) चौथे नागरिकों के चरित्र सुधारने का भी प्रयत्न होता है।

(४) नागरिक शास्त्र और दूसरे शस्त्रों से सम्बन्ध हमने संक्षेप में पूरी तौर से किया है। विद्यार्थियों को चाहिये कि उसको समझ कर याद करने का प्रयत्न करें।

Questions.

1. Describe the method of study of civics and discuss the scope of civics ?

2. Discuss civics is an art or a science.

3. Describe the relation of civics with History, Politics, Economics and Ethics.

4. Account for the growing importance of the study of civics in schools and colleges.

5. The province of civics is the whole life or activities of man into which he enters and the proper valuation and direction of those activities in the light of past experience and future ideals (Putambekar) Explain the scope of Civics.

6. Civics in the study of citizenship, past present and future; local, national and international (White) Explain and discuss the scope of civics

Encourage Khaddi for rough use both in public and private purposes and be a law abiding citizen and a partner in the progress of the nation.

अध्याय तीसरा

समाज, समुदाय, सामप्रदाय, संस्था
(Society, Associations, Community and Institutions)

समाज किसे कहते हैं:—समाज के दो अर्थ हैं, एक तो विश्व व्यापक समाज और दूसरा मनुष्यों का एक समूह।

१. विश्व व्यापक समाज:—वास्तव में समस्त मनुष्य जाति एक विश्व व्यापक समाज है जिसका सदस्य प्रत्येक मनुष्य है। जो समस्त विश्व में बिखरा हुआ है इस प्रकार के समाज अभी तक उत्पन्न नहीं हुई, परन्तु यह लोगों के मस्तक में अवश्य है। नागरिक शास्त्र में यह अध्ययन होता है कि किस प्रकार से आपस के भेद भाव असमानता और गलत विचार दूर करके इस समाज की नींव डाली जाय।

२. मनुष्यों के भिन्न २ समूह:—भूगोल, धर्म नसल और विचार धाराओं के कारण समस्त मनुष्य जाति भिन्न भिन्न मनुष्यों के समूहों में बंट गई है जो कि समाज कहलाती है और अपने राज्य के नाम से पुकारी जाती है, जैसे हिन्दुस्तान का समाज, चीन का समाज इत्यादि। ये लोग अपने ध्येय की प्राप्ति के लिये और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मिलजुल कर सहयोग के साथ कार्य करते हैं। अपनी आवश्यकतायों की पूर्ती के लिये भिन्न भिन्न समुदाय, सामप्रदायें और संस्थाऐं स्थापित होती है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि समुदाओं, सामप्रदायों और संस्थाओं का सम्मिलित नाम समाज है।

३. मनुष्य की आवश्यकताएें:—मनुष्य की दो प्रकाश की आवश्यकतायें है एक तो शरीर से सम्बन्ध रखने वाली आवश्यकतायें, जैसे रहने को मकान पहनने को कपड़े, खाने को वस्तु और हवा पानी और रोशनी का प्रबन्ध ये सब चीजें उसको जीवित रखने के लिये

आवश्यक है। दूसरे आत्मिक उन्नति के लिये आवश्यकतायें जैसे स्वत-
तन्त्रता का वातावरण, शिक्षा, ज्ञान, बराबर के अवसर प्राप्त होना
सेवा की भावना, प्रेम और परस्पर सहयोग से रहना इत्यादि।

४. समाज का ध्येयः—समाज का ध्येय उपरोक्त लिखी हुई
दोनों चीजों की प्राप्ति के लिये प्रबन्ध करना है। अच्छा समाज वही
समाज है जो दोनों चीजों की प्राप्ति के लिये बराबर का महत्व देता
है। मनुष्य के लिए शारीरिक, और दुनिया की चीजें आवश्यक हैं
ताकि वे सुख और शान्ति से अपना जीवन व्यतीत कर सकें। परन्तु
इस ध्येय को अधिक मात्रा में ले जाना और अपने सुख के लिये
दूसरों को निर्धन बना कर खुद अपना रहन सहन सुधारना गलत
नीति है। अच्छे समाज को ऐसा कार्य कभी नहीं करना चाहिये,
उसका ध्येय जीओ और जीने दो। दूसरे ध्येय की प्राप्ति के लिये
समाज का यह भी कर्तव्य है कि मनुष्य की आत्मिक उन्नति और
खूबियों के विकास के लिए पूरा पूरा प्रबन्ध करे। हरएक व्यक्ति को
पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए। शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध होना
चाहिये और हर एक व्यक्ति के खूबियों के विकास के लिए पूरे पूरे
अवसर होने चाहिऐ तभी मनुष्य की पूरी उन्नति होगी। कुछ समाज
ऐसी भी है जो कि स्वतन्त्रता को कुचल कर लोगों का आर्थिक
सुधार करने का प्रयत्न करती है। परन्तु यह गलत नीति है। मनुष्य
के खूबियों के विकास के लिये इतनी ही आवश्यक चीज़ है जितनी
कि हवा और खाने पीने की चीजें। भारत समाज ने प्राचीन काल
में आत्मिक उन्नति पर अधिक जोर दिया और युरोपीयन समाज का
दुनिया की उन्नति और रहन सहन सुधारने पर अधिक जोर रहा
है। नागरिक शास्त्र हमको मध्य श्रेणी की नीति ग्रहण करने को जोर
देता है। अब हमारी नीति यह है कि समाज का आर्थिक सुधार करके
लोगों का रहन सहन सुधारा जाय और साथ साथ व्यक्तियों के खूबियों
के विकास कभी प्रबन्ध किया जाय। भिन्न २ प्रकार की समुदाय

उत्पन्न हुई जो कि व्यक्ति के विकास में सहायता देती है और इस प्रकार हम तमाम प्रकार के सुधार का प्रयत्न करते हैं।

वर्तमान समाज की बुराईयां:—आज भारत के समाज में अनेक बुराइयाँ है जैसे परस्पर अमीर, गरीब का भेद, ऊँच, नीच, छोटे बड़े का भेद, छूत अछूत की भावना, अशिक्षा, बालविवाह, एक स्त्री होते हुए मर्द को दूसरा विवाह करने का अधिकार। शादी होने के पश्चात सुखी जीवन व्यतीत न होने पर भी पुरुष स्त्री का सम्बन्ध अन्त करने पर रूकावटें, स्त्री को जायदाद में मिलकीयत का अधिकार न होना इत्यादि इत्यादि | हमारे नागरिक जब तक अदर्श नागरिक बनकर इन बुराईयों को दूर न करेंगे तब तक समाज की उन्नति रुकी रहेगी, इस प्रकार हमारी समाज की उन्नति नागरिक शास्त्र के ज्ञान पर भी कुछ अंश तक निर्भर है।

समुदाय की परिभाषा:—हम पहले बतला चुके हैं कि समाज एक व्यापक संगठन है और उसके अन्दर रहने वाले मनुष्य अपने विशेष उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अपने आपको छोटे २ समूहों में बांट लेते हैं। ये समूह देश, काल, और आवश्यकता के अनुसार घटते बढ़ते रहते हैं। इन छोटे समूहों को जो विशेष उद्देश्यों और आवश्यकताओं को सामने रख कर बनाये जाते हैं। इन्हें संघ या समुदाय कहते हैं।

समुदाय का विस्तार:—संघ एक दूसरे क्षेत्रफल के लिहाज से भिन्न २ होती है। कुछ संघ तो अपने गांव या शहर की सीमा तक ही सिमित रहती है। कुछ तमाम जिला या प्रांत में फैली रहती है। और कुछ तमाम राज्य तक में उनका विस्तार होता है। कुछ ऐसी भी संघ हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय होती हैं। और एक मनुष्य कई संघों का सदस्य हो सकता है कुछ संघ आपस में एक दूसरे से संबन्ध रखती है।

समुदाय का भिन्न २ प्रकार का संघठन:—संघठन के लिहाज

से भी संघों में आपस में एक दूसरे से बहुत भेद भाव हैं। कुछ तो ऐसी संघ हैं जिनका कि संघठन नाममात्र को है। और उनका स्थापित रहना भरोसे और रीति रिवाज पर निर्भर है। इनमें असंघठन समूह में कोई खास भेदभाव नहीं है। कुछ और संघ भी हैं जिनका कि संघठन इतना ही मजबूत है जितना कि सरकार का राज्य में होता है। इन दो प्रकार के संघों के अतिरिक्त बीच के दर्जे के संघ भी हैं। जिनका संघठन इतना कठोर नहीं है और न नाममात्र को ही। राज्य में संघों का एक प्रकार का जाल सा बिछा रहता है। और मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार इन संघों में भाग लेते हैं। अक्सर पुराने सदस्य अलग हो जाते हैं, और नये सदस्य सम्मिलित हो कर भाग लेने लगते हैं।

संघों के निर्माण से जनता को निम्न लिखित लाभ हैं।

१. शक्ति उत्पन्न होना:—एकत्रित होकर हम में शक्ति पैदा हो जाती हैं। और अलग अलग कार्य करने से हम में कमजोरी आ जाती है। संगठन के कारण संघ जो अपने सदस्यों के लिए कार्य करा सकता है वह अकेला दुकेला मनुष्य सरलता के साथ नहीं कर सकता है। एक साधारण मजदूर कारखाने वाले से इतना वेतन नहीं ले सकता है जितना कि मजदूर सभा उसको अपने संघ के संघठन द्वारा दिलवा सकती है और इस प्रकार संघ के द्वारा व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा होती है।

२. परस्पर का सहयोग:—संघ में संघठन होता है और प्रत्येक सदस्य सहयोग से काम लेता है। और इस प्रकार काम करने की शक्ति उत्पन्न होती है और समय में काफी बचत हो जाती है।

३. अच्छे गुणों का विकास:—संघ में काम लोगों को योग्यता और शक्ति के अनुसार बांटा जाता है। इस प्रकार केवल काम ही अच्छे ढंग से नहीं होता है बल्कि सदस्यों में प्रेम और व्यवहार भी

बढ़ता जाता है। इसके अन्दर अच्छे २ गुणों का विकास होता है। और समाज की दशा सुधारी जाती है।

४. सेवा भाव का प्रवेशः—किसी विशेष संघ के सदस्य एक दूसरे की सहायता भी करते हैं। जब किसी सदस्य पर कोई आपत्ति आजाय तो दूसरे सदस्य उसे सहायता देते हैं। इस प्रकार से सेवा भाव समाज के अन्दर प्रवेश करता है।

संघों के प्रकार

उद्देश्य के अनुसार संघ ७ प्रकार के होते हैं

१. रक्त और वंश सम्बन्धी संघः—इस संघ में कुटुम्ब सबसे ज्यादा प्रसिद्ध है। प्राचीन जातियों में और वर्तमान सभ्य जातियों में रक्त और वंश सम्बन्धी संघ का महत्व यह है कि इनमें आपस में विवाह नहीं हो सकते। हिन्दुओं में गोत्र में शादी नहीं हो सकती। एक जात में कई गोत्र होते हैं और एक गोत्र में दूसरे गोत्रों के लोगों से शादी हो सकती है। जाति से कई प्रकार के लाभ व हानि हैं।

२. धार्मिक संघः—धार्मिक संघ का संघठन नाम मात्र को होता है और इसका जीवन भरोसों और रीति रिवाज पर निर्भर है। इसका क्षेत्रफल एक ही राज्य में सीमित नहीं है बल्कि यह एक अन्तर्राष्ट्रीय संघ होता है। कई दफे एक धर्म के पालन करने वाले विचारों, तथा विश्वास के लिहाज से अलग २ भागों में बंटे हुए होते हैं और इस कारण धार्मिक संघ के अन्दर कई और छोटे २ संघ होते हैं। साधारण नियम यह है कि हर एक मनुष्य को अपने धार्मिक भरोसे के अनुसार प्रार्थना और पूजा करने की पूरी२ स्वतन्त्रता है। और यही सिद्धान्त धार्मिक संघ में भी लागू किया जाता है। परन्तु समाज में जो त्रुटियां हैं और उनको जब मिटाने का प्रयत्न किया जाता है तो इस रीति रिवाज को धर्म बतला के विरोध करने का अधिकार उनको नहीं है। दूसरे वे अपने विचारों का प्रचार

स्कूल और पाठशालाओं में जबरन तौर पर नहीं कर सकते। तीसरा यह है कि हर एक धार्मिक संघ को दूसरे धार्मिक संघों के साथ प्रेम का बर्ताव करना चाहिये। न तो उसको राज्य से कोई खास अधिकार मांगने चाहिये, न दूसरों पर कोई रुकावट डालने की कोशिश करनी चाहिये।

धार्मिक संघ का क्षेत्रफल इतना फैला हुआ नहीं है जितना कि हम लोग अपने अज्ञान के कारण समझते हैं। हमारे देश में जब कभी किसी प्रकार के सुधार का प्रयत्न किया जाता है तो धार्मिक संघ उसका विरोध करते हैं। स्त्रियों को जायदाद में हिस्सा देने के लिये कोई प्रस्ताव रखा जाय। एक स्त्री के जीवित होते हुये मनुष्य को दूसरा विवाह करने पर रुकावट लगाने का प्रयत्न किया जाय। बाल विवाह को रोकने के लिये कानून बनाया जाय। विधवा को दूसरा विवाह करने पर जोर दिया जाय। एक जाति का दूसरी जाति में विवाह करने पर उपाय सोचा जाय। छूआछूत को दूर करने का प्रयत्न किया जाय। तो इस प्रकार के अवसरों पर धार्मिक संघ इन सुधारों का विरोध करते हैं क्योंकि उनका कहना है कि इन सुधारों से धर्म खतरे में हो जाता है। परन्तु यह गलत नीति है। ये सब रीति रिवाज हैं इनका धर्म से से कोई सम्बन्ध नहीं। समय के अनुसार इनमें परिवर्तन आवश्यक है। वरना संसार में उन्नति होगी और हम उन्नति के मार्ग में पीछे रह जावेंगे। धार्मिक संघ का ध्येय लोगों के चरित्र को सुधारना है और मनुष्य में प्रेम और सेवा का भाव उत्पन्न कराना है। सच्चाई, नम्रता, पुरुषार्थ, लोक सेवा, सहानुभूति और संयोग प्रत्येक मनुष्य में ये गुण होते हैं। परन्तु किसी में कम होते हैं और किसी में ज्यादा। धार्मिक संघ का ध्येय यह होना चाहिये कि लोगों में इन गुणों का विकास कराएं, ताकि समाज की उन्नति हो। कीर्तन और सतसंग का ध्येय यही है कि अच्छी कथाओं और ज्ञान की बातों को लगातार रोज दोहराया जाय तो खराब से खराब मनुष्य में भी कुछ परिवर्तन अवश्य आवेगा। और वह भी अपना जीवन सुधारने का प्रयत्न करेगा।

हमको अपने धार्मिक संघ का महत्व इतना ही रखना चाहिये तभी हम इनके द्वारा समाज की उन्नति कर पायेंगे ।

३. सांस्कृतिक संघः—सांस्कृतिक संघों में स्कूल, पाठशालाएं विश्वविद्यालयें शामिल हैं । इसमें ऐसी भी सभाएं सम्मिलित हैं जिनका कि उद्देश्य साहित्य और विज्ञान का प्रचार है । कुछ तो ऐसे संघ है जिसमें गिनती के सदस्य हैं और जिसका कि क्षेत्रफल एक छोटे से इलाके में सीमित है । और कुछ इतने बड़े हैं कि उनमें हजारों की तादाद में सदस्य हैं जो कि तमाम प्रान्त और राज्य में फैले हुए हैं । कुछ इसमें अन्तराष्ट्रीय सभाएं भी हैं । जिनकी कि शाखाएं भिन्न देशों में है । इस प्रकार के संघों का आदर्श यही है कि विद्या का प्रचार करना, सत्य के द्वारा लोगों का चरित्र सुधारना और समाज की उन्नति करना ।

४. आर्थिक संघः—अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिये लोग भिन्न प्रकार के संघ बनाते हैं । जिनका कि ध्येय अपने सदस्यों की आर्थिक स्थिति सुधारना होता है । इस प्रकार के संघ भी सांस्कृतिक संघों के समान या तो एक छोटे से इलाके में सीमित होते हैं, या उनका विस्तार सारे देश में होता है । और कुछ अन्तर्राष्ट्रीय भी होते हैं । इनमें कुछ के संगठन बहुत कमजोर होते हैं परन्तु कुछ ऐसे संघ भी हैं जिनका कि संगठन काफी मजबूत होता है । और सदस्यों को उनके नियम पालन करने होते हैं । वर्तमान स्थिति में आर्थिक संघ का बहुत महत्त्व है । और इनका प्रभाव सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्र पर भी पड़ता है । दूसरी प्रकार के संघों से भी आर्थिक संघ की काफी मुठभेड़ रहती है । खास तौर पर मजदूर और पूंजीपति संघ में बहुत भेद भाव हैं । आर्थिक संघ में सिर्फ एक बात खास महत्त्व की है कि इनका ध्येय सिर्फ यही नहीं है कि अपने सदस्यों का आर्थिक सुधार का उपाय करना, परन्तु एक ऐसा उच्चकोटि का आदर्श रखने का ध्येय होना चाहिये जिससे कि तमाम समाज की उन्नति हो । यदि इस आदर्श

से आर्थिक संघ संगठित किया जाय तो देश को उन्नति के मैदान में आगे ले जाने में बहुत सहायता कर सकता है। परन्तु जब कि उसका ध्येय अपने सदस्यों की आर्थिक उन्नति सुधारने में सीमित हो जाता है और वह समाज के दूसरे संघ की स्थिति का ख्याल नहीं रखता तो फिर समाज में अशान्ति हो जाती है। और इससे किसी को लाभ नहीं होता।

५. मनोरंजनात्मक संघः— मनुष्य कुछ समय तक लगातार काम करने के पश्चात थक जाता है फिर उसकी थकावट दूर करने और उसके दिमाग में ताजगी लाने के लिये खेल, संगीत आदि की चीजें बहुत आवश्यक हैं। मनोरंजनात्मक संघ का यही ध्येय होता है। और इसीलिये भिन्न २ प्रकार के क्लब और सोसायटी तैयार की जाती हैं।

६. लोक सेवा सम्बन्धी संघः—लोक सेवा सम्बन्धी संघ का आदर्श यह है कि लोगों को आर्थिक सहायता देकर उनको गिरी हुई स्थिति से ऊंचा उठायें और आपत्ति और कठिनाई के समय उनकी सहायता करें। यों तो हर एक व्यक्ति कुछ न कुछ दान पुण्य देकर समाज की सेवा करता ही है परन्तु लोक सेवा सम्बन्धी संघ के द्वारा सहायता देने से वैज्ञानिक तौर पर ठोस सुधार करने का अवसर मिलता है। व्यक्तिगत दान का प्रभाव खराब होता है। क्योंकि अन्धाधुन्ध दान देने से मनुष्य आलसी बन जाता है परन्तु यदि हम ऐसे आश्रम स्थापित करें जहां पर कि बेरोज़गार आदमी को उसकी योग्यता के अनुसार काम करना भी सिखलाया जाय और साथ २ उसको आर्थिक सहायता भी दी जाय। इससे एक पंथ दो काज होते हैं। एक तो उसको अपने पैरों पर खड़ा होकर समाज की सेवा करने का अवसर मिलता और दूसरे समाज में बेरोजगारी कम होती है। इसी प्रकार से हमको चाहिये कि औषधालय स्थापित करने के साथ साथ सफाई, अच्छा रहन सहन और स्वास्थ के नियमों का पालन करने पर जोर दें। ताकि लोग कम बीमार हों। लोक सेवा सम्बन्धी संघ का ध्येय होना चाहिये

कि उन बुनियादी बातों की जांच करने की कोशिश करे कि जिनके कारण समाज की स्थिति गिरी हुई है। और फिर उन कमियों को पूरा करने की कोशिश करे और इस प्रकार समाज में ठोस और स्थिर सुधार की नींव डाले।

दान और समाज सेवा में अन्तरः—हम अभी तक दान और समाज सेवा का अन्तर पूरी तौर से समझ नहीं पाये। हम इस प्रकार का दान करते हैं जिससे कि समाज ऊंचा उठने के बजाय नीचे गिरता हो और समाज में अधिक बेकारी होती है। यह पुण्य नहीं पाप है और किसी प्रकार से भी समाज सेवा नहीं कही जा सकती। लोक सेवा सम्बन्धी संघ का यही ध्येय होना चाहिये कि वह समाज की कुरीतियों का कारण मालूम करने का प्रयत्न करें। और जब उनके कारण मालूम हो जायें तो उन कारणों को दूर करने का प्रयत्न करे तभी समाज में ठोस उन्नति की नींव डल सकती है। हमारे यहां अधिकतर लोगों ने भीख मांग कर अपना पेट भरना एक पेशा बना रखा है। हम लोग इनको दान देकर आलसी बनाते हैं। इन लोगों की समाज की संख्या में गिनती अवश्य है परन्तु वे समाज की किसी प्रकार से सेवा नहीं कर रहे हैं। हमको चाहिये कि लोक सेवा संघ के द्वारा अनाथ आश्रम खुलवायें, जहां पर इनके खाने पीने का भी प्रबन्ध हो और साथ २ इनको कुछ काम भी सिखलाया जाय ताकि इनमें अपने पांवों पर खड़े होने की शक्ति उत्पन्न हो। यदि हम इस प्रकार का प्रबन्ध करें तो यह अवश्य समाज सेवा है। हमको अनाथ आश्रम, अपाहिज घर, विधवा आश्रम और इस प्रकार की दूसरी संस्थाएं खोलनी चाहियें जिनसे कि समाज का उद्धार होवे। इंगलिस्तान और दूसरे विदेशी देशों में इस प्रकार की कई संस्थाएं खुली हुई हैं जिनका कि लोग प्रबन्ध करते हैं। जब कि ये संस्थाएं बहुत तरक्की कर जाती हैं तो ये संस्थाएं सरकार को सौंप दी जाती हैं। हमको हर एक सुधार के लिये सरकार पर निर्भर नहीं रहना चाहिये बल्कि हमको खुद इसका संगठन और प्रबन्ध करना चाहिये।

इसके लिये हमको अपने मस्तिष्क में परिवर्तन लाना आवश्यक है। यह तब ही मुमकिन हो कि हम व्यक्तिगत दान की प्रथा को छोड़ कर इस प्रकार के संघों के सदस्य बनें। उनको आर्थिक सहायता देवें और इनके प्रबन्ध को सुधारें।

७. राजनैतिक संघः—हमारा राज्य जिसमें कि हम रहते हैं वह भी एक प्रकार का समुदाय है जो कि राजनैतिक समुदाय या संघ कहलाता है। समाज में भिन्न २ प्रकार के समुदाय होते हैं जिनका कि हमने ऊपर वर्णन किया है। कभी कभी इन समुदायों में भेद-भाव उत्पन्न हो जाते हैं। इस कारण एक उच्चतम संघ का होना आवश्यक है जो कि इन भेद-भावों को दूर करके आपस में मेल-जोल स्थापित कराये। यह राज्य का कार्य है जो कि इन सब समुदायों को एकता की डोर में पिरोकर समाज को उन्नति के मार्ग में आगे ले जाने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार राज्य विशेष ध्येय की प्राप्ति के लिये सीमित नहीं है बल्कि यह मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन और उसके समस्त कार्यों की देख-भाल करता है और मनुष्य की हर प्रकार की खूबियों का विकास कराता है। इसी प्रकार हर एक राज्य में छोटे २ और दूसरे राजनैतिक संघ भी होते हैं जैसे कि म्युनीसिपल कमेटी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, पंचायत इत्यादि, जिनका कि क्षेत्रफल एक छोटी सी सीमा में सीमित रहता है। राजनैतिक दल भी एक प्रकार के राजनैतिक समुदाय हैं जिनका कि क्षेत्र फल तमाम राज्य होता है और इनका सदस्य होना मनुष्य की इच्छा पर निर्भर है।

प्रजातन्त्र में समुदायों का महत्वः—हमारे यहाँ प्रजातन्त्र की स्थापना कुछ ही वर्ष पूर्व हुई है और इस कारण लोग 'समुदाय' के महत्व को अभी पूरी तरह नहीं समझे हैं। हम लोग व्यक्तिगत रूप से मन्त्रियों के पास मिलने जाते हैं और जब कि हम व्यक्तिगत रूप से जाते हैं तब मिलना कठिन हो जाता है और यदि वह मिलते भी हैं तो कोई विशेष लाभ प्राप्त नहीं होता। परन्तु यदि हम किसी समुदाय के

सदस्य या सेक्रेटरी या सभापति की हैसियत से मिलने जाँय तो मन्त्री और अन्य कर्मचारी फौरन ही बहुत प्रेम से मिलते हैं और जो कुछ कहें उसका कम या अधिक मात्रा में अवश्य प्रभाव होता है क्योंकि प्रजातन्त्र का ध्येय भिन्न २ वर्गों की उन्नति करके समाज को ऊंचा उठाना है और समाज के उठान से व्यक्ति भी अवश्य ऊंचा उठेगा। यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण है, इसी के द्वारा समाज की उन्नति हो सकती है। साधारण मनुष्य व्यक्तिगत प्रभाव द्वारा व्यक्तिगत उन्नति चाहता है परन्तु यह अज्ञानता है और इससे समाज में अशान्ति उत्पन्न होती है और बरबादी होती है उन्नति नहीं। हमको इस नीति को छोड़ देना चाहिये और हर एक महकमे का अलग २ समुदाय स्थापित करना चाहिये और उन समुदायों के द्वारा जो कुछ कि हम पर ज्यादतियाँ या गैर कानूनी अत्याचार होते हैं उनको मन्त्रियों के कान तक पहुँचाना चाहिये। यदि वह वास्तव में अत्याचार है तो हमको पूरा विश्वास है कि मन्त्री लोग अवश्य उनको दूर करने का प्रयत्न करेंगे और फिर वह व्यक्ति जिस पर कि अत्याचार हुआ, उसका दुःख दर्द दूर होगा और अन्य कर्मचारी भविष्य में कभी इस प्रकार का अत्याचार नहीं करेंगे। इस प्रकार व्यक्ति को स्वयं और उस समुदाय के सब सदस्यों को लाभ होगा और इसी नीति से समाज का उत्थान होगा।

साम्प्रदायः—(Community) मैकाइवर के शब्दों में समाज के किसी क्षेत्र गाँव शहर अथवा परदेश को साम्प्रदाय कहते हैं, परन्तु यह परिभाषा उचित नहीं मालूम होती। वास्तव में साम्प्रदाय उन व्यक्तियों से बनता है जो किसी विशेष क्षेत्र में रहते हैं और जिनमें धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी समानता होती है। भारतवर्ष में साम्प्रदाय का प्रयोग किसी जाति विशेष के लिये किया जाता है, जैसे हिन्दू साम्प्रदाय, मुसलमान साम्प्रदाय और जैन साम्प्रदाय इत्यादि।

संस्थाः—(Institutions) मैकाइवर के शब्दों में संस्थाएं

"सामाजिक प्राणियों के मध्य स्थापित और स्वीकृत सम्बन्धों के प्रारुप हैं" संयुक्त परिवार, विवाह के नियम और तलाक इत्यादि संस्था के उदाहरण हैं। कुछ संस्थाओं का विकास रीति रिवाज और परम्परा के द्वारा होता है, जैसे भारत में जाति प्रथा और अस्पृश्यता। कुछ संस्थाएं राज्य द्वारा निर्मित होती हैं, जैसे कानून और नागरिकता और अन्य इसी प्रकार की संस्थाएं।

समाज और राज्य में भेद भाव

प्राचीन नगर राज्य में इन दोनों का सम्बन्धः— प्राचीन समय में रोम और यूनान में छोटे छोटे नगर राज्य स्थापित थे जो कि पूरी तौर से स्वतन्त्र थे और यातायात की सहुलियत न होने के कारण एक नगर राज्य का दूसरे नगर राज्य से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं था। हर एक नगर राज्य के सदस्य नगर के प्रबन्ध में पूरा पूरा भाग लेते थे और इस प्रकार समाज और राज्य का कुछ भेद-भाव नहीं था क्योंकि समाज का हर एक सदस्य राज्य में भी भाग लेता था।

वर्तमान राज्य में समाज और राज्य का सम्बन्धः— आजकल के समय में हर एक राज्य में अधिक संख्या में लोग बसते हैं और इन लोगों का एक जगह एकत्रित होकर राज्य प्रबन्ध में भाग लेना असम्भव है। हर एक राज्य का प्रबन्ध एक सरकार के हाथ में है जिसमें कि सीमित लोग होते हैं और यह लोग समाज में शान्ति स्थापित रख सकते हैं। जहाँ तक कि समाज का सम्बन्ध है उसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। क्योंकि समाज में सब रहने वाले लोग उसके सदस्य हैं। परन्तु राज्य का क्षेत्र सीमित है, क्योंकि इसमें वही लोग सम्मिलित हैं जो किसी न किसी प्रकार से राज्य में भाग लेकर समाज में शान्ति स्थापित रखते हैं। इन सबसे निम्न लिखित बातें प्रत्यक्ष हो जाती हैं।

(१) समाज के लिये संगठन आवश्यक नहीं है परन्तु राज्य के लिये संगठन होना आवश्यक है इस संगठन का नाम सरकार है और सर-

कार राज्य का एक आवश्यक अंग है। हिन्दुस्तान के उत्तर पश्चिम सीमा पर जो इलाका पाकिस्तान और अफगानिस्तान के बीच में है और जिस पर किसी का आधिपत्य नहीं है उसमें रहने वाले लोगों का समाज कहलाता है राज्य नहीं, क्योंकि वहाँ पर किस प्रकार की सरकार नहीं।

(२) समाज का क्षेत्रफल विस्तृत है और राज्य का सीमित

(३) हर एक व्यक्ति जो समाज में रहता है समाज का सदस्य है, परन्तु राज्य का अंग वही कहलायेगा जो कि राज्य के कार्यों में किसी प्रकार का भाग लेता है। गार्डनर साहब लिखते हैं कि समाज का उद्देश्य सामान्य होता है। व्यक्तियों का सामान्य उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये एकत्रित हो जाने को समाज कहते है जब कि राज्य समाज का एक विशेष भाग है जो कि व्यक्ति की रक्षा और उसकी उन्नति के लिये राजनैतिक दृष्टिकोण से संगठन हो गया है.इस प्रकार इन दोनों में अन्तर यह है कि राज्य से यह अर्थ निकाला जाता है कि इसमें एक राजनैतिक संगठन है जो कि सरकार कहलाती है और समाज में इस प्रकार का कोई सगठन नहीं है।

Maciver मैकाइवर के शब्दों में समाज और राज्य में भेद-भाव – समाज में कुटुम्ब, धार्मिक संघ और इस प्रकार के दूसरे कई समुदाय हैं जिनको न तो राज्य निर्माण करती है और न इन समुदायों को राज्य द्वारा किसी प्रकार का उत्साह ही प्राप्त होता है और समाज में कई संस्थायें हैं जिनकी रीति रिवाज या प्रथाओं को राज्य सुरक्षित करता है परन्तु उनको उत्पन्न नहीं करता और इसी प्रकार से समाज के लोगों में मित्रता और द्वेष भावना के विचार हैं जो कि आपस में ऐसा गहरा और नीजि सम्बन्ध स्थापित करते हैं कि जिन पर राज्य किसी प्रकार का अंकुश नहीं लगा सकता। राज्य समाज के अन्दर स्थापित है, परन्तु वह समाज का रुप नहीं है उसका अनुभव उन कार्यों द्वारा होता है जो कि वह करता है। राज्य की सबसे अधिक सेवा यह है कि वो शान्ति स्थापित रखता है और अपने अंकुश द्वारा समाज की उन्नति कराता है।

कुछ शब्दों में यह कहा जा सकता है कि राज्य मनुष्य के बाहरी कार्यों का ठीक तरह से प्रबन्ध करता है। समाज का क्षेत्र विस्तृत है और उसका मनुष्य के समस्त कार्यों से सम्बन्ध है, जैसे कि धर्म, शिक्षा मनोरंजन और मित्रता द्वेष की भावना इन सबसे समाज सम्बन्ध है।

राज्य और अन्य संघों में अन्तरः—राज्य में और दूसरे संघों में बहुत अन्तर है। राज्य स्वाभाविक या अनिवार्य संघ कहलाता है क्योंकि इसका सदस्य होना पैदायश से शुरु होता है। और जीवन के अन्त तक हमको इसका सदस्य बना रहना पड़ता है दूसरे संघों जिनका कि हमने ऊपर वर्णन किया है उनको हम एच्छिक संघ कहते हैं क्योंकि मनुष्य इन संघों का सदस्य अपने इच्छा के अनुसार होता है, और जब वह चाहे अपना सम्बन्ध इन संघों से तोड़ सकता है। दूसरे एच्छिक संघ जिनका कि ऊपर वर्णन किया है उनका उद्देश्य किसी खास ध्येय का विकास करना होता है, अन्य दूसरी बातों में उनका सम्बन्ध नहीं होता है। परन्तु राज्य नीति किसी खास ध्येय के विकास पर सिमित नहीं हो जाती है। उसका ध्येय तो मनुष्य की हर प्रकार की खूबी के विकास कराने का प्रयत्न करना है। तीसरा राज्य सबसे बड़ा संघ होता है। और दूसरे संघ उसके आधीन होते हैं। राज्य का ध्येय यह है कि यदि इन संघों में आपस में भेद भाव हो तो इन भेद भावों को दूर करा कर उनको अपने अपने कार्य में सहूलियत प्राप्त करावे। चौथे राज्य की सीमा सीमित रहती है। परन्तु कई संघ ऐसे भी हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय होते हैं। पांचवा एक मनुष्य कई संघों का सदस्य होता है। परन्तु जहाँ तक राज्य का सम्बन्ध है वो एक राज्य का सदस्य होते हुये दूसरे राज्य का सदस्य नहीं हो सकता। छुठा, राज्य तो स्थाई होता है परन्तु संघ अपना ध्येय प्राप्त करने के बाद अपना महत्व खो देता है। और फिर उसका अन्त हो जाता है। सातवें राज्य का संगठन बहुत बड़ा होता है और वह अपने सदस्यों को अपने नियम पालने को मजबूर करता है। परन्तु किसी भी संघ का संगठन इतना कड़ा नहीं होता है और वह

अधिकतर समझा बुझा कर और लोगों के मस्तिष्क में परिवर्त्तन लाकर सदस्यों को अपने नियम पालन करने पर जोर देता है ।

समाज और समुदाय का अन्तरः—(१) समुदाय का निर्माण एक विशेष ध्येय की प्राप्ती के लिये होता है जो समाज के सामान्य उद्देश्य का एक अंग होता है (२) समुदाय का कार्य क्षेत्र समाज की अपेक्षा सीमित होता है क्योंकि समुदाय का उद्देश्य उन्हीं व्यक्तियों को लागू होता है जो कि उस समुदाय के सदस्य हों, परन्तु समाज का उद्देश्य उसमें रहने वाले व्यक्तियों के हित के लिये होता है। (३) समुदाय का सदस्य होना व्यक्ति पर निर्भर है जो व्यक्ति उसके उद्देश्य से सहमत होते हैं और उसमें अपना भला देखते हैं वे उस समुदाय के सदस्य बन जाते हैं, परन्तु समाज की सदस्यता विस्तृत और व्यापक होती है क्योंकि इसके उद्देश्य सामान्य और समाज के सब व्यक्तियों के लिये होते हैं (४) समुदाय का सदस्य होना व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर है परन्तु समाज के सदस्य उसमें निवास करने वाले सब व्यक्ति होते हैं । चाहे उनकी इच्छा हो या न हो । इस तरह समाज की सदस्यता अनिवार्य और जन्म से होती है ।

समाज और साम्प्रदाय का भेद-भावः—समाज के सदस्य उसमें रहने वाले सब व्यक्ति होते हैं परन्तु किसी साम्प्रदाय के सदस्य समाज के अन्दर रहने वाले कुछ विशेष व्यक्तियों का एक वर्ग होता है जिनमें धार्मिक सांस्कृतिक और भाषा की समानता होती है (२) समाज में अनेक साम्प्रदाय हो सकते हैं। समाज और साम्प्रदाय दोनों की सदस्यता अनिवार्य होती है (३) समाज का उद्देश्य सामान्य होता है, परंतु साम्प्रदाय का उद्देश्य उसके सदस्यों के हित तक ही सीमित होता है

समाज और संस्था का भेद-भावः—समाज का सम्बन्ध मनुष्य और उद्देश्य से होता है जब कि संस्थाएं मनुष्यों के मध्य स्थित रीति रिवाजों, परम्पराओं और परस्पर सम्बन्धों पर प्रकाश डालती हैं ।

सारांशः—समाज समुदाय, सम्प्रदाय और संस्थाओं–इन सब का सम्मिलित नाम है। समाज के दो ध्येय होते हैं। एक तो भौतिक उन्नति तौर दूसरी नैतिक उन्नति। अच्छे समाज में इन दोनों ध्येय पर बराबर महत्व दिया जाता है। वर्तमान समाज, असमानता पर निर्भर है और जब तक असमानता दूर नहीं होगी, वह आदर्श समाज नहीं कहलायेगा।

समुदाय:—भिन्न २ उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये जो मनुष्यों के संगठन बनते हैं उनका नाम समुदाय है। समुदायों का विस्तार उनके उद्देश्य के अनुसार छोटा अथवा बड़ा होता है और उनका संगठन भी भिन्न भिन्न प्रकार का होता है। समुदाय से एकत्रित होकर शक्ति आती है, परस्पर के सहयोग की भावना उत्पन्न होती है, अच्छे गुणों का विकास होता है और सेवा भाव का प्रवेश होता है। संघ सात प्रकार के होते हैं। जिनका कि हमने संक्षेप में वर्णन कर दिया है। प्रजातन्त्र का ध्येय वर्गों की उन्नति करके समाज का उत्थान करना है।

सम्प्रदाय:—वह लोग जिनमें धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी समानता होती है वह लोग एक ही सम्प्रदाय के कहलाते हैं।

संस्थायें:—यह सामाजिक प्राणियों के मध्य स्थापित और स्वीकृत सम्बन्धों के प्रारूप हैं।

समाज और राज्य में भेदभावः—राज्य और अन्य संघों में अन्तर और समाज और समुदायों का अन्तर, समाज और सम्प्रदाय का अन्तर, समाज और संस्था का अन्तर यह सब हमने संक्षेप में वर्णन किया है, इनका अध्ययन करो।

Questions

1. What do you mean by Society? Explain the difference between (i) Society and State (ii) Society and Association.
3. What do you mean by associations? Distinguish between associations and state.

चौथा अध्याय

परिवार

परिवार का निर्माण तथा अर्थः—इतिहास से यह पता नहीं लगता कि सबसे पहले किस समय पर सामाजिक जीवन का आरम्भ हुआ, परन्तु यह निश्चित है कि मनुष्य अपनी आदिम (Primitive) अवस्था में भी समूह व समाज में रहता था। परन्तु आदिम समाज का विस्तार बहुत संकुचित था और जहां तक पता चला है, समाज का सबसे पहला स्वरूप परिवार व कुटुम्ब था। स्त्री और पुरुष में परस्पर आकर्षण हुआ और वे एक स्थान पर रहने लगे। परिवार या कुटुम्ब, स्त्री, पुरुष, और अनेक बच्चों का सामूहिक नाम है।

परिवार की आवश्यक बातें:—परिवार एक आवश्यक समुदाय है। इसका सदस्य बनना अनिवार्य है और यह एक विश्व व्यापक समुदाय है, क्योंकि बच्चा अपने पालन पोषण के लिए दूसरों पर निर्भर है और यही कारण है कि परिवार किसी न किसी रूप में हर काल और हर स्थान पर पाया जाता है।

परिवार के भिन्न भिन्न स्वरूपः—परिवार दो प्रकार से विभाजित किया जा सकता है। पहला उत्तरदायित्व के आधार पर जिसके अनुसार वह पितृ प्रधान परिवार तथा मातृ प्रधान परिवार में विभक्त किया जाता है। द्वितीय यौगिक वर्गीकरण के आधार पर जिसके अनुसार वह साधारण परिवार और संयुक्त परिवार में विभक्त किया जाता है। इन सबका वर्णन निम्नलिखित है।

पितृ प्रधान परिवारः—इस प्रकार के परिवार में आयु में सबसे बड़ा पुरुष कुटुम्ब का प्रधान होता है। कुटुम्ब के अन्य सदस्य उसके आधीन होते हैं। उसकी प्रधानता मानते है और उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। पुत्र ही पिता के अनन्तर जायदाद का मालिक होता

था। प्रायः माता को भी पुत्रों की सहमति पर चलना पड़ता था। इस प्रणाली में परिवार की स्त्रियों के अधिकार कम होते थे। आज कल के परिवार इस प्रणाली के हैं। प्राचीन रोम में कुटुम्ब के सबसे अधिक व्योवृद्ध पुरुष को पैट्रिआर्क कहते थे। कुटुम्ब के सदस्यों तथा सम्पत्ति पर उसका पूरा अधिकार होता था। सन्तान की वंशावली भी पिता के नाम पर चलती थी।

मातृ प्रधान परिवारः—दूसरे प्रकार के परिवार मातृ प्रधान परिवार थे। इनमें माता के अधिकार पिता से अधिक होते थे। परिवार में मां ने पिता का स्थान ले लिया था। आयु में सबसे बड़ी स्त्री परिवार की अध्यक्षा होती थी और उसकी आज्ञा सब पालन करते थे। वे परिवार में विवाह नहीं कर सकते थे। विवाह सम्बन्ध दूसरे समूह में होता था और विवाह होने पर भी स्त्री अपने घर में रहती थी। पति कभी कभी अपनी सुसराल में जाया करता था। सन्तान होने पर उसकी देख भाल और पालन पोषण माता के परिवार में होती थी। पिता की कोई जिम्मेदारी न थी। जायदाद सम्पत्ति भी लड़की की हुआ करती थी और मां के नाम पर परिवार पुकारा जाता था। कुछ विद्वानों का कहना है कि आरम्भ में जब कि समाज असभ्य था उस समय शुरू में मातृ प्रधान परिवार का जन्म हुआ था। परन्तु बाद में जब कि समाज उन्नति कर गया तो इस प्रथा का अन्त हो गया और पितृ प्रधान परिवार प्रचलित हो गया और यही प्रथा संसार में भिन्न २ जगहों पर प्रचलित थी। मातृ प्रधान परिवार अब भी कुछ पहाड़ी इलाकों में पाये जाते है। हमारे यहाँ भारतवर्ष में मलाबार के आस पास इस प्रकार के परिवार हैं।

साधारण परिवारः—पहला रूप साधारण परिवार है। इसमें पिता पत्नी और अनेक छोटे बच्चे जिनका अपना कोई परिवार नहीं होता, उनके अपने सदस्य होते हैं। परन्तु जब कि बच्चे बड़े हो जाते हैं और पढ़ लिख जाते हैं तो वह अपनी शादी खुद करते हैं और

माता पिता के परिवार को छोड़ देते हैं और एक अलग परिवार स्थापित करते हैं। पश्चिमी देशों में यही प्रचिलित है।

संयुक्त परिवारः—संयुक्त परिवार में मनुष्य उसकी धर्म पत्नि, बच्चे व नवयुवक जिनकी की शादियां हो जाती हैं वे और उनकी सन्तान ये सब एक ही मकान में रहते हैं। हर एक सदस्य जो कुछ कमाता है वह सब अपने कुटुम्ब में सबसे बड़े को देता है जो कि उस आमदनी से सब कुटुम्ब की देख भाल करता है। कुटुम्ब के सबसे बड़े आदमी का अधिकार होता है वह तमाम धार्मिक रीति रिवाज को पूरा करता है। कुटुम्ब की सारी सम्पत्ति की देख भाल करता है और कुटुम्ब के सारे सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते हैं।

निर्माण का कारणः—प्राचीन और मध्यकाल में राज्य बहुत कमजोर थे। उनकी जिम्मेदारियां सिर्फ यह थी कि विदेशी आक्रमणों से मुकाबला करके देश की रक्षा करें और आन्तरिक विद्रोहों को दबा कर देश में शान्ति कायम रखे। इस कारण यहां जो सभ्यता प्रचलित हुई उसकी नींव रक्षा और स्थायी सिद्धान्तों पर थी। संयुक्त परिवार का निर्माण का कारण यह हुआ कि कुटुम्ब ने अपने व्यक्तियों की रक्षा का भार अपने उपर ले लिया। क्योंकि राज्य की उन्नति इतनी अधिक नहीं हुई थी कि वे इन जिम्मेदारियों को संभाल सके।

निर्बल लोगों की रक्षाः—जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है संयुक्त परिवार के समाज की रक्षा करके उसकी नींव दृढ़ करने के सिद्धान्त पर निर्भर था। इसने वर्ण व्यवस्था में अधिक सहायता पहुँचाई और गिरोहों के लिये सामाजिक दृढ़ता पैदा की। अवस्था; कमजोरी व लाचारी के कारण जो लोग अपना पेट नहीं भर सकते थे उनके लिये संयुक्त परिवार एक प्रकार से बीमा था। और ये संयुक्त परिवार का सबसे बड़ा लाभ था। इसने राज्य के कमजोर होने के कारण कमजोर लोगों की सहायता की और समाज में स्थायीपन पैदा किया। दूसरी बात यह थी कि जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि वर्ण व्यवस्था के कारण संयुक्त

परिवार की नींव मजबूत हुई। पहले जमाने में व्यवसाय पैदाइशी ही होता था और सब लोग एक ही घर में रहते थे इस कारण यह अपनी सन्तान को अपने व्यवसाय में पूरी तरह से निपुण बना देता था। हिन्दुस्तान ने जो हस्त कला में इतनी उन्नति की उसका एक मुख्य कारण यही था। ढाका का मलमल और कश्मीर के हस्त कला के नमूने तमाम देशों में प्रसिद्ध हैं। इन दो लाभों के पश्चात कई और साधारण लाभ भी हैं। जैसे एक ही रसोई में खाने पीने का प्रबन्ध होना आदि। अन्त में हमें यह भी कहना होगा कि इससे यह लाभ भी हुआ कि संयुक्त परिवार प्रथा की नीति से अनुशासन, त्याग, मेल जोल, बड़ों का आदर करना आदि इन सब खूबियों का विकास हुआ। इन सब लाभों के साथ संयुक्त परिवार प्रथा में कई हानियां भी हैं जो वे निम्नलिखित हैं।

योग्य पुरुष को प्रोत्साहन नहीं:—हमने ऊपर लिखा है कि संयुक्त परिवार प्रथा अपंग लोगों की एक रक्षा का बीमा है यदि इसमें लाभ है तो इसमें बुराई भी है कि इस तरह का प्रबन्ध अगर कमजोरों की सहायता करता है तो मजबूत लोगों को कुछ हद तक अपंग बनाता है। साधारण लोगों को ऊंचा करता है तो असाधारण लोगों के खिलाफ पड़ता है चाहे वे बुरे हों चाहे अच्छे हों। संयुक्त परिवार लोगों को उठा कर एक सतह पर ले आता है पर इससे बहुत बुराई है। इससे रक्षा होती है परन्तु उन्नति रुकती है। योग्य पुरुष को अपने विकास के लिये कोई प्रोत्साहन नहीं है अर्थात अधिक काम करके अधिक कमाने के लिये इसमें कोई लालच नहीं है। इसी प्रकार इसमें ऐसा कोई उपाय नहीं है जो कि सुस्त और आलसी आदमी को अपना आलस्य छोड़ कर काम करने में मजबूर होना पड़े। इसके पश्चात और भी हानि है। मनुष्य के मस्तिष्क के विकास के कारण हर विषय में भिन्न २ विचार धारायें हो गई है जिससे आपस में झगड़ा होने की सम्भावना है। पुरुष और औरत के विकास के लिये इसमें काफी स्वतंत्रता नहीं है,

इस सम्बन्ध में स्त्री को बहुत हानि पहुँचती है और उसकी उन्नति रुकती है। अन्त में यह मानना होगा कि संयुक्त परिवार प्रथा से लाभ कम है और हानियां अधिक है।

समाज की रक्षा का भार सरकार को ग्रहण करनाः- वर्त्तमान समय में राज्य ने अपने कंधों पर सब प्रकार की जिम्मेदारियाँ ले ली हैं। देश में शान्ति स्थापित रखने की जिम्मेदारी का महत्व धीरे २ कम होता जा रहा है क्योंकि हम जैसे ही सभ्यता में आगे बढ़ते जायेंगे उतनी ही हम अपनी जिम्मेदारियों को पहचानने लगेंगे। हम खुद ऐसा कार्य नहीं करेंगे कि शान्ति भंग हो। सरकार की यह जिम्मेदारी जो कि अब धीरे २ कम होती जा रही है उसके बजाय अब सरकार की यह जिम्मेदारी है कि देश में ऐसी २ योजनायें तैयार करें जिससे अधिक से अधिक संख्या में लोगों को नौकरियां मिल सके। और वे लोग जो अपाहिज है और काम नहीं कर सकते हैं उनको कानून के द्वारा आर्थिक सहायता दें। इस प्रकार से ये अपाहिजों की रक्षा का भार जो अब तक संयुक्त परिवार के कधों पर था उसकी जिम्मेदारी सरकार अपने ऊपर ले रही है और इस कारण संयुक्त परिवार का महत्व दिन प्रतिदिन कम होता जा रहा है।

वर्त्तमान सरकार के समाज रक्षा के कार्यः—हमारी स्वतन्त्र सरकार ने इसके विषय में पहला कदम उठाया है वह यह है कि यदि किसी सरकारी कर्मचारी की २५ वर्ष सेवा करने के बाद ५५ वर्ष की आयु के पहले उसकी मृत्यु हो जाये तो सरकार द्वारा उसे पेन्शन या ग्रेजुएटी देने की व्यवस्था की गई है। यदि कर्मचारी की मृत्यु २५ साल से पहले ही हो जाये तो कानूनी व्यवस्था यह है कि उसके द्वारा मान्य या कुटुम्ब के उत्तराधिकारी व्यवस्था के अनुकूल यह सहायता जो कि सरकार ग्रेजुएटी या पेन्शन के रूप में देना चाहती है ५ वर्ष तक दे देगी जो कि उसका कानूनी हकदार होगा। इसके अलावा मजदूरों के बीमारी के बीमे का कानून और काम पर कार्य करने

समय अंग भंग हो जाने की व्यवस्था में मुआवजा देने की व्यवस्था भी है। इसके सिवा अन्य कई प्रकार की योजनायें सरकार तैयार कर रही है जिससे कि कुटुम्ब की जिम्मेदारियां कम हो और देश की उन्नति हो। विधान द्वारा हमने समानता स्वीकार की है और स्त्री और पुरुष में समानता लाने के लिये सरकार ने कई योजनायें बनाई हैं जो कि संसद के सदस्यों की स्वीकृति के लिये पेश हो गई है और कुछ होने वाली हैं। इसके स्वीकार होने पर स्त्री को भी जायदाद में हक प्राप्त होगा और फिर संयुक्त परिवार की नींव बहुत कमजोर हो जायेगी।

वर्तमान उद्योग धंधों का उस पर प्रभावः—वर्तमान समय में गांव में बेकारी होने के कारण लोग गांव छोड़ कर शहरों में आ रहे हैं। जहां बड़ी मिल और फैक्ट्रियां स्थापित हैं और वहां पर मजदूर और कारीगरी का काम करके अपना गुजर करते हैं। इस कारण संयुक्त परिवार का महत्व कम हो रहा है।

वर्तमान शिक्षा पर बहुत कुछ पश्चिमी छाप है जिससे कि व्यक्तिवाद का प्रादुर्भाव हुआ और उससे लोग आपस में मिलजुल कर रहना पसंद नहीं करते। इससे महत्वाकांक्षा का उदय हुआ। और ऐसे लोग अपने विकास के लिये अपने गांवों को छोड़ कर शहरों में बस गये और इन सबसे परिवार को धक्का लगा।

परिवार के कार्यः—कुटुम्ब नागरिकता की पहली पाठशाला और समाज का छोटा रूप है। कुटुम्ब में रहकर ही लोग नागरिकता का पहला पाठ सीखते हैं। बच्चा वातावरण से अधिक प्रभावित होता है। बचपन में जो कुछ वह देखता या सुनता है उसको वह ग्रहण कर लेता है। बचपन में जो संस्कार अच्छा या बुरा बन जाता है वह बड़ी मुश्किल से बदलता है, इस प्रकार यह वह कारखाना है जो मनुष्यों का निर्माण करता है।

शिशु पालनः—मनुष्य सामाजिक जीव इसी कारण कहलाता है

कि जब बच्चा पैदा होता तो वह अपनी देख भाल खुद नहीं कर सकता बल्कि इसके लिये वह कुटुम्ब पर निर्भर है। माता पिता ही उसका लालन पालन करते हैं। माता, पिता बच्चों के सुख के लिये नाना प्रकार के कष्ट उठाते हैं। अपने सुखको बच्चे के लिये बलिदान करते हैं। सेवा त्याग और बलिदान नागरिकता की पहली सीढ़ी है। यह भावना मनुष्य को माता, पिता के द्वारा ही प्राप्त होती है। आगे चल कर जब कि बच्चा बड़ा हो जाता है और माता पिता बुढ़ापे के कारण कमजोर बन जाते हैं तो व्यक्ति अपने माता के लिये हर प्रकार के कष्ट सहता है और उनकी भलाई के लिये अपने सुख का त्याग करने के लिये तैयार रहता है। इस प्रकार त्याग सेवा और बलिदान का माद्दा का कुटुम्ब से ही उसका निर्माण होता है और यदि इसका विस्तार अधिक कर दिया, तो मनुष्य समाज के राज्य के सुधार के लिये सेवा, त्याग द्वारा तैयार हो जाता है।

शिक्षा और संस्कृतिः—लालन पालन के अतिरिक्त परिवार में रह कर व्यक्ति शिक्षा और संस्कृति भी ग्रहण करता है। परिवार शिशु के कोमल मस्तिष्क में इनकी अमिट छाप छोड़ देता है। यह सर्व प्रथम शिक्षा होती है और इसे वह कभी नहीं भूल सकता। यदि कुटुम्ब का वातावरण उच्चकोटि का है तो वह अवश्य अच्छा नागरिक बनता है और यदि वातावरण गिरा हुआ है तो उसमें बुराइयां आजाती है जिनकी कि छाप हमेशा उनके मस्तिष्क में रहती है। हमारा परिवार गिरा हुआ है और उसका वातावरण खराब होने के कारण बचपन ही में बच्चे खराब आदत सीख लेते हैं और इसका प्रभाव हमेशा उनके दिमाग में रहता है। स्कूल और विश्व-विद्यालयों में शिक्षा के द्वारा भी यह खराब विचार उनके दिमाग से नहीं मिटते और यही कारण है कि हमारे समाज की उन्नति इतनी धीमी है।

नैतिक और धार्मिक कार्यः— परिवार की धार्मिक व नैतिक प्रवृति का प्रभाव उसके शिशु पर पड़ता है। हमारे परिवार की स्थिति

इस समय गिरी हुई और धर्म का विस्तार उन्होंने अधिक कर दिया है, रीति रिवाज को भी धर्म में सम्मिलित कर दिया है। इन सब गलत बातों का प्रभाव बच्चे के मस्तिष्क पर पड़ता है और यही कारण है कि पढ़े लिखे आदमी भी इन बातों को ढोंग समझते हैं और सुधार के समय इन बातों का विरोध करते हैं। उनको गलत विचार बच्चों में प्रचलित नहीं करने चाहिये क्योंकि इससे भविष्य में समाज को हानि पहुँहती हैं।

नागरिकता का पाठः—परिवार सामाजिक गुणों की अमर पाठ-शाला है। इसके निम्नलिखित कारण हैं।

१. परस्पर सहयोग और सहायताः—इसका सर्व प्रथम पाठ परिवार में पढ़ाया जाता है। परस्पर सहयोग से ही शिशु का लालन पालन होता है, और यही सहयोग मनुष्य के आगे के जीवन में सफलता का आधार है।

२. आज्ञा पालन तथा अनुशासन की भावनाः—परिवार में आदर, आज्ञा पालन और अनुशासन के भाव सरलता से विकसित होते हैं। आगे चल कर वह इन तीनों महत्वपूर्ण वस्तुओं को अपने चरित्र में मिला लेता है, जो उसे आगे के जीवन में सफल नागरिक बनाते हैं, परन्तु वर्तमान स्थिति में हम ये देखते हैं कि कुटुम्ब में माता पिता इन बातों पर जोर नहीं देते, बच्चे को नटखट बना देते हैं और बच्चे आगे चल कर कानून, तथा अनुशासन का उलंघन करते हैं। माता पिता को चाहिये कि शुरु से ही आज्ञा पालन करने पर जोर दे, और जब कि वे कुछ बड़े हों तो उनको कानून पालन करने का पाठ पढ़ायें। रास्ते में बायें हाथ पर चलना, केला या नारंगी खाकर उसका छिलका हर जगह न फेंक देना, सफाई के साधारण नियमों का पालन करना, तथा सभ्यता के साधारण बातों का ज्ञान बचपन से ही दें ताकि यह बातें उनके मस्तिष्क में ठोस जगह स्थापित करले और फिर वे बड़े होकर

कानून और अनुशासन का पूरा पालन करके अच्छे नागरिक बन सकेंगे। इंगलिस्तान में रानी के सिंहासन आरुढ़ होने के समय अधिक संख्या में लोग जलूस देखने के लिये एकत्रित हुए। आदमियों की संख्या इतनी अधिक थी कि तिल रखने को भी कहीं स्थान नहीं था इस पर भी सब शान्ति पूर्वक कार्य हुआ और किसी प्रकार की घटना नहीं हुई। कुम्भ मेले में उससे कम आदमी एकत्रित हुए थे, परन्तु हजारों आदमी कुचल कर मर गये, इसकी जिम्मेदारी कुटुम्ब पर है। इंगलिस्तान में बचपन ही से कानून का पालन करना सफाई के नियम और संस्कृति के साधारण बातों के अनुसार चलने पर जोर देते हैं, इन बातों की छाप उनके मस्तिष्क में सदा रहती है और फिर समाज में एक नया वातावरण उत्पन्न हो जाता है, परन्तु हमारे यहां माता, पिता यह पाठ नहीं पढ़ाते हैं और इसके कारण व्यक्ति और समाज दोनों की हानि होती है। हमारी माताओं को चाहिये कि शुरु से ही बच्चों को कानून पालन करने का पाठ पढ़ायें, यह राजनैतिक धर्म है। इससे प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ होगी और समाज की उन्नति शीघ्र से होगी। इसके पश्चात् परस्पर का सहयोग, देश भक्त और अन्य दूसरी अच्छाईयों का विकास करना चाहिये।

कुटुम्ब और विद्या मन्दिर का सम्बन्धः—परस्पर के सहयोग के चक्र पर ही संसार निर्भर है जितना कि परस्पर का सहयोग व्यक्तियों और समूहों में अधिक होगा उतनी ही उन्नति तेजी से होगी। वर्तमान समय में माता पिता अपने बच्चों को स्कूल में भर्ती करा देते हैं परन्तु स्कूल के कर्मचारियों से किसी प्रकार का सहयोग नहीं रखते हैं। इससे बच्चों का विकास ठीक तौर पर नहीं होता है और परिवार को ही इससे हानि होती है। यदि माता पिता अपने बच्चों की शिक्षा में रुचि लेवें और इस प्रकार स्कूल के कर्मचारियों का हाथ मजबूत करें और खुद भी बच्चों पर अंकुश रखें तो तेजी से उन्नति होगी और कुटुम्ब व समाज दोनों को इससे लाभ होगा।

भविष्य के परिवार का चित्र और नवयुवकों को चेतावनीः-

The Hindu Code Bill has been dropped, but its provisions have been included in six separate Bills. Two bills dealing respectively with the Hindu Marriage and Divorce Bill and Hindu Minority and Guardianship bill have already been introduced in the Council of State and are now pending. The third Bill viz Daughter's Right to Father's Property or Hindu Succession Bill has been published in a Gazette of India Extraordinary for inviting public opinion on it. There are now only three more parts of the old Hindu Code Bill which still remain to be brought forward—those relating to adoption, maintenance, and joint family. They will also be introduced shortly. When all these bills are passed, the Hindu family which is based at present on the basis of inequality and supremacy of man, will be reconstituted on a new basis of equality, liberty and social justice which are the fundamental principles incorporated in the preamble to the constitution of India

हमने ऊपर अंग्रेजी में लिखा है कि हिन्दू कोड बिल जिसका कि ध्येय समाज को नये सिद्धान्तों के अनुसार बनाना है उसको रद्द कर दिया गया है और उसके सिद्धान्त छः अलग अलग बिलों द्वारा संसद् की स्वीकृति के लिये रखे जायेंगे। वर्तमान समय में दो बिलों पर कार्यवाई हो रही है, एक बिल अभी कुछ समय पहले ही पेश किया गया है और तीन बिलों पर इस समय विचार किया जा रहा है और वह भविष्य में संसद् के सामने पेश किये जायेंगे। जब कि यह छः बिल संसद् स्वीकार कर लेगी तो हमारे परिवार का ढांचा बिलकुल बदल जायेगा। वर्तमान समय में हमारे परिवार का ढांचा असमानता और पुरुष की विशेषता के आधार पर है। भविष्य में हमारे विधान के अनुसार हमारे परिवार का ढाँचा समानता, स्वतन्त्रता और सामाजिक न्याय के आधार पर होगा। नवयुवकों को चाहिये कि वह अपना दृष्टिकोण बदलें, ताकि भविष्य में नये आधार पर बनने वाले परिवार से पूरा लाभ उठा सकें। उनको चाहिये कि शादी के समय पर खान पीन और अन्य दूसरी बातों

में रुपया खर्च करना कम करें। दहेज की प्रथा और जेवरात पर रुपया खर्च करने की प्रथा को भी बन्द करें। भविष्य मैं लड़की को भी जायदाद मैं हिस्सा मिलेगा और इस कारण इस प्रकार का स्त्री धन देने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार दूसरी बात यह है कि शादी ब्याह करते समय लड़की के माता पिता की आर्थिक स्थिती अच्छी देख कर शादी के लिये गिरना, या सूरत शक्ल देख कर शादी के लिये आकर्षित हो जाना यह सब दृष्टिकोण भविष्य मैं हानि कारक सिद्ध होगा। क्योंकि यदि दोनों का स्वभाव नहीं मिला और शादी से सुख प्राप्त नहीं हुआ जो कि शादी का ध्येय है तो स्त्री को शादी के अन्त करने (Divorce) का अधिकार होगा। इस कारण से विद्यार्थियों को चाहिये कि स्वभाव पर जोर देवें और जब स्वभाव एक प्रकार के मिल जायें तो न तो लड़की के कुटुम्ब की आर्थिक स्थिति का ख्याल करें, न उसके रूप रंग का और फिर ऐसी शादी में दोनों पुरुष और स्त्री मिल जुल कर परस्पर के सहयोग के साथ संसार की जिम्मेदारियों को खुशी २ सहन करेंगे। दोनों के जीवन में खुशी सुख और शान्ति होगी और समाज की भी उन्नति होगी। हम इस प्रकार की चेतावनी देना अपना कर्त्तव्य समझते है, क्योंकि शिक्षा का ध्येय यही है कि भविष्य में आने वाली बातों का पहले से ज्ञान होकर तुम पहले से इनका सामना करने को तैयार हो जाओ।

International friendship is the urgent necessity of the day. There is the W.F.O. (world friendship organization) with its headquarter at 3 Madhopuri Ludhiana. (India) which will send you a list of pen friends in India and abroad. You will be able to advance international peace through pan-friendship: Apply for full particulars at the above address or to the author and be a partner in the progress of humanity.

छोटे और बड़े परिवार में भिन्नता

छोटे परिवार में लक्ष्मी का निवास होता है। अनुशासन की मर्यादा में बालकों को नागरिकता का पाठ पढ़ाया जा सकता है। आज्ञा पालन करना, सफाई के साधारण नियमों और सभ्यता की साधारण बातों का ज्ञान छोटे परिवार में बचपन ही से दिया जाता है, यह सर्व-प्रथम शिक्षा होती है जो कि बड़े होने पर भी वह नहीं भूलता। बड़े होकर इस शिक्षा के आधार पर ही वो कानून और अनुशासन का पालन करके अच्छा नागरिक बन जाता है। यही कारण है कि इंगलैण्ड में रानी के सिंहासनारुढ़ होने के समय लोगों की संख्या अधिक होने पर भी कोई घटना नहीं हुई। छोटे परिवार में जीवन का बीमा हो जाने से जीवन उज्ज्वल रहता है। हर एक नागरिक को

जहां तक हो सके अपने जीवन का बीमा अवश्य करना चाहिये ।

बड़ा परिवार दरिद्रता और बीमारी का घर है । परिवार में जितने अधिक लोग होंगे उतना ही अधिक मतभेद और क्लेश होगा । ऐसे परिवार में नागरिकता का पाठ नहीं पढ़ाया जा सकता है यही लोग बड़े होकर कानून और अनुशासन का पूर्णरुप से पालन नहीं कर पाते । रेलगाड़ियों और मेले इत्यादि जहां पर अधिक संख्या में लोग इकत्रित होते हैं वहां पर प्रबन्ध करना कठिन हो जाता है फिर कुम्भ मेले जैसी घटनायें होती हैं । व्यक्ति और समाज की उन्नति के लिये छोटा परिवार ही लाभदायक है । कृपया सरकार की स्थापित की हुई परिवार संतति नियम (**Family Planning clinic**) से बातचीत करके अच्छा नागरिक बनने का प्रयत्न कीजिये जिससे परिवार और समाज दोनों का भविष्य उज्ज्वल रहे ।

अध्याय पांचवा

समाज तथा व्यक्ति

Society and individual

एक कवि ने समाज की निन्दा करते हुए लिखा है कि हमें अब ऐसी जगह चल कर रहना चाहिये, जहां पर कि कोई पड़ौसी नहीं हो और जहां कि यदि मृत्यु हो जाय तो उसकी मृत्यु पर दुःख प्रकट करने वाला नहीं हो।

"रहिये अब ऐसी जगह चल कर जहां कोई न हो,
कोई हमसाया न हो और पासवां कोई न हो।
बे दरों दीवार सा एक घर बनाया चाहिये,
और अगर मर जाय तो नौख्वाह कोई न हो।

परन्तु ये कवि की कल्पनायें हैं और एक अंग्रेज कवि ने इसका उत्तर इन शब्दों में दिया हैः—

"Better dwell in the midsts of alarm
than reign in this horrible plale."

इससे यह प्रगट होता है कि स्वभाव और प्रकृति के नियम के अनुसार मनुष्य को मनुष्य का संग ही भाता है। वह अकेला नहीं रह सकता। जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य का जीवन किसी न किसी रूप में दूसरों पर आश्रित रहताहै। उसकी सफलता दूसरों की सहायता पर निर्भर है। इस कारण वह समूह में रहता है। असभ्य अवस्था में भी वह समूह में रहता था। मनुष्य मात्र के समूह को चाहे संगठित हो या असंगठित हो समाज कहते हैं।

अरस्तु जो कि एक यूनानी फिलास्फर आज के कोई ढाई हजार वर्ष पहले हुआ था। उसने लिखा है कि मनुष्य सामाजिक जीव है।

मनुष्य सामाजिक जीव क्यों हैः— इसका अर्थ यह है कि मनुष्य समाज में जन्म लेता है, समाज में ही उसका पालन पोषण होता है। और समाज ही उसके जीवन का क्षेत्र है। मनुष्य को सामा-

जिक जीव कहने के सात कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि मनुष्य जन्म लेते समय बहुत दुर्बल होता है, और वह अपने पालन पोषण और रक्षा के लिये अपने माता पिता और दूसरे सम्बन्धियों पर निर्भर रहता है यदि उसको अकेला छोड़ दिया जाय तो वह अपनी रक्षा नहीं कर सकता, इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्य के लिये समाज की आवश्यकता है।

दूसरे सर्दी गर्मी से बचना खान-पान हिंसक पशुओं और जंगली जातियों से रक्षा पाने में सब मनुष्यों की एक सी आवश्यकता है जिसकी संतोषजनक पूर्ति केवल समाज में ही हो सकती है।

तीसरे यह है कि बच्चा दुर्बल अवश्य होता है; परन्तु उसमें बहुत से गुण छिपे रहते हैं:-बोलने और भाषा सीखने की रुचि, सोच विचार की रुचि, भावना को अनुभव करना तथा खेल और अन्य कार्य करने की अच्छी अच्छाइयाँ छिपी होती हैं। इनका समाज के द्वारा ही विकास होता है। मनुष्य का मस्तिष्क समाज में ही उन्नति कर सकता है। ऐसा कहा जाता है कि अकबर बादशाह ने कुछ बच्चों को ऐसे बन्द कर दिया कि मनुष्य की बोली उनके कानों तक नहीं पहुंच सकी। इसका प्रभाव यह हुआ कि कुछ साल बाद जब उन बच्चों की देख भाल हुई तो उन बच्चों की बोलने की शक्ति नष्ट हो चुकी थी और वे बिलकुल गूंगे हो गये थे। इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्य की अच्छाइयों का विकास समाज द्वारा ही होता है। मनुष्य अपना कार्य दूसरों के साथ ही कर सकता है। अकेला रहने से उसके अन्दर सच्चाई, नम्रता, पुरुषार्थ, लोक-सेवा, सहानुभूति और संयोग आदि अनेक गुणों का विकास नहीं होता है। समाज के बिना न तो गांव की, और न शहर की राजनैतिक तथा आर्थिक उन्नति का विकास हो सकता है। कला तथा साहित्य की भी उन्नति नहीं हो सकती है।

चौथे, बचपन में मनुष्य का मस्तिष्क दूसरी चीजों को ग्रहण करने

के लिये सदा तैयार रहता है। उसके मस्तिष्क पर वातावरण का अधिक प्रभाव पड़ता है। इससे हानि और लाभ दोनों ही होते हैं। जो कुछ भी वह देखता है और जो कुछ विचार उसके सामने रखे जाते हैं उनका उसके ऊपर प्रभाव पड़ता है और इस प्रकार उसको अपनी उन्नति करने और दूसरों के द्वारा शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिलता है।

पांचवें शान्ति और अच्छी व्यवस्था के लिये समाज की आवश्यकता होती है, क्योंकि समाज शान्ति, व्यवस्था, नियम और दण्ड द्वारा स्थापित होती है।

छठे आर्थिक उन्नति में भी समाज आवश्यक है। सब लोग मिल कर तथा परस्पर के सहयोग के साथ आर्थिक संकट से लड़ते हैं और इस प्रकार भूख, बेकारी और निर्धनता पर विजय प्राप्त करते हैं।

सातवें सभ्यता और संस्कृति की उन्नति के लिये भी समाज आवश्यक है। समाज द्वारा ही हमारी सभ्यता व संस्कृति की रक्षा हुई है, उसकी उन्नति हुई है जोर आगे भी वह सुरक्षित रह सकेगी। इन सब कारणों से मनुष्य सामाजिक प्राणी कहलाता है और समाज मनुष्य के लिये आवश्यक है।

सभ्य समाज का व्यक्ति पर प्रभावः—इस प्रश्न को समझने के लिये समाज को दो भागों में विभाजित किया जाता है। एक तो उन्नतिशील समाज और दूसरा गिरा हुआ समाज। उन्नतिशील समाज वह समाज है जिसमें कि व्यक्ति को उसके विकास के लिये पूरा अवसर मिले। इससे साहित्य, कला, विज्ञान, संगीत इत्यादि सबके विकास के लिये पूरा २ ध्यान दिया जाता है और हर एक व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार इनमें भाग लेकर अपनी अच्छाइयों का विकास करके समाज की सेवा कर सकता है। दूसरे उन्नतिशील समाज में सफाई के नियमों को पालन करने पर जोर दिया जाता है और जनता के स्वास्थ्य की देख भाल भलि भांति की जाती है। इसका परिणाम यह होता है

जिक जीव कहने के सात कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि मनुष्य जन्म लेते समय बहुत दुर्बल होता है, और वह अपने पालन पोषण और रक्षा के लिये अपने माता पिता और दूसरे सम्बन्धियों पर निर्भर रहता है यदि उसको अकेला छोड़ दिया जाय तो वह अपनी रक्षा नहीं कर सकता, इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्य के लिये समाज की आवश्यकता है।

दूसरे सर्दी गर्मी से बचना खान-पान हिंसक पशुओं और जंगली जातियों से रक्षा पाने में सब मनुष्यों की एक सी आवश्यकता है जिसकी संतोषजनक पूर्ति केवल समाज में ही हो सकती है।

तीसरे यह है कि बच्चा दुर्बल अवश्य होता है; परन्तु उसमें बहुत से गुण छिपे रहते हैं:-बोलने और भाषा सीखने की रुचि, सोच विचार की रुचि, भावना को अनुभव करना तथा खेल और अन्य कार्य करने की अच्छी अच्छाइयाँ छिपी होती हैं। इनका समाज के द्वारा ही विकास होता है। मनुष्य का मस्तिष्क समाज में ही उन्नति कर सकता है। ऐसा कहा जाता है कि अकबर बादशाह ने कुछ बच्चों को ऐसे बन्द कर दिया कि मनुष्य की बोली उनके कानों तक नहीं पहुंच सकी। इसका प्रभाव यह हुआ कि कुछ साल बाद जब उन बच्चों की देख भाल हुई तो उन बच्चों की बोलने की शक्ति नष्ट हो चुकी थी और वे बिलकुल गूंगे हो गये थे। इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्य की अच्छाइयों का विकास समाज द्वारा ही होता है। मनुष्य अपना कार्य दूसरों के साथ ही कर सकता है। अकेला रहने से उसके अन्दर सच्चाई, नम्रता, पुरुषार्थ, लोक-सेवा, सहानुभूति और संयोग आदि अनेक गुणों का विकास नहीं होता है। समाज के बिना न तो गांव की, और न शहर की राजनैतिक तथा आर्थिक उन्नति का विकास हो सकता है। कला तथा साहित्य की भी उन्नति नहीं हो सकती है।

चौथे, बचपन में मनुष्य का मस्तिष्क दूसरी चीजों को ग्रहण करने

के लिये सदा तैयार रहता है। उसके मस्तिष्क पर वातावरण का अधिक प्रभाव पड़ता है। इससे हानि और लाभ दोनों ही होते हैं। जो कुछ भी वह देखता है और जो कुछ विचार उसके सामने रखे जाते हैं उनका उसके ऊपर प्रभाव पड़ता है और इस प्रकार उसको अपनी उन्नति करने और दूसरों के द्वारा शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिलता है।

पाँचवें शान्ति और अच्छी व्यवस्था के लिये समाज की आवश्यकता होती है, क्योंकि समाज शान्ति, व्यवस्था, नियम और दण्ड द्वारा स्थापित होती है।

छठे आर्थिक उन्नति में भी समाज आवश्यक है। सब लोग मिल कर तथा परस्पर के सहयोग के साथ आर्थिक संकट से लड़ते हैं और इस प्रकार भूख, बेकारी और निर्धनता पर विजय प्राप्त करते हैं।

सातवें सभ्यता और संस्कृति की उन्नति के लिये भी समाज आवश्यक है। समाज द्वारा ही हमारी सभ्यता व संस्कृति की रक्षा हुई है, उसकी उन्नति हुई है जौर आगे भी वह सुरक्षित रह सकेगी। इन सब कारणों से मनुष्य सामाजिक प्राणी कहलाता है और समाज मनुष्य के लिये आवश्यक है।

सभ्य समाज का व्यक्ति पर प्रभाव:—इस प्रश्न को समझने के लिये समाज को दो भागों में विभाजित किया जाता है। एक तो उन्नतिशील समाज और दूसरा गिरा हुआ समाज। उन्नतिशील समाज वह समाज है जिसमें कि व्यक्ति को उसके विकास के लिये पूरा अवसर मिले। इससे साहित्य, कला, विज्ञान, संगीत इत्यादि सबके विकास के लिये पूरा २ ध्यान दिया जाता है और हर एक व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार इनमें भाग लेकर अपनी अच्छाइयों का विकास करके समाज की सेवा कर सकता है। दूसरे उन्नतिशील समाज में सफाई के नियमों को पालन करने पर जोर दिया जाता है और जनता के स्वास्थ्य की देख भाल भलि भांति की जाती है। इसका परिणाम यह होता है

कि बीमारियां कम फैलती है। व्यक्ति को रोगों का शिकार बनने का अवसर कम हो जाता है। तीसरे, समाज में एक सीमा तक उन्नति करने के पश्चात व्यक्ति को सेवा, ईमानदारी, पुरुषार्थ, परस्पर का सहयोग और इस प्रकार के दूसरे गुणों के प्रयोग करने का अवसर मिलता है। चौथे, उन्नतिशील समाज में बेकारी और निर्धनता बहुत कम मात्रा में पाई जाती है क्योंकि सब लोग मिल कर आर्थिक समस्याओं का सामना करते हैं और इस प्रकार का नियम बनाते हैं जिनके द्वारा सम्पत्ति कुछ व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के हाथ में एकत्रित नहीं होती बल्कि समाज में उसका समान बंटवारा होता है और इस प्रकार धनी और निर्धन का भेद-भाव बहुत कम हो जाता है। पांचवें, प्राचीन समय में जब हमारा समाज उन्नति की चरम सीमा पर पहुँचा हुआ था, उस समय हमारे यहां केवल सांसारिक और शारीरिक उन्नति तक ही ध्यान सीमित नहीं था बल्कि हमने अध्यात्मिक उन्नति को भी अपनाया था और उसको भी काफी महत्व दिया था इसी कारण हमारे देश ने संसार के इतिहास में एक स्थायी स्थिति ग्रहण की है और गिरी हुई स्थिति में भी वह जीवित रहा है। वर्तमान पश्चिमी देशों के समाज ने अवश्य भौतिक उन्नति की है परन्तु उन का दृष्टिकोण संकीर्ण होने के कारण उनकी नींव दृढ़ नहीं है और बार २ चेतावनी देने के पश्चात भी वह दिन प्रतिदिन अवनति की ओर ही जा रहे हैं जो कि उनको नष्ट कर देगा। हमें भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की उन्नति साथ २ करनी है ताकि मनुष्यता का पूरा २ विकास हो।

असभ्य समाज का प्रभाव:—असभ्य समाज में व्यक्ति को उन्नति करने का इतना अवसर नहीं मिलता है। इसमें साहित्य, कला, विज्ञान, संगीत इत्यादि के प्रचार का इतना उचित प्रबन्ध नहीं होता है कि हर एक व्यक्ति उसका लाभ उठा कर अपने गुणों का विकास कर सके। अधिक संख्या में लोग अपने गुणों का विकास करने में असफल

रहते हैं। मध्य काल में और अंग्रेजी राज्य के समय में हमारा समाज व्यक्ति को अपने विकास के लिये इतने अधिक अवसर नहीं देता था और यही कारण है कि हमारे देश की उन्नति इतने दिनों तक रुकी रही। कुछ समय पहले दक्षिण में श्री निवास रामानुजम नाम का एक गरीब आदमी था जिसमें गणित की विद्या कूट २ कर भरी हुई थी परन्तु हमारा समाज उस समय इतना गिरा हुआ था कि उस व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर ही नहीं दिया था। रामानुजम समाज की इस कमी के कारण अपने गुण का विकास नहीं कर सका और साधारण शिक्षा प्राप्त करके क्लर्क बन गया। लेकिन उसमें प्राकृतिक प्रतिभा का एक न दब सकने वाला गुण था और वह अपने फुरसत के घंटों में अंकों और उनके समीकरण से अपना जी बहलाया करता था। अचानक उसके इस गुण का पता लग गया और उसे कैम्ब्रिज विश्व विद्यालय में शिक्षा के लिये भेजा गया। विद्वानों का कहना है कि वह २० वीं शताब्दी के सबसे बड़े गणित के जानने वाले थे। हमें यह दुःख है कि ३३ वर्ष की अवस्था में ही इनकी मृत्यु हो गई। परन्तु इससे यह सिद्ध हो जाता है कि व्यक्ति की उन्नति समाज के ही द्वारा हो सकती है। दूसरे, गिरे हुए समाज में जनता के स्वास्थ्य की देख-भाल ठीक प्रकार से नहीं होती है और स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियमों का पालन करने पर जोर नहीं दिया जाता है इससे बीमारियाँ अधिक फैलती हैं। व्यक्ति बीमारियों के शिकार बनते हैं, उनकी आयु कम होती है और इससे देश को आर्थिक हानि होती हैं। हमारे देश में अन्य बीमारियों को छोड़ कर मलेरिया ही एक ऐसा रोग है, जिसमें कि ६१ लाख गांव के लोग इसका शिकार बनते हैं और इस कारण देश को ११० करोड़ रुपये का सालाना नुकसान होता है। वर्तमान स्वतन्त्र भारत में इस रोग को दूर करने का प्रयत्न किया जा रहा है जिसके द्वारा हमें इतना ही सालाना लाभ होगा। तीसरे, गिरे हुए समाज में ईमानदारी, पुरुषार्थ, परस्पर का सहयोग और इस प्रकार के दूसरे गुणों के विकास के लिये

कोई उत्साह नहीं होता क्योंकि गिरे हुये समाज के लोगों में स्वार्थ की मात्रा अधिक होती है और लोग अपने नीजि लाभ के लिये भ्रष्टाचार और बेईमानी के द्वारा धन एकत्रित करना बुरा नहीं समझते। ईमानदार आदमी को बेवकूफ समझते हैं और पाखण्डियों का बोल बाला रहता है और वह परम्परा के रीति-रिवाज और संस्थाओं में भी परिवर्तन लाने के विरोध में होते हैं। इस प्रकार समाज की उन्नति रुकी रहती है। चौथे, गिरे हुए समाज में बेकारी और निर्धनता भी अधिक मात्रा में होती है क्योंकि सब लोग मिल कर आर्थिक समस्याओं को हल करने का प्रयत्न नहीं करते। स्वार्थ की मात्रा अधिक होने के कारण लोग व्यक्तिगत रूप से धन इकट्ठा करने की अधिक कोशिश करते हैं जिसके कारण समाज में निर्धनता और बेकारी अधिक मात्रा में रहती है।

व्यक्ति का समाज पर प्रभावः—व्यक्ति का भी समाज पर बहुत प्रभाव होता है। प्रत्येक मनुष्य में गुण होते हैं। परन्तु किसी में अधिक और किसी में कम मात्रा में होते हैं। गिरे हुए समाज में भी यदि उच्चकोटि का मनुष्य उत्पन्न हो जाता है तो वह अपनी सेवा, त्याग, सहानुभूति और सत्य के द्वारा अपना प्रभाव दूसरे व्यक्तियों पर डालता है और वे गुण जो उनमें नाम मात्र के लिये थे अब उनमें भी उनका विकास होने लगता है। फिर वे गुण अधिक आदमियों में प्रचलित हो जाते हैं। और इस प्रकार से व्यक्ति के द्वारा समाज का उत्थान होता है।

इसका सबसे अच्छा उदाहरण हमारा देश भारतवर्ष है। कुछ समय पहले हमारे समाज की स्थिति बहुत गिरी हुई थी। परन्तु कुछ व्यक्ति इतनी उच्चकोटि के हमारे देश में उत्पन्न हुए जिन्होंने अपने चरित्र द्वारा अच्छे गुणों का दूसरे व्यक्तियों में विकास करके हमारे समाज का उत्थान कराया। इन व्यक्तियों में स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महात्मा गांधी बहुत प्रसिद्ध हैं। इन बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि व्यक्ति और समाज दो भिन्न

वस्तुएं नहीं हैं। यह दोनों एक ही हैं जिनका दृष्टिकोण अलग-अलग है। हर एक व्यक्ति समाज के लिये जीवित है और समाज का ध्येय व्यक्ति का सुधार है। जिन-जिन देशों में इस सिद्धान्त के अनुसार कार्य होता है वहाँ उन्नति तेजी से होती है। परन्तु हमारे देश में इसके विरुद्ध कार्य किया जाता है। हमारे यहाँ यह गलत सिद्धांन्त प्रचलित है कि व्यक्ति स्वयं के लिये है और समाज की उन्नति ईश्वर के हाथ में है।

हमारे यहाँ सफाई और देशों के मुकाबले में ज्यादा है। हम रोज सुबह मकान की सफाई करते हैं और नित्य प्रातः काल नहाते हैं। परन्तु हम मकान साफ करके अपना कूडा करकट दूसरे के मकान की तरफ फेंकते हैं और यही कारण है कि हमारे शहर की और गांव की गलियाँ दूसरे देश के शहरों और गांव की गलियों के मुकाबले में ज्यादा गन्दी हैं। हम यह नहीं विचार करते की यदि गांव या शहर का वातावरण गन्दा रहा तो बीमारियाँ फैलेगी और फिर हमारे मकान साफ क्यों न हों। हम भी उन बीमारियों के शिकार बनेंगे। विद्यार्थियों को चाहिये कि अपने मकान के साथ साथ अपने आस पास के पड़ौस की सफाई का भी ख्याल रखें तभी शहर या गांवों में बीमारियाँ कम फैलेंगी और हमारा स्वास्थ्य ठीक रहेगा। हम पहले लिख चुके है कि एक उच्चकोटि का व्यक्ति अपने चरित्र से समाज में परिवर्तन ला सकता है। इसी प्रकार से हर एक विद्यार्थी अपने-अपने गांवों में अपने चरित्र द्वारा ऊंचे आदर्श का प्रचार करे तो वह गांव में एक प्रकार का परिवर्तन ला सकता है। यह हमने सिद्ध कर दिया हैं कि समाज और व्यक्ति एक ही चीज़ है और इस पर भी अगर गांवों की स्थिति गिरी रहे तो इसमें नवयुवकों का दोष है।

प्रश्न

१. अरस्तु के इस कथन को कि "मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है" अपने विचार द्वारा पुष्ट किजिये।

उत्तर—इसको सिद्ध करने के लिये निम्न लिखित कारण हैं। (१)

बचपन की असहाय अवस्था, (२) जीवन की आवश्यक्ताओं की पूर्ती के लिये समाज का होना जरूरी है। (३) तीसरा, मनुष्य की उचित भावना का विकास (४) मनुष्य के मस्तक की कोमलता के लिये। (५) ज्ञान प्राप्ति के लिये (६) शान्ति और सुव्यवस्था के लिये (७) आर्थिक उन्नति के लिये।

२. समाज का व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है इसका संक्षेप में वर्णन करो ?

उत्तर—समाज दो प्रकार के हैं (१) उन्नतिशील समाज (२) गिरी हुई स्थिति वाला समाज। उन्नतिशील समाज में शिक्षा प्राप्त करने का पूरा २ अवसर मिलता है। दूसरे उन्नति शील समाज में ही व्यक्तियों को अपने आचार विचार सुधारने का अवसर मिलता है। तीसरे अच्छे समाज में व्यक्ति को रोगों के शिकार बनने की सम्भावना कम रहती है. चौथे उन्नतिशील समाज में बेकारी, निर्धनता नहीं पनप सकती हैं। गिरी हुई समाज में व्यक्ति के गुणों का विकास नहीं हो सकता, दूसरे गिरी हुई समाज में व्यक्ति को अपने आचार विचार सुधारने का कोई अवसर नहीं मिलता। गिरी हुई समाज में व्यक्ति रोगों का शिकार बनता है और चौथे गिरी हुई समाज में बेकारी, निर्धनता, बीमारी अधिक होती है। पाँचवां, विद्या का प्रचार वैज्ञानिक दृष्टिकोण से न होने के कारण लोग पुराने रीति रिवाज जिनका कि महत्व कम हो चुका है और जो कि समाज में बाधक हैं उन्हीं के पालन करने पर जोर देते हैं।

Questions

1. Society and individual are one and the same thing looked at from different points of view. Explain and discuss.
2. What do you mean by Society? What is the object of Society? How does the Society affect individual living in it?

छठा अध्याय

धर्म और नागरिक शास्त्र का सम्बन्ध

Religion as a factor in Social life

धर्म शास्त्र की परिभाषाः- श्री के. एम. मुन्शी ने धर्म का वर्णन करते हुए लिखा है कि भारतवर्ष के धर्म में वह सब गुण सम्मिलत हैं जो कि मनुष्यों के चरित्र सुधारने के लिये आवश्यक है उसके नैतिक स्तर को ऊंचा उठाते व दृढ़ करते हैं और ईश्वर में विश्वास उत्पन्न करते हैं। आगे चल कर उन्होंने लिखा है कि ईश्वर में अधिक विश्वास होने पर व्यक्ति सत्यवादी और उत्तम पुरुष हो जाता है, उसका जीवन सुन्दर बन जाता है, उसमें निर्भयता आजाती है और मस्तिष्क स्थिर हो जाता है और फिर उसको सुख दुख एक समान प्रतीत होते हैं। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि धर्म हमको यह ज्ञान देता है कि मनुष्य किस प्रकार से अपनी आत्मा की उन्नति करते हुए परमात्मा को प्राप्त कर ले।

नागरिक शास्त्र में व्यक्ति और राज्य का अध्ययन होता है। नागरिक शास्त्र का ध्येय एक आदर्श समाज की स्थापना करना है जिसमें सब लोग सुख-शान्ति, स्वतन्त्रता और परस्पर के सहयोग के साथ रहें। यह तभी सम्भव है जब कि व्यक्ति का चरित्र उच्च कोटि का हो। यदि धर्म वास्तव में नागरिक के चरित्र को ऊंचा उठाता है तो यह अवश्य नागरिक शास्त्र का सहायक है परन्तु इतिहास और मनुष्य जाति का अनुभव बिल्कुल इसके विपरीत है।

भिन्न भिन्न प्रकार के मार्गः—आत्मा और परमात्मा के ज्ञान के लिये भिन्न २ धर्म शास्त्रों में भिन्न २ प्रकार के मार्ग बतलाये हैं। ज्ञान वाले पुरुष के लिये सब मार्ग समान है, परन्तु ऐसे ज्ञान वाले पुरुष कम हैं और अज्ञानी मनुष्य अधिक संख्या में है जो व्यक्ति जिस धर्म का पालन करता है वह उस ही धर्म के शास्त्र के बताये मार्ग की प्रशंसा करता है और दूसरे धर्म शास्त्र वालों ने जो रास्ते बतलाये

हैं उनकी निन्दा करता है और इस प्रकार नागरिक जीवन में धर्म के कारण भेद भाव उत्पन्न होते हैं।

साम्प्रदायिकता:—अपने धर्म की प्रशंसा करना और दूसरे के धर्मों की निन्दा को साम्प्रदायिकता कहते हैं जब यह भावना लोगों में अधिक मात्रा में प्रचलित हो जाती है तो लोग अपने धर्म वालों को सच्चा, ईमानदार और ईश्वर भक्त मनुष्य समझने लगते हैं और दूसरे धर्म वालों को दुष्ट समझते हैं। इस प्रकार साम्प्रदायिकता मनुष्य को चार दीवारी में बन्द कर देती है फिर वह देश की उन्नति के लिये हानिकारक सिद्ध होती है।

रीति रिवाज:—हर एक धर्म में भिन्न २ प्रकार के रीति रिवाज होते हैं। ये रीति रिवाज वास्तव में धर्म के अंग नहीं हैं परन्तु अज्ञानता के कारण लोग इन रीति रिवाजों को धर्म का एक अंग समझने लगे हैं और जब समय व्यतीत होने पर इनमें परिवर्तन लाना आवश्यक होता है तो अज्ञानता के कारण लोग इसका विरोध करते हैं और इस कारण समाज की उन्नति रुक जाती है।

धर्म का अनुचित प्रयोग:—धर्म ने प्रारम्भ में राज्य की नींव दृढ़ करने में बहुत सहायता दी और धर्म के आधार पर लोग कानून का पालन करते रहे। जब कि समाज में कुछ व्यक्ति धनाढ्य हो गये और अधिक संख्या में लोग निर्धन रहे तो इस स्थिति को सिद्ध करने के लिये उन्होंने धर्म की सहायता ली और उन्होंने इसको प्रकृति का नियम बतलाया। कुछ लोगों ने भाग्य के आधार पर इसको सिद्ध करने की कोशिश की। इस प्रकार वर्तमान समाज जो कि असमानता पर निर्भर है उसकी नींव दृढ़ हुई, परन्तु यह गलत नीति है।

धर्म का संकीर्ण दृष्टिकोण:—हर एक धर्म में कुछ न कुछ सिद्धान्त और रीति रिवाज ऐसे होते हैं जो उस धर्म के लोगों को ही लागू होते हैं और दूसरे लोग उनको स्वीकार नहीं करते। इब्राहीम लिंकन ने कहा था कि मेरा किसी भी धर्म या मजहब में भरोसा नहीं

है क्योंकि हर एक धर्म किसी न किसी हद तक मनुष्य के दृष्टिकोण को छोटा बनाता है। उन्होंने कहा कि मैं केवल उसी धर्म को स्वीकार करने को तैयार हूँ जिसमें कि केवल एक सिद्धान्त हो, मनुष्य को मनुष्य जाति से प्रेम करना आवश्यक है। यही विचार एक हिन्दी के कवि ने इस प्रकार प्रकट करे हैं:—

पोथी पढ़ २ जग मुआ, पंडित हुआ न कोय।
ढाई अक्षर जो प्रेम के पढ़े सो पंडित होय॥

धर्म का व्यक्तिगत दृष्टिकोण:—धर्म मनुष्य की स्वयं की पवित्रता घर की सफाई और घर के बर्तन इत्यादि को भी साफ सुथरा रखने की अवश्य शिक्षा देता है परन्तु यह व्यक्तिगत है, वैज्ञानिक नहीं नागरिक शास्त्र हमको यह पाठ पढ़ाता कि व्यक्ति का जीवन समाज पर निर्भर है, यदि किसी गांव या नगर में कुछ परिवार सफाई के नियमों का पालन करते हुए जीवन व्यतीत कर रहे हों उस पर भी यदि गांव या नगर में कोई भी गंदा स्थान हुआ तो वहां से किटाणु पैदा होंगे और फिर तमाम गांव या नगर में बीमारी फैल जायगी। बीमारियों से बचने के लिये यह आवश्यक है कि नगर या गांव में कोई भी गंदा स्थान न हो, इस प्रकार नागरिक शास्त्र का दृष्टिकोण धर्म के मुकाबले में अधिक वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर है। द्वितीय धर्म का अधिक जोर दान पर है।

(Ashirvatham) लिखते हैं कि हमारे देश भारत के नागरिक दान या खैरात देने में हिचकते नहीं, परन्तु उनकी इस भावना को वैज्ञानिक रूप से प्रयोग करने की शिक्षा नहीं दी गई है। यदि हम किसी भिखारी को कुछ दान देवें तो इससे हमारे दिल को शान्ति पहुचती है और हमें यह तसल्ली होती है कि हमने अपने भविष्य के लिये कुछ लाभदायक कार्य किया है, परन्तु हममें यह विचार उत्पन्न नहीं होता है कि इस प्रकार की अन्धाधुन्द दान से समाज की बुराइयां

दूर नहीं होतीं बल्कि अधिक जटिल हो जाती हैं। नागरिक शास्त्र हमको वैज्ञानिक तौर पर दान पुन्य करने पर जोर देता है। हमको भिन्न २ प्रकार के संघ खोलने चाहिये जिसके द्वारा निर्धन लोगों को आर्थिक सहायता पहुँचे और साथ २ उनको कोई काम भी सिखलाया जाय, ताकि भविष्य में वह फिर अपने पैरों पर खड़े हो जाये और इस प्रकार नागरिक शास्त्र का दृष्टिकोण धर्म के दृष्टिकोण से अधिक महत्व पूर्ण है।

इन सब बातों से सिद्ध हो जाता है कि धर्म कई प्रकार से वर्तमान स्थिति में समाज की उन्नति में बाधक सिद्ध हुआ है। युरुप के लोगों को भी इस बात का अनुभव करना पड़ा और हिन्दुस्तान को वर्तमान स्थति में इन बातों का अनुभव हुआ कि धर्म के नाम पर चिल्लाना हनिकारक है लाभदायक नहीं।

धर्म की वास्तविकता:—महात्मा गांधी का धर्म पर विश्वास अधिक था उन्होंने समस्त धर्मों के मूल सिद्धांतों पर जोर दिया है। गांधीजी के अहिंसात्मक समाज में सब धर्मों के लिये आदर है क्योंकि ऐसे समाज का सिद्धान्त यह है कि समस्त धर्मों में विश्वास करो। वह सब धर्मों का एक ही मंजिल पर पहुंचने के भिन्न २ मार्ग बताते हैं, प्रत्येक को अपने मार्ग से जाने का अधिकार है। यदि कोई सत्य अहिंसा पर स्थापित रह कर निर्भयता पूर्वक कार्य कर रहा है तो वह अपनी भूल स्वयं ही सुधार लेगा और मंजिल पर पहुँच जायगा। महत्मा गांधी ने वर्तयान धर्मों की सच्चाई को लोगों के सामने प्रकाशित किया। किसी भी धर्म का मनुष्य क्यों न हो यदि वह इन सिद्धान्तों पर चलेगा तो वह अपने धर्म का सच्चा प्रेमी बन जायगा और फिर न भिन्न २ धर्मों के व्यक्ति परस्पर लड़ेंगे और न जातियों को लड़ने की आवश्यकता होगी और समाज की उन्नति बनी रहेगी। यह मार्ग हमको अकबर और अशोक ने भी दिखाया था, और महात्मा गाँधी ने इस मार्ग को फिर प्रकाशित किया यह मार्ग इतिहास के

अनुभव की कसौटी पर सफलता प्राप्त कर चुका है और यदि हम इस मार्ग पर चलें तो धर्म हमको हमारे नागरिक जीवन में उन्नति करने में सहायक होगा।

रीति रिवाज और नागरिक शास्त्रः—स्वामी विवेकानन्द जो कि किसी हालत में भी हिन्दुस्तान की संस्कृति सभ्यता और धर्म के विरोधी नहीं कहे जा सकते उन्होंने भी धर्म के महत्व को सर्व व्यापक कर लेने पर आलोचना की और रीति रिवाज को धर्म में सम्मिलित कर लेने का खण्डन किया वे लिखते हैं कि वर्ण व्यवस्था जो अपनी शुरू की शक्ल में जरूरी और वाच्छनीय थी और जिसका उद्देश्य व्यक्तित्व और आजादी को बढ़ाना था बेहद गिर गई और अपने उद्देश्य से ठीक उलटी चलने लगी और इसने आम जनता को कुचला। वर्ण व्यवस्था एक ढंग का सामाजिक संगठन था जिसको धर्म से अलग रखना चाहिये। सामाजिक संगठन में तो समय के साथ परिवर्तन होना चाहिये। विवेकानन्द ने कर्म काण्ड की बेमानी गूढ़ विवेचना की और खास तौर से ऊंचे वर्ण के लोगों की छूआछूत की बहुत जोरों से निन्दा की! "हमारा धर्म रसोई घर में है, हमारा ईश्वर खाना बनाने का बर्तन है और हमारा धर्म है मुझे न छूओं मैं पवित्र हूँ।" महात्मा गांधी का हिन्दू धर्मः-उन्होंने कहा कि मैं अपने आपको सनातनी हिन्दू मानता हूं तथा मुझे वर्णाश्रम में विश्वास है। मुझे गौ रक्षा में भी विश्वास है। लेकिन मैं यह मानने को उद्यत नहीं हूँ कि एक जाति का मनुष्य अगर अन्य जाति के पुरुष के साथ भोजन करे तो वह धर्म भ्रष्ट हो जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र सभी को समान विद्या प्राप्त करने का अधिकार है। यदि हिन्दू धर्म इसी प्रकार के विधि निषेधों को स्थान देगा तो नष्ट हो जायगा।

हिन्दू धर्म किसी व्यक्ति को जंजीरों में नहीं जकड़ता। वह विश्व के सभी धर्मों का आदर करता है और उसकी अच्छी बातों को सर्वदा ग्रहण करने के लिए प्रस्तुत रहता है। उसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति

अपने विश्वास के अनुसार ईश्वर की पूजा कर सकता है। इस प्रकार हिन्दू धर्म सब धर्मों से शान्ति पूर्वक रहने की चेष्टा करता है। यही कारण है कि मैं कभी छूत छात को मानने वाला नहीं हुआ।

नागरिक शास्त्र और साम्प्रदायिकता:—नागरिक शास्त्र साम्प्रदायिकता और हर प्रकार के पक्षपात का बहुत विरोध करता है नागरिक शास्त्र का यह कहना है कि मनुष्य २ सब एक है और भिन्न २ धर्म पालन करने के कारण उन पर किसी प्रकार का भेद भाव करना अनुचित है। सब लोगों को अपने गुणों का विकास करने के लिये एक समान बराबर का अवसर देना चाहिये ताकि वो योग्यता प्राप्त करके अपनी अपनी योग्यता के अनुसार मनुष्य जाति की सेवा कर सके और फिर इस प्रकार समाज की उन्नति हो। लुई फिशर (Louis Fischer) साहब लिखते है। Religious Gandhi wanted a secular state while nonreligious Jinnah wanted an Islamic state. गाँधी जो कि धार्मिक था वो एक बे पक्षपात का राज्य स्थापित करना चाहता था और जिन्ना जो कि धार्मिक पुरुष नहीं था वो एक धार्मिक राज्य स्थापित करने के पक्ष में था जिसमें कि बहुमत दल के लोगों के धर्म का बोलबाला हो। गांधी वास्तव में धार्मिक पुरुष था जिसने वैज्ञानिक रूप से धर्म को समझा था और इस दृष्टिकोण से धर्म और नागरिक शास्त्र में कोई भेद भाव नहीं था। धर्म आत्मा और परमात्मा के बारे में ज्ञान देता है। जो कि व्यक्तिगत है और इसमें भेद भाव हो सकते हैं परन्तु समाज को किसी के धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं। समाज को चाहिये कि हर एक व्यक्ति को धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार दे दें, और इसीलिये वो Secular state के पक्ष में था। महात्मा गांधी का कहना था कि सच्चे ईमानदार और ईश्वर भक्त मनुष्य हर धर्म और हर जाति में मिलते हैं इसी तरह दुष्ट व्यक्ति की कोई जाति नहीं होती उसका कोई धर्म नहीं होता। वे हर समाज और हर धर्म में पाये जाते हैं। परन्तु लोग अपने पागल पन के कारण सत्य को एक विशेष धर्म

की चार दिवारी में बन्द कर लेते हैं। नागरिक शास्त्र और वास्तविक धर्म दोनों इस बात की शिक्षा देते है कि हमें हर धर्म के मनुष्य के साथ अच्छा बर्ताव करना चाहिये, तुलसीदासजी ने लिखा है:—

तुलसी या संसार में सबसे मिलिये धाय।
क्या जाने किस रुप में नारायण मिल जाय॥
तुलसी या संसर में भांत भांत के लोग।
हिलिये मिलिये प्रेम से नदी नाम संयोग॥

नागरिक शास्त्र तथा वास्तविक धर्म दोनों एक ही पाठ पढ़ाते हैं परन्तु संकुचित दृष्टिकोण के कारण धर्म कभी २ समाज के लिये हानि कारक सिद्ध होता है श्रीमान् जिन्ना साहब धार्मिक पुरुष नहीं थे परन्तु उन्होंने अपने जीवन में धर्म को आगे रखा यह वास्तव में साम्प्रदायिकता थी, धर्म नहीं और इसी कारण उन्होंने इस्लामिक राज्य स्थापित किया जिसकी कि नींव अभी तक दृढ़ नहीं हुई है। इतिहास से यह सिद्ध हो गया है कि धर्म का गलत प्रयोग हो सकता है और कई प्रकार के गलत विचार लोगों में प्रचिलित हो सकते हैं। इसी कारण अधिकतर लोगों का विचार यही है कि धर्म और नागरिक शास्त्र अलग अलग चीजें है और एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं।

धर्म के अनुचित प्रयोग का प्रभाव:—कम्युनिस्ट और अनार किस्ट विचार धारा के लोग धर्म के बहुत विरोध में हैं। इसलिये नहीं कि वह यह विचार करते हैं कि परमात्मा कोई चीज़ नहीं है बल्कि इस-लिये कि उनका यह कहना है कि धर्म एक प्रकार का पाखण्ड बन गया है जिसमें कि आत्मा और परमात्मा के बारे में कुछ ज्ञान नहीं दिया जाता है बल्कि इसमें गलत विचारों के द्वारा वर्तमान असमानता के आधार पर बनी हुई समाज को स्थापित रखने के लिये धर्म के द्वारा गलत शिक्षा लोगों में दी जाती है। इसलिये उनका कहना है कि यदि असमानता मिटानी है तो धर्म को मिटाना आवश्यक होगा। वर्तमान

प्रकार के धर्म और मजहब होते हुए असमानता नहीं मिट सकती। इसलिये उनके कार्य क्रम में धर्म के अन्त करने पर विशेष जोर दिया गया है। रूस में गिरजा, मस्जिद अवश्य है, परन्तु राजनैतिक क्षेत्र में धर्म का कुछ भी महत्व नहीं है।

नागरिक शास्त्र का वैज्ञानिक तथा सामाजिक दृष्टिकोण:- नागरिक शास्त्र वैज्ञानिक रूप से कार्य करने को कहता है। धर्म और नागरिक शास्त्र दोनों सफाई और शुद्धताई की ओर जोर देते हैं, परन्तु नागरिक शास्त्र यह कहता है कि सफाई के लिये तुम्हारे नगर या गांव में कोई भी गन्दी या अशुद्ध जगह नहीं होनी चाहिये, तभी तुम्हारे स्वयं की सफाई तुम्हारे लिये लाभदायक होगी। इस प्रकार नागरिक शास्त्र मनुष्य का दृष्टिकोण बढ़ाता है और समाज की ओर ध्यान दिलाता है। इसी प्रकार दान के बारे में भी वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करता है। निर्धनता के बारे में नागरिक शास्त्र का यह कहना है कि यह प्रकृति की बनाई हुई चीज नहीं है, बल्कि मनुष्य के कार्य का ही परिणाम है, यदि हम चाहें और मिल जुल कर कार्य करें तो हम उसको अवश्य मिटा सकते हैं।

श्री जादूनाथ सरकार का कथन:— हमारे राज्य के प्रसिद्ध इतिहासकार श्री जादूनाथ सरकार ने आज से तीस वर्ष पहले अपनी पुस्तक, औरङ्गजेब के इतिहास, में लिखा है कि यदि भविष्य में जब कभी भारतवर्ष एक स्वतन्त्र राज्य बनेगा और उसको अपने देश की रक्षा करना, लोगों की आर्थिक स्थिति सुधारना, और अपने राज्य में शान्ति स्थापित रखने की जिम्मेदारी उस पर आवेगी तो उसके लिये उस समय यह आवश्यक होगा कि दोनों धर्म, हिन्दू धर्म व इस्लाम धर्म दोनों को मर कर फिर से जीवित होना होगा। इन दोनों धर्मों को अनुभव और विज्ञान की कसौटी में तपा कर फिर से जीवित करना होगा। श्री जादूनाथ सरकार का इससे यह अर्थ था कि हमें अपने धर्म का विस्तार सीमित करना होगा न वह सिर्फ केवल व्यक्ति को ईश्वर की प्राप्ति का एक मार्ग होगा, परन्तु राजनैतिक क्षेत्र से और समाजिक सुधार से उसका किसी

प्रकार से सम्बन्ध नहीं होना चाहिये, क्योंकि आगे चल कर उन्होंने लिखा है कि कमाल पाशा ने धर्म और राजनैतिक क्षेत्र को अलग करके एक सिक्युलर स्टेट की स्थापना की है। इसी प्रकार से हमें भी एक सिक्युलर स्टेट स्थापित करनी होगी।

If India is ever to become a nation, to keep peace within her territory, to guard her frontiers and to develop her economic resources, then both Hinduism and Islam must die and be born again. Each of these religions must be rejuvenated under the sway of science and reason. Kamal Pashah has succeeded in establishing a Secular State in Turkey. We shall have to do the same.

सिक्युलर स्टेट का अर्थ:—सिक्युलर स्टेट एक ऐसा राज्य नहीं है जिस में कि ईश्वर पर कोई भरोसा या महत्व नहीं हो। इस राज्य का ध्येय पृथ्वी पर स्वर्ग स्थापित करना है। इस राज्य में हर एक व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार अपना धर्म पालन करने का पूरा पूरा अधिकार है। इस राज्य में हर एक व्यक्ति के पास इतना ही धन होगा, जितना कि उसको अपनी आवश्यकताओं की पूर्ती के लिये आवश्यक हो और इस राज्य में कोई निर्धन व्यक्ति न हो। इस राज्य में पाखण्ड के बजाय वास्तविक रूप में ईश्वर की पूजा होगी और प्रार्थना के द्वारा हम अपने संसारिक व्यवहार में सेवा, प्रेम, सत्य और ईमानदारी का प्रयोग करने का प्रयत्न करेंगे और हमारी यह कोशिश होगी कि हमें यह ज्ञान प्राप्त हो जाये कि वह सब में है सब उसमें हैं।

A Secular State is not a Godless state. It is the Kingdom of God on earth where every man is free to worship Him in his own way; where none possesses more than he needs and none is denied those needs; where God is worshipped and the spirit is invoked through prayer, service and love; where every effort is inspired by an earnest desire to see all in Him and Him in all. (K. M. Munshi's letter)
No. 49 to Bhartiya, Vidya Bhawan Bombay.

धर्म और नागरिक शास्त्रः—यह दोनों मनुष्य के चरित्र सुधारने पर जोर देते हैं, परन्तु हम लोग पाखण्ड में फंस कर वास्तविक धर्म से बहुत दूर हो गये है। हमने मन्दिर जाना, घंटा घड़ियाल बजाना, तिलक लगाना, प्रार्थना करना इन बातों पर धर्म को सीमित कर दिया है और अपने संसारिक व्यवहार को सुधारने का कोई प्रयत्य नहीं करते। यह धर्म नहीं पाखण्ड है और इन्हीं बातों से धर्म का महत्व जाता रहा है। हमारे प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरु इस प्रकार के धर्म के विरोध में हैं, वह मन्दिरों में जाकर न घन्टा घड़ियाल बजाते हैं और न तिलक लगाते हैं, परन्तु वह संसारिक व्यवहार में सत्य, अहिंसा, और ईमानदारी का पूरी तौर से पालन करते हैं। वे राजनैतिक उलझनों में फंस कर सत्य के मार्ग से दूर नहीं होते और भूली भटकी दुनियां को भी इस रास्ते पर लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे दिन रात निर्धन लोगों की स्थिति सुधारने का प्रयत्न कर रहे हैं, हमको भी हमारे प्रधान मन्त्री की तरह अपने संसारिक व्यवहार में अच्छा आदर्श रखना चाहिये, इसी से समाज की उन्नति होगी। महात्मा गांधीजी ने लक्ष्य पर पहुँचने के लिये ग्यारह सीढ़ियां बतलाई हैं वे निम्न लिखित है।

अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य असंग्रह।
शरीरश्रय अस्वाद सर्वत्र भय वर्जन॥
सर्व धर्मी समानत्व स्वदेशी स्पर्श भावना।
ही एकादशी सेवावी नम्रत्वे व्रत निश्चय॥

अर्थात् अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह, शरीरश्रय, अस्वाद, निर्भयता, सब धर्मों की समानता, स्वदेशी और अस्पृश्यता निवारण, इन ग्यारहों व्रतों का सेवन नम्रता पूर्वक निश्चय के साथ करना चाहिये।

नये प्रकार की वैज्ञानिक संस्थायें:—विज्ञान के प्रचार के कारण यदि धर्म को वैज्ञानिक रूप से समझाया जाय तब ही उससे पढ़े लिखे लोगों को लाभ हो सकता है। इस प्रकार की सबसे प्रसिद्ध संस्था श्री अरविंद बोश का पांडूचेरी का आश्रम है। जो कि एक विश्व

धर्म की वास्तविकता

वर्तमान समय में समाज का ढांचा बदल रहा है। धार्मिक क्षेत्र में भी परिवर्तन हो रहा है। धर्म के आधार पर अब हाथ में माला लिये रहना या एक धुँधली और न प्राप्त होने वाली दुनियां के स्वप्न में खोये हुए रहने की प्रथा का महत्व कम हो रहा है। मन्दिर में जाना, तिलक लगाना, घंटे घड़ियाल बजाना या पांच वक्त नमाज पढ़ना, रोजे रखना और इस प्रकार की अन्य सिद्धान्तिक बातें करना, परन्तु सांसारिक व्यवहार में सत्य को भूल जाना, आपस के लेन देन में भ्रष्टाचार करना, न्याय की अपेक्षा पक्षपात करना, अपने उत्तरदायित्व को न समझना, मनुष्य जाति से प्रेम न करना, छूत छात और छोटे बड़े के आधार पर भेद करना, इस प्रकार का पाखण्ड का जाल जो धर्म के नाम पर समाज में बिछा हुआ है, इस पाखण्ड को अन्त करने ही से नये भारत की नींव दृढ़ हो सकती है।

ईश्वर मन्दिर, मस्जिद, गिरजा और गुरुद्वारों में बन्द नहीं है वो तो सर्व व्यापक है, अपने सांसारिक व्यवहार में अपने हृदय में ईश्वर को सदा याद रखना और सत्य के आधार पर ही कार्य करना ही धर्म है।

अब धर्म धरती की ओर आरहा है, उसने समाज सेवा का रूप ग्रहण कर लिया है। जिन्दगी की कला और रहन

सहन के साधनों के उन्नति के उपाय सोचे जा रहे हैं। सामूहिक विकास योजनाएँ नदी घाटी योजनाएँ नये भारत के आधुनिक तीर्थ स्थान बन गये हैं। नदी घाटी योजनाओं में काम करते समय जो श्रमिक मृत्यु को प्राप्त हुए हैं उनको वर्तमान भारत ने हुतात्माओं का पद दिया है जिनके लिये स्मृतियां बनाई जा रही हैं। लेखक लोग अपनी पुस्तकों को उनकी पवित्र आत्माओं की स्मृति में सादर समर्पित कर रहे हैं। जो कि भविष्य की भारत की सन्तान को धर्म का एक ठोस मार्ग बतला रहे हैं।

काम, क्रोध, लोभ, मोह और तृष्णा की मात्रा को कम करना, भिन्नता होते हुए भी एकता की झलक सबमें देखना, निर्धनता, भूख, बेकारी, बीमारी, अज्ञानता और मूर्खता को मिल जुल कर रचनात्मक कार्यों से दूर करने का प्रयत्न करना, सरकार को इन कार्यों में सहयोग देना, सरकार को आर्थिक सहायता देकर राष्ट्रिय कोष को समृद्ध करना---यही सब बातें धर्म हैं इन्हीं से आत्मिक ज्ञान और आत्मिक शक्ति प्राप्त होती है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण का विकास होता है। मृत्यु के पश्चात मोक्ष प्राप्त होता है, संसार स्वर्ग का रूप ग्रहण कर लेता है जिसमें सारे लोग मिल जुल कर रहेंगे। अब धर्म की प्रथम शिक्षा देने की कोई आवश्यकता नहीं है। नागरिक शास्त्र ने ही धर्म का रूप ग्रहण कर लिया है और व्यक्ति को मोक्ष प्राप्त करने का दृढ़ मार्ग बतला रहा है।

विद्यालय का रूप ग्रहण कर रहा है। इसी प्रकार दूसरी संस्था थीयोसोफिकल सोसायटी अडियार मद्रास में है। तीसरी संस्था रामकृष्ण मिशन है और चौथी महा ऋषि रमन का आश्रम अरुणा चाला, त्रिवुनामली भारत के दक्षिण में हैं। परन्तु हमें दुःख से लिखना पड़ता है कि महर्षि रमन जो कि भारत के उच्चकोटि के आध्यात्मिक पुरुष थे उनका चार साल पहले स्वर्गवास हो चुका और पांचवें ऋषि केश के पास एक नया आश्रम स्थापित हुआ है। इन सब संस्थाओं की अलग अलग पुस्तकें हैं और इनकी महावारी पत्रिकाएं निकलती हैं। तुम्हें नहीं मालूम है कि विदेशी लोग इन संस्थाओं के सदस्य हैं और हर साल अधिक संख्या में विदेशी लोग इनके वार्षिक अधिवेशन में अध्यात्मिक उन्नति ग्रहण करने आते हैं। हममें से वे लोग जिनमें धार्मिक रुची है उनको इन संस्थाओं के द्वारा उन्नति करनी चाहिये वर्तमान साधु और महात्माओं से कोई विशेष लाभ प्राप्त नहीं होता।

सारांश—धर्म, आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध का ज्ञान देता है। धर्म के विरोध में बातें:— (१) भिन्न २ प्रकार के रास्तों के द्वारा आपस में भेद-भाव; (२) लोग रीति-रिवाज को धर्म समझने लगते हैं; (३) साम्प्रदायिकता। (४) धर्म का अनुचित प्रयोग। (५) धर्म का संकीर्ण दृष्टिकोण। (६) धर्म का व्यक्तिगत दृष्टिकोण। धर्म और नागरिक शास्त्र की तुलना। (१) धर्म की वास्तविकता; (२) रीति रिवाज का महत्व। साम्प्रदायिकता से नागरिक में संकीर्ण दृष्टिकोण। धर्म के अनुचित प्रयोग का प्रभाव। नागरिक शास्त्र का वैज्ञानिक दृष्टिकोण। दान पुण्य का गलत दृष्टिकोण। स्वतन्त्र भारत का नया दृष्टिकोण। दान पुण्य का वैज्ञानिक दृष्टिकोण। धर्म का ऐतिहासिक महत्व। स्वतन्त्र भारत की नींव और नागरिकों के कर्त्तव्य।

Question.

1. Explain the influnence of religion on civic life, with particular reference to Indian conditions. has it been an help or an hindrance to civic life ?

सातवां अध्याय

राज्य, सरकार, राष्ट्र और राष्ट्रीयता

राज्य कहलाने के लिये निम्न लिखित चार बातें आवश्यक है।

१. लोगों का समूह अथवा जनसंघ होना।

२. भूमि याने निश्चित इलाका जिसमें लोग रहते हों।

३. सर्व भौमिकता या राज्य सत्ता।

४. शासन या सरकार का होना।

जहाँ तक पहली और दूसरी बातें है उनके लिये कुछ अधिक लिखना आवश्यक नहीं है परन्तु तीसरी और चौथी के बारे में हम संक्षेप में नीचे लिखेंगे।

राज्य की परिभाषाः—एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ "गार्नर" का मत है कि राज्य मनुष्यों का एक संघ होता है, जो किसी विशेष भूमि खण्ड पर अधिकार रखते हैं; किसी अन्य देश या राजा के आधीन नहीं होते, जिनकी अपनी सरकार होती है और जो स्वाभाविक रूप में अपने राज्य (State) के कानूनों का पालन और नियन्त्रण करते हैं। प्रोफेसर होलैंड (Holland) राज्य का अर्थ इस प्रकार लिखते हैं,—"राज्य मनुष्यों के एक बड़े समूह को कहते हैं जो पृथ्वी के किसी विशेष भाग पर अधिकार किये होता है और जिसमें वहां रहने वालों के बहुमत (Majority) या किसी विशेष संघ की इच्छा अनुसार शासन होता है।" इन सब विचारों का भावार्थ यह है कि राज्य किसी विशेष भूमि खण्ड में एक ऐसा स्वतन्त्र संगठन होता है। जिसके द्वारा मनुष्य के अधिकार और कर्तव्य नियत किये जाते हैं। राज्य शासन के कानून अच्छे सिद्धान्तों के अनुकूल बनाये जाते हैं, और राज्य निवासी इन कानूनों का पालन करते हैं।

राज्य सत्ता का अभिप्रायः—हर एक राज्य में अनेक अधिकारी होते हैं परन्तु इन सब की शक्ति समान नहीं होती। छोटे अधि-

कारी बड़े अधिकारियों की आज्ञा मानते है। जो सबसे बड़ा अधिकारी होता है उसकी आज्ञा सब मानते हैं। इसके सबसे बड़े अधिकारी को अधिराज (Sovereign) कहते हैं और उसकी अधिकार शक्ति को 'सर्वोच्च सत्ता' कहते हैं।

सर्वोच्च सत्ता का अर्थः—सर्वोच्च सत्ता ही राज्य का सबसे बड़ा और आवश्यक लक्षण है और राज्य और दूसरी संस्थाओं में भेद भाव इसी लक्षण के द्वारा होता है। सर्वोच्च सत्ता, राज्य-भूमी की सीमाओं के भीतर रहने वाले हर एक मनुष्य और हर एक संस्था से बड़ी है। दूसरे इसका अर्थ यह है कि हर एक राज्य बाहरी नियंत्रण से भी बिलकुल स्वतन्त्र है। इस प्रकार सर्वोच्च शक्ति अपने आन्तरिक और बाहरी कार्यों में तथा अधिकार में असीम है।

आस्टिन साहब ने सर्वोच्च सत्ता का वर्णन करते हुए लिखा है कि यदि एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह जो कि दूसरों को आज्ञा प्रदान करता है परन्तु वो स्वयं किसी की आज्ञा मानने के लिये बाध्य नहीं है तो वह व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अधिराज है और उस अधिराज के सम्मिलित उस समाज को सर्वोच्च सत्ता प्राप्त है।

राज्य सत्ता व सर्वोच्च सत्ता के लक्षण

सर्वोच्च सत्ता के निम्न लिखित लक्षण है।

१. अनियन्त्रिताः—अनियन्त्रिता का अर्थ ये है कि राज्य जिसमें सर्वोच्च सत्ता है, वह अन्दरुनी और विदेशी मामलों में पूरी तरह से स्वतन्त्र हो और उसके ऊपर किसी प्रकार का अन्दरुनी और बाहरी अंकुश न हो।

२. सर्वमान्यताः—क्योंकि राज्य पूर्ण रूप से स्वतन्त्र है और इस पर किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं, इस कारण राज्य में रहने वाले हर एक व्यक्ति तथा व्यक्तियों के समूह का कर्तव्य होता है कि राज्य का हुक्म जो बराबर की हैसियत से सब पर लागु है उसका पालन करें और

इस प्रकार सर्वोच्च सत्ता धारी व अधिकार सारे राज्य पर लागू होते हैं और यही सर्व मान्यता का अर्थ है।

३. अदेयता:—सर्वोच्च सत्ता का दान नहीं हो सकता। जिस प्रकार कोई मनुष्य अपनी आत्मा किसी दूसरे के शरीर में नहीं डाल सकता और जिस प्रकार के कोई पेड़ अपनी हरियाली किसी दूसरे पेड़ को नहीं दे सकता इसी प्रकार सर्वोच्य सत्ता किसी दूसरे को नहीं दी जा सकती।

४. स्थिरता:—सर्वोच्च सत्ता सर्वदा राज्य के अन्दर रहती है। यदि राजा या राष्ट्रपति की मृत्यु हो जाये तो सर्वोच्च सत्ता का अन्त नहीं होता बल्कि वह उसके पुत्राधिकारी के हाथ में आ जाती है। यह तो सरकार में नाम मात्र का परिवर्तन है और इससे राज्य की सर्वोच्च सत्ता पर कोई प्रभाव नहीं होता और सर्वोच्च सत्ता स्थिर रहती है।

५. अविभाज्यता:—इसका अर्थ ये है कि सर्वोच्च सत्ता के खण्ड नहीं किये जा सकते। यदि सर्वोच्च सत्ता को दो या दो से अधिक भागों में बांटा जाये तो उसकी सर्वोच्च सत्ता नष्ट हो जाती है जिस प्रकार एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकती उसी प्रकार एक राज्य में दो अधिराजसर्वोच्च सत्ता नहीं रह सकते। यदि राज्य की भूमी पर दो सत्ताधारी हो जायें तो वह भूमी दो भागों में बट जायगी। सरकार के कर्तव्य तो विभाजित हो सकते हैं परन्तु राज्य विभाजित नहीं किये जा सकते।

सर्वोच्च सत्ता के स्वरूप

सर्वोच्च सत्ता के निम्नलिखित चार स्वरूप है।

१. नाम मात्र की सर्वोच्च सत्ता—पार्लियामेन्टरी गवर्नमेन्ट में दो प्रकार के सर्वे सर्वा होते है। एक तो राज्य का सर्वे सर्वा जो कि राजा है जैसा कि इंगलिस्तान में है या राष्ट्रपति जैसे कि हमारे देश भारतवर्ष में है। यह नाम मात्र के सर्वोच्च सत्ताधारी होते हैं। सब

काम इनके नाम से ही होगा। कोई कानून लागू नहीं किया जा सकता है और न कोई संधि विदेशी देश से लागू की जा सकती है जब तक कि उन पर राजा या राष्ट्रपति के हस्ताक्षर न हो जायें। परन्तु इनकी निजी जिम्मेदारी कुछ नहीं है और जिम्मेदारी प्रधान मन्त्री की है जो कि सरकार का सर्वे सर्वा होता है।

२. कानूनी सर्वोच्च शक्तिः—कानूनी दृष्टिकोण से सर्वोच्च सत्ता एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के हाथ में होती है जिनको कि कानून बनाने का अधिकार होता है और जिनके बनाये हुए कानून लोग पालन करते हैं और जो कोई आदमी उनका उल्लन्घन करता है उसको न्यायालय द्वारा दण्ड दिया जाता है। कानूनी सर्वोच्च शक्ति हमेशा निश्चित मनुष्यों के पास होती है। एकात्मिक राज्य में वह एक व्यक्ति के हाथ में होती है और प्रजातन्त्र राज्य में वह व्यक्तियों के समूह के हाथ में होती है। परन्तु हर एक राज्य में इसके लिये यह आवश्यक है कि वह निश्चित आदमियों के हाथ में हो जिनको कि हम गिन सकें और राज्य की ओर से उसको कानून बनाने का अधिकार प्राप्त हो और जो कुछ वे कानून बनाये वह हर एक व्यक्ति और संस्था जो कि राज्य में हो उन सब पर लागू हों।

३. राजनैतिक सर्वोच्च सत्ताः—इसमें शक नहीं कि कानूनी दृष्टिकोण से कानूनी अधिराज राज्य में सर्वेसर्वा होता है, परन्तु इसके पीछे एक और शक्ति छुपी रहती है जिसको राजनैतिक सर्वोच्च सत्ता कहते हैं और जिसके सामने कानूनी अधिराज को झुकना होता है और उसके विरुद्ध वह कोई कार्य नहीं कर सकता। वर्तमान प्रजातन्त्र में व्यवस्थापिक सभा के हाथ में कानूनी सर्वोच्च सत्ता रहती है परन्तु व्यवस्थापिक सभा के सदस्य लोगों के चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं और एक निश्चित समय के बाद इन सब लोगों को जनता के पास फिर दुबारा प्रतिनिधि बनने के लिये लोगों से वोट लेने जाना होता है। यदि इन सदस्यों ने लोगों के इच्छा के अनुसार और समाज की भलाई के लिये कार्य किया होता है

तो लोग इनको फिर दुबारा अपना प्रतिनिधि चुनते हैं और नहीं तो वो इनके बजाय दूसरा प्रतिनिधि चुनके व्यवस्थापिक सभा में भेजते हैं। ये भय सदस्यों को जिनके कि हाथ में कानूनी सर्वोच्च सत्ता है स्वेच्छाचारी बनने से रोकती है और वह हमेशा जनता के मत के अनुसार कार्य करते हैं। इस कारण यह कहा जाता है कि राजनैतिक सर्वोच्च सत्ता लोगों के हाथ में है।

जहां तक मतदाताओं का सम्बन्ध है साधारण व्यक्ति की किसी भी विषय पर कोई विशेष स्वतन्त्र राय नहीं होती है और भिन्न २ चीजें उन पर प्रभाव डालती है। एक तो राजनैतिक दल होते हैं जिनका कि जनता पर अधिक प्रभाव होता है। दूसरे समाचार पत्र होते हैं जिनका कि व्यक्ति पर अधिक प्रभाव होता है और तीसरे प्लेट फार्म होता है। इस प्रकार राजनैतिक सर्वोच्चसत्ता के समान किसी किसी निश्चित समूह के ऊपर निर्भर नहीं कर सकते हैं। क्योंकि मतदाताओं पर भिन्न २ प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं और राजनैतिक सर्वोच्च सत्ता इन सब प्रभावों का एकत्रित नाम है।

४. सार्वजनिक सर्वोच्च सत्ताः— (पोप्युलर सोवरिन्टी) इसका अर्थ राजनैतिक स्वतन्त्रता या वैधानिक सरकार से है। इसका अर्थ ये है कि जनता के हाथ में सर्वोच्च सत्ता है। हर एक व्यक्ति को मत देने का अधिकार है। व्यक्तियों के प्रतिनिधि व्यवस्थापिका सभा के सदस्य होते हैं। कार्य कारिणी सभा या तो व्यवस्थापिका सभा पर निर्भर है जैसा कि पार्लियामेन्टरी राज्य में होता है और यदि अध्यक्षात्मक सरकार है तो राज्य का सर्वेसर्वा भी जनता द्वारा चुना हुआ होता है। सार्वजनिक सर्वोच्च सत्ता में निम्न लिखित बातें होती हैं। सरकार का ध्येय तमाम राज्य की उन्नति है न कि किसी विशेष समूह का लाभ लोगों को मत देने का अधिकार होता है और केन्द्रीय और स्थाई सरकार एक निश्चित समय के लिये होती है और उसके पश्चात उसकी फिर लोगों से मत के द्वारा स्वीकृति लेना आवश्यक होता है।

जनमत के प्रचार के लिये लोगों को कानूनी सहुलियतें होती हैं। लोगों को भाषण देने और सभाएं एकत्रित करने की स्वतन्त्रता प्राप्त होती है। सरकार मनमानी राज्य नहीं कर सकती है। बल्कि उसको भी कानून के अनुसार कार्य करना होता है और इस प्रकार सरकार पर भी अंकुश होता है।

सरकार की परिभाषाः—राज्य की परिभाषा करते हुए हमने यह बतलाया है कि राज्य जनता का एक राजनैतिक संगठित संघ होता है। और उसका उद्देश्य जनता की राजनैतिक, मानसिक, समाजिक, आध्यात्मिक, और आर्थिक उन्नति करना है। इन साधनों के प्रयोग के लिये राज्य एक कार्यकारिणी समिति बनाता है, जो राज्य की उद्देश्यों की पूर्ती के लिये उत्तरदायीत्व होती है। इस कार्यकारिणी समिति को सरकार कहते हैं।

सरकार और राज्य में भेदभावः—(१) राज्य बड़ा है और सरकार छोटी है सरकार राज्य की एक भाग मात्र है। राज्य स्वामी है और सरकार उसके अधीन कार्यकर्त्ताओं के समान होती है। राज्य का सारा प्रबन्ध सरकार द्वारा किया जाता है। (२) राज्य में देश की सारी जनसंख्या सम्मिलित होती है। परन्तु सरकार में नहीं। सरकार का अर्थ उन कर्मचारियों से है जो कि राज्य का उद्देश्य प्राप्त करने के लिये जनता की सेवा करते हैं। (३) राज्य एक स्थाई संघ होता है और उसके खिलाफ विरोध करने का किसी को अधिकार नहीं होता है, परन्तु सरकार समय २ पर बदलती रहती हैं। सरकार में परिवर्तन का यह अर्थ नहीं है कि राज्य बदल गया। व्यक्ति को सरकार का वैधानिक रूप से नयी सरकार स्थापित करने का पूरा पूरा अधिकार है। (४) राज्य एक प्रकार की ख्याली चीज़ है, परन्तु सरकार एक वास्तविक वस्तु है जिसमें समय समय पर स्थिति के अनुसार परिवर्तन होते रहते हैं। (५) सर्वोच्च सत्ता राज्य के हाथ में है और राज्य अपना ध्येय स्थापित करने के लिये यह सत्ता सरकार

को सौंप देता है जो कि राज्य के आधीन है और जब कभी राज्य चाहे यह सत्ता सरकार से लेकर दूसरे को सौंप देती है।

Nation **राष्ट्र:**—राष्ट्र लोगों के उस समूह को कहते हैं जो किन्हीं विशेषताओं के कारण आपस में इतने घुल मिल जाते हैं कि जब वह मिल जुल कर एक स्थान पर एकत्रित रहे तो वे प्रसन्न रहते हैं। यदि उनको अलग २ भागों में विभाजित करके छोटे छोटे स्वतन्त्र राज्य में बांट दिया जाय तो उनमें अशान्ति उत्पन्न हो जाती है और जब तक वह एकत्रित होकर एक ही राज्य में न रहें उनमें प्रसन्नता नहीं आती है और वह इस बात को सहन नहीं कर सकते कि दूसरी जाति के लोग जिनसे कि उनका कुछ सम्बन्ध नहीं है उन पर आकर अपना आधिपत्य जमाये और राज्य करे और जब तक कि उस इलाके में उनका अपना राज्य नहीं होता है वह प्रसन्न नहीं रहते।

राष्ट्र के लिये आवश्यक विशेषतायें:—समान भाषा, समान धर्म, एक नसल से उत्पत्ति, एक समान रीति रिवाज एक संस्कृति, एक सरकार एक साहित्य और एक देश में रहना, यह विशेषतायें हैं जिसके कारण लोगों का समूह बन जाता है।

महत्व पूर्ण विशेषताओं की विवेचना:—उपरोक्त लिखी हुई विशेषताओं में से कोई न कोई विशेषता होने पर ही मनुष्य का समूह राष्ट्र बन जाता है, परन्तु हम निश्चित तौर पर यह नहीं कह सकते है कि किस खास विशेषता के कारण ही मनुष्यों का समूह राष्ट्र बन जाता है। कुछ समय पहले कुछ लोगों का विचार था कि राष्ट्र के लिये लोगों में एक ही धर्म, एक ही भाषा और एक ही नसल से उत्पन्न होना आवश्यक है, परन्तु यह विचार अब गलत सिद्ध हुआ है। स्विटज़रलैन्ड में दो धर्म है। तीन भाषाओं का लोग प्रयोग करते हैं और उनकी उत्पत्ति दो नस्लों से हुई है। इस पर भी स्विटज़रलैंड एक शक्तिशाली राष्ट्र है, जिसके कि लोग अलग स्वतन्त्र राज्य में

ही रहना पसन्द करते हैं। इसी प्रकार से संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में युरुप के भिन्न २ नसलों के लोग जाकर बस गये हैं और यह लोग अपने रहने के स्थान को ही अपना देश मानते हैं और अमरीका के समस्त रहने वाले, एक राष्ट्र हैं। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि लोगों का समूह राष्ट्र तब ही बनता है जब कि उन लोगों के मस्तिष्क में एक नया दृष्टिकोण उत्पन्न हो जाता है। यदि लोग जो कि एक निश्चित भूमि में रहते हैं, उनमें यह भावना उत्पन्न हो गई है कि वह सब लोग इस धरती माता की सन्तान हैं। इसी धरती माता पर पैदा हुए हैं। यही धरती माता उनके जीवन का क्षेत्र है और मृत्यु होने पर इसी धरती माता पर दफनाये जायेंगे तब यह सब लोग यह अनुभव करते हैं कि वह भाई भाई हैं यदि यह बात उनके मस्तिष्क में जम गई है तो ऊपर लिखी हुई विशेषतायें उनमें हों या न हों वह राष्ट्र बन जायेंगे। रमजे मूर साहब लिखते हैं कि एक ही भूमी पर रहना, एक ही प्रकार की प्रथायें सबमें प्रचिलित होना, एक ही साथ मिल जुल कर दुख और कठिनाइयों को सहना और खुशी के अवसर पर सबका उसमें भाग लेना, यही वह वस्तुयें हैं जिनके द्वारा एकता की भावना लोगों में उत्पन्न होती है और जब यह भावना सब लोगों में प्रचिलित हो जाती है तो वह राष्ट्र कहलाते हैं।

राज्य और राष्ट्र में अन्तरः--(Difference between State & Nation) राज्य और राष्ट्र दो भिन्न २ चीजें है। जब हम किसी राज्य की बात करते हैं। तब प्रायः लोगों के समूह के सर्वोच्च राजनैतिक संगठन की बात करते हैं। राज्य में जन संख्या होनी अवश्य आवश्यक है। परन्तु यह जरूरी नहीं है कि लोगों में समान गुण और विशेषतायें हों। एक राज्य में ऐसी आबादी हो सकती है जो कि असमान हो, या जहां पर कई समूह हों और उन समूहों में आपस में विशेषतायें हों, परन्तु वह सब एक समान नहीं हों। उदाहरण के तौर पर प्रथम युद्ध के पहले आस्ट्रिया व हन्ग्री एक राज्य थे क्योंकि उनकी सरकार

एक ही थी, परन्तु वह एक राष्ट्र नहीं थे क्योंकि तमाम लोग समान गुण के नहीं थे और वहाँ पर दो राष्ट्र थे जो आपस मे विशेषतायें रखते थे। इसी प्रकार से एक राष्ट्र होते हुये भी यदि वह एक सरकार के आधीन नहीं है तो वह राज्य नहीं है, जैसे जर्मन लोग एक राष्ट्र है, परंतु वर्तमान समय में जर्मनी एक राज्य नहीं है। इसी प्रकार पौलेन्ड और फिनलैंड एक राष्ट्र अवश्य थे, परन्तु प्रथम युद्ध के पहले राज्य नहीं थे। इस प्रकार राज्य और राष्ट्र भिन्न २ हैं। यदि राज्य की तमाम आबादी समान गुण या विशेषतायें रखती हैं तो राष्ट्र और राज्य एक हो जाते हैं। परन्तु उनकी आबादी असमान है और उसमें दो राष्ट्र हैं तो राज्य और राष्ट्र भिन्न २ हो जाते हैं प्रथम युद्ध के समय में छोटे राज्य स्थापित करने के लोग पक्ष में थे याने एक राष्ट्र और एक राज्य के सिद्धान्त के पक्ष में थे, परन्तु यह राज्य कमजोर सिद्ध हुए और इसी लिये वर्तमान समय में लोग बड़े राज्य के पक्ष में हैं जो कि multi-national State कहलाते हैं।

राष्ट्रीयता Nationality राष्ट्र तथा राष्ट्रीयता यह दो भिन्न २ चीज़ें हैं। लौर्डब्राइस लिखते हैं कि यदि किसी राज्य की जनसंख्या भाषा, धर्म, संस्कृति के आधार पर समान नहीं हो बल्कि उस राज्य के मनुष्य दो समूहों में विभाजित हो और हर समूह के लोगों में आपस में तो समानता हो परन्तु दूसरे लोगों के साथ समानता न हो तो जिस समूह के लोगों की संख्या बहुमत में है वह तो नेशन या राष्ट्री कहलायेंगे और दूसरा समूह जिसके के लोग अल्प संख्या में हो वह नेशनेलिटी या राष्ट्रीयता कहलायेंगे।

राष्ट्रीयता का तत्वः—राष्ट्रीयता का तत्व का अर्थ लोगों की एक ऐसी समाज से है जिसमें जाति धर्म, भाषा और संस्कृति इत्यादि की एकता होती है। अब प्रश्न यह है कि क्या यह सब बातें राष्ट्रीयता होने के लिये आवश्यक हैं।

एक ही रक्त से जाति की उत्पतिः—यह विचार राष्ट्रीयता

की नींव समझी जाती है। जिन लोगों का यह विश्वास होता है कि उनकी जाति की उत्पत्ति एक ही पुरखे से हुई है। उनमें अन्य लोगों की अपेक्षा एकता की भावना अधिक होती है। जाति की उत्पति एक ही रक्त से होने में राष्ट्रीयता की भावना बढ़ती है। यह बात तो सच है। लेकिन संसार में इतनी अधिक जातियां है और वह आपस में इतनी घुलमिल गई हैं कि किसी जाति के लिये यह कहना कठिन है कि उसकी उत्पति अमुक रक्त से हुई है और उसकी जाति के रक्त में अन्य जातियों के रक्त का मिश्रण नहीं हुआ है। फिर यह देखने में आया कि भिन्न २ रक्त जातियों के लोगों में एक ही राष्ट्रीयता की भावना पाई जाती है और उनमें आपस में दृढ़ एकता होती है। भारतवर्ष में कई जातियां है परन्तु उनमें राष्ट्रीयता की भावना बड़ी प्रबल है। इसीलिये राष्ट्रीयता के लिये एक ही जाति से उत्पति आवश्यक नहीं है। एक धर्म भी राष्ट्रीयता की वृद्धि में सहायक होता है। हमारे देश में कई धर्म होने के कारण राष्ट्रीयता की एकता में काफी बाधा पड़ी है। लेकिन आज कल लोगों में धार्मिक सहिष्णुता काफी बढ़ गई है। लोग एक दूसरे के धर्म का आदर करते हैं और धर्म लोगों की नीजि भावना है जिसका राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस लिये राष्ट्रीयता के लिये धर्म भी आवश्यक नहीं है।

भाषा और साहित्य की एकताः—यह राष्ट्रीयता की वृद्धि में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। जो लोग एक भाषा बोलते हैं। एक सा साहित्य पढ़ते हैं, उनमें एकता की भावना अधिक होती है। परन्तु यह शर्त भी आवश्यक नहीं है। कई देश ऐसे हैं जहाँ लोग कई भाषाएँ बोलते हैं। परन्तु उनमें राष्ट्रीयता की भावना कम नहीं होती है। भारतवर्ष में कई भाषायें प्रचिलित हैं परन्तु इससे एकता में बाधा नहीं पड़ी।

एक संस्कृति और उकी सी सामाजिक प्रथायें:—यह राष्ट्रीयता की आवश्यक शर्तें मानी जाती है। जब लोगों का इतिहास एक

होता हैं तो उनकी सामाजिक प्रथायें एक सी होती है, तब उनमें आपस के बन्धन भी मजबूत हो जाते हैं। ये वस्तुयें लोगों को एक राष्ट्रीयता में बांध देती हैं, परन्तु यह भी देखा गया है कि एक ही देश के लोगों में अलग २ सामाजिक प्रथायें होते हुए भी उनमें एकता की भावना होती है।

इसलिये राष्ट्रीयता के निर्माण में कोई तत्व आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीयता एक आध्यात्मिक भावना है यह जाति, धर्म, भाषा इत्यादि की विभिन्नता रहते हुए भी बढ़ सकती है। यह उपरोक्त कथित सब तत्व अथवा इनमें से कोई एक तत्व इस भावना को बढ़ाने में सहायक हो सकता है। परन्तु इसके न होने पर भी लोगों में राष्ट्रीयता बढ़ सकती है। यदि लोगों में इसके प्रति भक्ति और इसकी इच्छा हो।

राष्ट्र और राष्ट्रीयता में भेद भावः—Difference between Nation and Nationality इसका भेद भाव दो प्रकार से किया गया है। एक तो संस्था के आधार पर और दूसरा राजनैतिक संस्था के आधार पर। जब कि कोई मनुष्यों का समूह जो कि नसल, भाषा इत्यादि के आधार पर समान गुण रखता है और उसका एक राज्य में बहुमत है तो वह राष्ट्र या Nation कहलाता है और यदि उसी इलाके या राज्य में दूसरे समूह जो कि आपस में समानता रखते हैं और उस इलाके में उस समूह की अल्प संख्या है तो Nationality याने राष्ट्रीयता कहलाती है उदाहरण के तौर पर भारतवर्ष में हिन्दू लोग जो आपस में समानता रखते हैं और इनकी अधिक संख्या भारत में है वह तो राष्ट्र कहलायेगा और मुसलमान लोग जो कि दूसरा समूह उसी राज्य में रहता है और आपस में समानता रखता है पर उसकी संख्या कम है तो राष्ट्रीयता कहलायेगी। एसी प्रकार से पाकिस्तान में हिन्दू और कैनेडा में फ्रांसीसी लोग राष्ट्रीयता कहलाते हैं क्योंकि यह लोग कम संख्या में है।

दूसरा भेद भाव राजनैतिक संस्था के आधार पर होता है। ब्राइस

के अनुसार जब कि एक समूह में आपस में समानता तो होती है लेकिन वह राजनैतिक दृष्टिकोण से संघठित नहीं है तो वह Nationality कहलाता है और वही समूह जब कि राजनैतिक दृष्टिकोण से संघठित हो जाता है तो वह राष्ट्र कहलाता है। उदाहरण के तौर पर यहुदी लोग। ये लोग जर्मनी में बहुत कम संख्या में अलग अलग बंटे हुए थे। और जब तक यह वहां रहे Nationality कहलाये लेकिन जब कि वह इसराईल में जाकर बस गये और उन्होंने वहाँ पर अपना राज्य स्थापित कर लिया और राजनैतिक दृष्टिकोण से संघठित हो गये हैं तो वह सब राष्ट्र कहलाते हैं।

सारांश:—राज्य मनुष्यों का एक समूह है जो कि निश्चित स्थान पर रहता है जिसमें एक सरकार होती है जो कि अन्दरूनी और विदेशी मामलों में पूरी तौर से स्वतन्त्र होती है। इस स्वतन्त्र आधिपत्य को सर्वोच्च सत्ता कहते हैं जिसका कि अर्थ ये है कि हर एक व्यक्ति और हर एक समूह उसकी आज्ञा पालन करता है और वह खुद अन्दरूनी या विदेशी शक्ति के आधीन नहीं है। सर्वोच्च सत्ता में पांच बातें होना आवश्यक हैं १. अनियन्त्रता (illimitability) २ सर्व मान्यता (unversiality) ३. अदेयता (Inalienability) ४. स्थिरता (Permanence) ५. अविभाज्यता (Indivisablity) सर्वोच्च सत्ता के चार लक्षण हैं जैसे (i) नाम मात्र की सर्वोच्च सत्ता (Titular. Sovereignty) (ii) कानूनी सर्वोच्च सत्ता (Legal Sovereignty) जो कि निश्चित लोगों के हाथ में होती है (iii) राजनैतिक सर्वोच्च सत्ता (Poltical-Sovereignty) जो कि निश्चित लोगों के हाथ में नहीं होती, और उन सब एकत्रित प्रभावों का नाम है जो कि मतदाताओं पर भिन्न २ प्रकार से प्रभाव डालती है। (iv) सार्वजनिक सर्वोच्च सत्ता (Popular-sovereignty) वैधानिक सरकार का नाम मात्र है राज्य सरकार की एक एजेन्सी है जिसके द्वारा राज्य में शान्ति स्थापित होती है। राष्ट्र मनुष्यों के एक समूह को कहते है जिसमें आपस में समानता हो, यदि

एक राज्य में सब लोग समान हों तब राज्य और राष्ट्र एक ही बन जाता है जो कि mono-national state कहलाता है और यदि एक राज्य के लोगों में समानता नहीं है और उसमें कई समूह हों जो कि आपस में समानता रखते हों तो ऐसी राज्य को multi-national state कहते हैं। यदि एक राज्य में दो प्रकार के समूह है एक तो बहुमत दल जिसमें कि आपस में एकता है और दूसरा अल्प संख्या का समूह जो कि बहुमत दल से भिन्न है तो अल्प संख्या के समूह को (nationality) राष्ट्रीयता कहते हैं। राष्ट्र और राष्ट्रीयता में दो प्रकार से भेद भाव किया जाता है। एक तो संख्या और दूसरे राजनैतिक दृष्टिकोण से। एक समूह जो कि अभी कम संख्या में होने के कारण Nationality है यदि स्वतन्त्र राज्य स्थापित करले तो वही समूह राष्ट्र (nation) बन जाता है।

1. What are the characteristics of state ? Define state,
2. What do you mean by Sovereignty ? Discuss the essential characteristics of Sovereignty.
3. What do you mean by Sovereignty ? Describe different kinds of sovereignty.
4. What do you mean by Govt ? Distinguish between State and Govt.
5. What do yon mean by Nation ? Describe its characteristics. Distinguish between state & nation.
6. Define nationality and discuss its essential characteristics Distinguish between nation & nationality.

N. B. इन सब प्रश्नों का उत्तर इसी अध्याय में संक्षेप में दिया हुआ है उसका अध्ययन करें।

7. A nation is not necessasarily a state any more than a state is necessasarily a nation, Explain the meaning of the statement and differentiate state from nation and nationality.

Answer:—There are two kinds of states, Mono-national and multi-national. In a mono-national state, there is one state and one nation ie nation is a state, but in a multi-national state, there is one state and two or more nations, Hence in this case state is not necessasarily a nation.

आठवां अध्याय

राज्य की उत्पत्ति

राजनीतिक विद्वानों ने राज्य की उत्पत्ति और उसके रूप के कई सिद्धान्त प्रचलित किये जिनमें निम्नलिखित प्रसिद्ध हैं।

१. बल प्रयोग का सिद्धान्त

२. दैवी संभूती सिद्धान्त

३. सामाजिक समझौते वाला सिद्धान्त

४. ऐतिहासिक व विकासवादी सिद्धान्त

१. बल प्रयोग का सिद्धांतः—इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य बल प्रयोग से स्थापित होता है। शक्तिशाली पुरुष दुर्बल पुरुष को दबा कर अपने आधीन कर लेता है। जीतने वाला शासक बन जाता है और जिसकी कि हार होती है वह प्रजा बन जाती है। प्राचीन काल में बल द्वारा एक परिवार दूसरे परिवार के, एक वंश दूसरे वंश के, एक जाति दूसरी जाति के, एक देश दूसरे देश के आधीन हुआ था, वर्तमान समय में भी विभिन्न राज्य शक्ति और बल द्वारा चल रहे हैं। हर एक राज्य ने बाहरी शत्रु के आक्रमण से बचने के लिये और देश में शांति स्थापित रखने के लिये बड़ी २ सेना और पुलिस का प्रबन्ध किया हुआ है, इससे स्पष्ट होता है कि राज्य बल प्रयोग पर निर्भर है।

समीक्षाः—इसमें संदेह नहीं कि बल प्रयोग का राज्य की उत्पत्ति में अधिक भाग है, परन्तु राज्य शक्ति केवल मात्र पाशिवक बल पर अवलम्बित नहीं हैं। यदि हम केवल मात्र पाशिवक बल को ही राज्य का कारण मानलें तो राज्य करने का अधिकार और राजाज्ञा पालन करने का कर्तव्य आदि सब निरर्थक हो जाते हैं, रूसो ने लिखा है कि पाशिवक बल से राज्य करने का अधिकार कोई स्थिर अधिकार नहीं है क्योंकि वह तभी तक लागू रहता है जब तक कि बल है और जब कि बल का अन्त हो जाता है तो उस अधिकार का भी अन्त हो जाता है, मनुष्य राज्य की

आज्ञा पालन करता है राज्य की सेवा करता है, राज्य के लिये हर प्रकार का बलिदान करने को तैयार रहता है—यह राज्य के पाशविक बल के द्वारा नहीं है बल्कि और बातों के कारण हैं। वर्तमान समय में एक राज्य जितना सभ्य और उन्नति शील होगा उसमें उतनी ही बल प्रयोग की न्यूनता होगी और प्रजा की अभिरुचि की अधिकता होगी।

२. दैवी संभूती सिद्धान्तः—मध्य-कालीन समय में यह सिद्धान्त बहुत प्रचलित था। प्राचीन भारतवर्ष में भी यही सिद्धान्त माना जाता था, इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य में ईश्वरीय अंश का विश्वास किया जाता है। राजा ईश्वर की ओर से नियत किया हुआ माना जाता है और इसकी मृत्यु पर उसके बेटे को ही राज गद्दी पर बैठाने का अधिकार है दूसरे राज्य की जिम्मेदारी ईश्वर की ओर से एक खास वंश को सौंपी गई है और इसी कारण राज्य शक्ति उसी वंश में सीमित रहेगी। तीसरे चूंकि राजा ईश्वर की ओर से नियत है इस कारण वह अपने सब कामों का उत्तरदायी ईश्वर को ही है; जनता को नहीं। चौथे जनता को राजा के विरुद्ध विद्रोह करना, या उसके कार्य में दोष निकालने का अधिकार नहीं है। प्रजा का कर्तव्य तो सिर्फ यही है कि जो कुछ राजा कहे उसकी आज्ञा पालन करे, और किसी प्रकार की आवाज राजा के विरुद्ध न उठाये।

समीक्षाः—यह सिद्धान्त वैज्ञानिक नियमों के विरोध में था और बुद्धि द्वारा इसको स्वीकार करना बहुत कठिन है। यह मान भी लिया जाय कि एक राज्य जिसका कि आधिपत्य स्थापित है वह ईश्वर की ओर से नियत किया गया है, परन्तु यह अक्सर देखा गया है कि जब राजा युद्ध में हार जाता है तो हारे हुए वंश का अन्त हो जाता है और जीतने वाला अपना राज्य उसकी जगह स्थापित कर लेता है या कई जगह क्रान्ति हो जाने पर आधिपत्य नये लोगों के हाथ में आ जाता है। ऐसी स्थति में यह कहना कि यह सब ईश्वरीय इच्छा के अनुसार हुआ है, गलत है। वर्तमान

समय में इस सिद्धान्त को स्वीकार करने को कोई तैयार नहीं है, परन्तु प्राचीन समय में और मध्य कालीन समय में इस सिद्धान्त ने राज्य की नींव दृढ़ करने में बहुत भाग लिया था। पहले तो यह जब कि जातियां असभ्य थी और मनुष्य में आज्ञा पालन करने का माद्दा दृढ़ता से उत्पन्न नहीं हुआ था, उस समय में राजा ईश्वर का प्रतिनिधि होने के कारण लोगों में आज्ञा पालन कराने में सफल हुआ। राजा ईश्वर का प्रतिनिधी और धर्म की रक्षा करने वाला था और इस कारण लोगों ने खुशी-खुशी उसकी आज्ञा का पालन किया। इस प्रकार राज्य में शान्ति की स्थापना हुई और सरकार की नींव दृढ़ हुई। दूसरे इसका महत्व यह है कि यह सिद्धान्त यह बतलाता है कि सरकार लोगों की भलाई और उन्नति के लिये स्थापित होती है। निरंकुश शासक भी अपने कार्य के लिये ईश्वर के समक्ष उत्तरदायी था, और उसमें इस प्रकार से एक प्रकार की नैतिक जिम्मेदारी आ गई थी और जब कि समाज ने और उन्नति की तो वह ईश्वर के बजाय लोगों के समक्ष उत्तर-दायी हुआ।

३. सामाजिक समझौते वाला सिद्धान्तः—इस सिद्धान्त के पक्ष में तीन लेखक बहुत प्रसिद्ध है, एक तो हॉब्स (Hobbes) दूसरा लौक (Locke) तीसरा रूसो (Rosseau)

यह तीनों राजनितिक विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि राज्य के आरम्भ होने से पहले एक प्राकृतिक अवस्था (State of Nature) थी परन्तु वह अवस्था कैसी थी और किस प्रकार से लोग रहते थे और उस अवस्था में शान्ति थी या अशान्ति थी, इन सब बातों के सम्बन्ध में इन तीनों विद्वानों में अधिक भेद-भाव है। दूसरे, तीनों इस बात पर सह-मत्त हैं कि एक समाजिक समझौते के द्वारा राज्य स्थापित हुआ, परन्तु सामाजिक समझौता किस प्रकार का हुआ और एक ही हुआ या दो हुए, इन बातों पर इन तीनों विद्वानों में अधिक भेद भाव है।

हाब्स का सामाजिक सिद्धान्त

प्रकृतिक अवस्था का वर्णनः—हॉब्स का कहना है कि राज्य स्थापित होने से पहले मनुष्य एक प्राकृतिक अवस्था (State of Nature) में रहता था। जिसका कि चित्र उसने बहुत ही खराब बतलाया है। उसके ख्याल में मनुष्य की प्रकृति में बुराईयां ही बुराइयां है अच्छाइयां नहीं और चूंकि प्राकृतिक अवस्था में किसी प्रकार की सरकार नहीं थी, इस कारण वह समय बहुत ही खराब था। बुराइयों के विकास के लिये पूरा पूरा अवसर था। शक्तिशाली लोग कमजोर लोगों पर हर प्रकार का अत्याचार करते थे। समाज नहीं था, लोग अलग २ रहते थे। उनका जीवन पशुओं के समान था और एक दूसरे को हमेशा भय लगा रहता था।

हाब्स का समझौता तथा राज्य की उत्पत्तिः—यह ऐसी अवस्था थी कि लोग उससे उकता गये और उसका अंत करने के लिये उन्होंने आपस में एक दूसरे से समझौता किया। हर एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति से कहा कि मैं अपने अधिकार और अपने ऊपर राज्य करने की शक्ति एक दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को सौंपता हूँ इस शर्त पर कि तुम भी अपने तमाम अधिकार और अपनी तमाम शक्ति उसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को सौंप दो जिसको कि मैंने अपने तमाम अधिकार और तमाम शक्ति सौंपी है। इस प्रकार हर एक व्यक्ति ने प्रतिज्ञा की और अपने तमाम अधिकार और शक्तियाँ एक ही व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को सौंप दी।

राज्य की उत्पत्ति का परिणामः—पहला सर्वोच्य शक्ति एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के हाथ में आ गई। दूसरा राजा जिसको कि हाथ में सर्वोच्च सत्ता आई है वह समझौते में सम्मिलित नहीं है। समझौता तो लोगों में आपस में हुआ और यह उस समझौते का परिणाम हैं। तीसरे सर्वोच्च शक्ति पर किसी तरह का अंकुश नहीं है जो

कुछ भी राजा हुक्म दे उसका पालन करना आवश्यक है। जनता ने अपने तमाम अधिकार राजा को सौंप दिये इस कारण अब उनके पास कोई अधिकार नहीं रहे कि वह राजा का विरोध करें। राजा जो कुछ कहे उसकी आज्ञा का पालन करना उनका कर्तव्य हो जाता है, क्योंकि यदि वह आज्ञा पालन नहीं करेंगे और यह भावना अधिक लोगों में प्रचलित हो गई तो फिर राज्य का अन्त हो जायगा और फिर वो प्राकृतिक अवस्था में चले जायेंगे जो कि इतनी खराब थी कि वह उसको सहन न कर सके और उससे बचने के लिये ही राज्य स्थापित हुआ था। इस कारण राज्य की आज्ञा का पालन करना चाहे वह आज्ञा उचित हो या अनुचित हो, लोगों के लाभ के लिये है। हॉब्स निरंकुश शासन के पक्ष में था।

सिद्धान्त की आलोचनाः— हॉब्स राज्य और सरकार में भेदभाव नहीं कर सका। सरकार का विरोध करने या उसका अन्त करने से राज्य का अन्त नहीं होता है परन्तु हॉब्स उसको नहीं समझ सका और इसी कारण उसने विरोध करना मना किया।

हाब्स का जीवनः— (1588–1679) इंगलैन्ड के बादशाह चार्लस द्वितीय के गुरु थे और वे इंगलैन्ड के सीविल वार के समय में मौजूद थे चार्लस द्वितीय के गुरु होने के कारण उनको राजा से और उसके पक्ष वाले दल से बहुत प्रेम था। वह वास्तव में यह विश्वास करते थे कि एकतन्त्र सरकार ही इंगलैन्ड में शान्ति और सुख स्थापित करने में सफल होगी। १६५१ में उन्होंने Leviathan नाम की पुस्तक लिखी जिसमें सामाजिक समझौते का वर्णन है। राज्य की उत्पत्ती का निर्माण करते हुए उन्होंने इसमें यह सिद्ध करना चाहा है कि एकतन्त्र सरकार ही शान्ति स्थापित कर सकती है।

लॉक का सामाजिक सिद्धान्त

प्राकृतिक अवस्था का वर्णनः— दूसरा लेखक जिसने सामा-

जिस समझौते के सम्बन्ध में लिखा है वह लॉक है। (1632-1704) उसने भी हॉब्स के समान यही वर्णन किया है कि राज्य की उत्पत्ती के पहले प्राकृतिक अवस्था थी परन्तु वह हॉब्स से इस बात में सहमत नहीं है कि मनुष्य की प्रकृति में बुराइयां ही बुराइयाँ है अच्छाइयां नहीं। बल्कि लॉक के विचार में मनुष्य की प्रकृति में अच्छाइयों की मात्रा अधिक है। इस कारण प्राकृतिक अवस्था का जो चित्र इसने खींचा है वह हॉब्स के चित्र के बिलकुल विपरीत हैं। प्राकृतिक अवस्था में शान्ति प्रेम, सहानुभूति और एक दूसरे की रक्षा की भावना थी। उसमें स्वतन्त्रता थी, अन्धेर नगरी नहीं। उसमें प्राकृतिक कानून (Law of Nature) थे जिसको कि लोग अधिक संख्या में पालन करते थे परन्तु कुछ लोग ऐसे भी थे जो कि इसका उल्लंघन करते थे और जिसके कारण शान्ति प्रिय लोगों को बाधा पहुँचती थी।

प्राकृतिक अवस्था की बाधाएं—प्राकृतिक अवस्था की बाधाएं तीन प्रकार की थी। पहली तो यह प्राकृतिक कानूनों का वर्णन साफ २ शब्दों में नहीं था। दूसरे इनका अर्थ निकाल कर लोगों को समझाने के लिये कोई योग्य व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह नहीं था। तीसरे यदि आपस के लोगों में भेदभाव उत्पन्न हो जाये तो कोई ऐसा न्यायाधीश नहीं था जो कि इनके झगड़ों का फैसला करके अपने फैसले को लोगों पर लागु कर सके। इन बाधाओं ने लोगों को प्राकृतिक अवस्था छोड़ने और राज्य स्थापित करने पर मजबूर किया।

लॉक का समझौता—लॉक के कहने के अनुसार दो समझौते हुए। पहले समझौते से प्राकृतिक अवस्था की समाप्ति हुई और राज्य की स्थापना हुई। लोगों ने अपने स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की रक्षा करने के अधिकार को समाज को सौंप दिये और इस प्रकार राज्य की स्थापना की हॉब्स के सिद्धान्त के कहने के अनुसार लोगों ने अपने तमाम अधिकार एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को सौंप दिये परन्तु लॉक इससे सहमत नहीं करता। इसका कहना है कि लोगों ने एक ही अधि-

कार जो कि स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की रक्षा है उस अधिकार को समाज को सौंप दिया और बाकी अधिकार अपने पास वैसे के वैसे ही रखे। इस प्रकार लॉक के विचार हॉब्स के विचारों से विपरीत थे। दूसरा अन्तर यह है कि लॉक के अनुसार समाज ने एक दूसरा समझौता किया और गवर्नमेन्ट की स्थापना की। जिसका कि ध्येय व्यक्तियों की स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की रक्षा करना है। राज्य में अधिक मात्रा में लोगों की संख्या ह ती है जो कि प्रबन्ध नहीं कर सकते इस कारण दूसरे समझौते के द्वारा सरकार की स्थापना करनी पड़ी।

आलोचनाः—लॉक ने राज्य और सरकार में भेद भाव किया। पहले राज्य स्थापित हुआ जिसमें कि सर्वोच्च शक्ति है और सरकार स्थापित हुई जो कि राज्य के आधीन है। दूसरे सरकार लॉक के कहने के अनुसार सर्वोच्च सत्ता नहीं है और तमाम सत्ता राज्य याने लोगों के हाथ में है। जिन्होंने कि सिर्फ व्यक्ति की स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की रक्षा करने के अधिकार को सरकार को सौंपा है और बाकी सब अधिकार लोगों ने अपने हाथ में रखे हैं। इसका अर्थ यह है कि यदि सरकार कार्य करने में असफल रहे तो लोगों को यह पूरा अधिकार है कि वह इस सरकार का अंत करके एक नयी सरकार की स्थापना करे। दूसरे शब्दों में इसका यह अर्थ है कि सरकार लोगों की स्वीकृति पर निर्भर है। तीसरी बात यह है कि लॉक वैधानिक सरकार के पक्ष में था, परन्तु इस सिद्धान्त में दोष है कि वह यह नहीं बतला सका कि किस प्रकार से लोग सरकार का अन्त कर सकते हैं। उसका कहना था कि सरकार शक्ति या विद्रोह द्वारा बदली जा सकती है, परन्तु यह गलत विचार है।

रुसो का सामाजिक समझौता

रुसो एक फ्रांस का लेखक था जिसने कि 1672 में सामाजिक समझौते पर एक पुस्तक लिखी थी।

प्राकृतिक अवस्था का विभाजनः—रुसो भी हॉब्स और लॉक के समान इस बात पर सहमत है कि राज्य स्थापित होने से पहले प्राकृ-

तिक अवस्था थी रूसो ने प्राकृतिक अवस्था को दो भागों में विभाजित किया है। पहला तो शुरु के समय की और दूसरे उसके अन्त होने और राज्य स्थापित होने के कुछ पहले की।

प्राकृतिक अवस्था के प्रारम्भ का वर्णनः—इस समय की अवस्था की उसने बहुत प्रशंसा की है। उस समय में लोग सुख; शान्ति स्वतन्त्रता और निर्भयता से रहते थे। कोई किसी को किसी प्रकार का नुकसान नहीं पहुंचाता था, उस समय में लोगों में Reason याने सोच विचार की शक्ति उत्पन्न नहीं थी इसलिये उनका जीवन सुख और शान्तिमय था। रूसो का कहना है कि Reason के ही कारण यह सब दुःख और अशान्ति है।

निम्नलिखित कारणों से परिवर्तन हुआः—

(१) पहली बात तो यह है कि लोगों की जन संख्या अधिक होनी शुरू हुई।

(२) दूसरी लोगों में सोच विचार की शक्ति उत्पन्न हुई।

(३) तीसरी बात यह कि खेती का विकास हुआ और लोग मिल जुल कर धन की उत्पति करने लगे, इसका परिणाम यह हुआ कि भिन्न भिन्न लोग अलग २ मात्रा में धन पैदा करने लगे। होशियार और मेहनती लोगों ने अधिक मात्रा में धन पैदा किया और वो धनवान बन गये और साधारण व्यक्ति ने कम मात्रा में धन पैदा किया और वह निर्धन ही रहा। इस प्रकार प्राकृतिक अवस्था के दूसरे समय में अमीर और गरीब का भेद भाव उत्पन्न हुआ और पहले समय की समानता चली गयी और आपस में लड़ाई झगड़े आरम्भ हुए। जिससे बचने के लिये राज्य की स्थापना हुई।

रूसो का सामाजिक समझौताः—रूसो के कहने के अनुसार सिर्फ एक ही समझौता हुआ है दो नहीं। हर एक व्यक्ति ने व्यक्तिगत रूप से एकत्रित दल को अपने सब अधिकार सौंप दिये जैसे अ, ब, स,

ग, ने अपने तमाम प्राकृतिक अधिकारों को अ+ब+स+ग को सौंप दिया और इस दल का नाम रूसो ने सामान्य इच्छा रखा। इस समझौते से किसी को हानि नहीं हुई बल्कि इससे सबको लाभ हुआ, क्योंकि व्यक्तिगत रूप से जो अपने अधिकारों की रक्षा करते थे, अब उन्हीं अधिकारों की रक्षा एकत्रित दल करने लगी जिसमें कि हर एक व्यक्ति भी सम्मिलित है। इस कारण हर एक व्यक्ति राजा भी है और प्रजा भी है, वह दोनों पद ग्रहण करता है। राजा इस कारण है कि वह स्वयं भी दल का एक अंग है और प्रजा इसलिये कि जो कुछ कि सामान्य इच्छा निश्चित कर लेगा उसका वह पालन करेगा। सामान्य इच्छा का कार्य तमाम जनता की देख भाल करना होगा। सामान्य इच्छा के ही हाथ में तमाम सर्वोच्च सत्ता है उस पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं है और वह कभी किसी गलत रास्ते पर नहीं जायगी रूसो ने राज्य और सरकार में भेद भाव किया। सरकार रूसो ने स्थापित की (i) वह किसी समझौते द्वारा नहीं बनायी गई थी बल्कि सामान्य इच्छा की आज्ञा से उसकी स्थापना हुई। सरकार का कार्य कानून बनाना नहीं है। कानून तो सामान्य इच्छा ही बनायेगी। सरकार तो सिर्फ उन कानूनों को कार्य रूप में लायेगी। रूसो Direct Democracy के पक्ष में था और उसने सर्वोच्च सत्ता तमाम जनता के हाथ में सौंप दी।

आलोचना:—सामाजिक समझौते का ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कोई महत्व नहीं है। इतिहास में ऐसे समझौते का कहीं वर्णन नहीं है। इसके विपरीत इतिहास से यह पता चलता है कि आरम्भ में कुटुम्ब इकाई था और व्यक्ति का कोई महत्व नहीं था, जायदाद मिली जुली थी और कानून के बजाय रीति रिवाज पर निर्भर थी। इन बातों से यह सिद्ध होता है कि सामाजिक समझौता जो व्यक्तियों पर निर्भर था इसमें कोई तत्व नहीं है और यह लेखकों के मस्तिष्क का एक बनावटी सिद्धान्त है।

राजनीतिक दृष्टिकोण से इस सिद्धान्त का बहुत महत्व है क्योंकि दैवीसंभूती सिद्धान्त का इसने अन्त कर दिया है और इसने इस सिद्धान्त पर जोर दिया कि सरकार स्वीकृति पर निर्भर है और राजा को इच्छानुसार कार्य करने को कोई अधिकार नहीं है। समाजिक समझौता वर्तमान प्रजातन्त्र की नींव है और इसमें व्यक्ति का महत्व वर्णन करते हुए इस बात पर जोर दिया है कि व्यक्ति को अपने प्रयत्न से राजनीतिक संस्थाओं में परिवर्तन लाने का अधिकार है और राजनीतिक सर्वोच्च शक्ति व्यक्ति के ही हाथ में है।

एतिहासिक तथा विकासवादी सिद्धान्तः—राजा का विकास किसी मुख्य एक या दो कारणों से नहीं हुआ है। कई कारणों द्वारा राज्य ने वर्तमान रूप ग्रहण किया है, और वह मुख्य कारण निम्नलिखित हैं।

(१) रक्त सम्बन्धी (२) अर्थ (३) शक्ति (४) राजनैतिक जागृति।

१. रक्त सम्बन्धीः—मनुष्य एक सामाजिक जीव है, और शुरू में भी वह, जहां तक पता चला है, अकेला नहीं रहता था, बल्कि वह समूह में ही रहता था। समाज का सबसे पहला स्वरूप परिवार या कुटुम्ब था। स्त्री और पुरुष में परस्पर आकर्षण हुआ और वह एक स्थान पर रहने लगे। परिवार या कुटुम्ब स्त्री तथा उनके बच्चों का सम्मिलित नाम है।

जब परिवार में लोगों की संख्या बढ़ गई तो उनके लिये एक घर में सुख पूर्वक रहना कठिन हो गया। इस प्रकार एक परिवार कई परिवारों में विभाजित हो गया, जो कि गण कहलाते थे, वे आपस में मेल जोल रखते थे और कुटुम्ब के मुखिया की आज्ञा का पालन करते थे सारी जाति के लोग एक ही पुरुष से अपने वंश को निकला हुआ मानते थे। और उसी की आज्ञा पालन करते थे और इसी से अपनी वंशावली बताते थे। सारे गण में एकता का बीज उत्पन्न हो गया था।

२. धर्मः—धर्म ने उन सम्बन्धों को दृढ़ किया जो रक्त सम्बन्ध से उत्पन्न हुए थे। प्राचीन काल में मनुष्य दो प्रकार की पूजा करता था। प्रकृति की पूजा, और दूसरे पूर्वजों की। प्रकृति की पूजा में वे वर्षा बिजली आदि की पूजा करते थे क्योंकि वे इनको समझने में असमर्थ रहे थे। पूर्वजों की पूजा इसलिये हुआ करती थी क्योंकि वो उनको प्राकृतिक तथा मानवी दुःखों से बचाते थे। जातीयता का बन्धन इस प्रकार और भी मजबूत हो गया; क्योंकि वह एक ही देवता की उपासना करते थे और उनके एक ही प्रकार के त्योहार होते थे। लोग अपने जाति के प्रधान की आज्ञा का हमेशा पालन करते थे। धार्मिक तथा राजनैतिक विचारों में कुछ अन्तर नहीं था। शासक की शक्ति धर्म पर अवलम्बित थी। वह उनका राजा और पुजारी दोनों था और उनका विचार था कि उनमें दैवी शक्ति है इस प्रकार राज्य की उन्नति में धर्म ने बहुत भाग लिया। उसने केवल एकता ही उत्पन्न नहीं करवाई, बल्कि शासक की आज्ञा पालन करना और उसके प्रति श्रद्धा रखने का पाठ भी मनुष्य को सिखलाया।

३. स्थाई जगह पर बसनाः—शुरू २ में जातियां असभ्य लोगों के समान शिकार करके अपना जीवन बिताते थे, अथवा गऊ, भेड़ आदि पशुओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर चराने ले जाते थे। और वे अभी तक एक स्थाई जगह पर नहीं बसे थे। कुछ समय के पश्चात जब कि उनकी आवश्यकतायें और अधिक हो गईं और उनको खेती के औजारों का ज्ञान प्राप्त हो गया, तब वह छोटे छोटे गांवों में स्थाई तौर पर बस गये। गांवों में बसने के पश्चात उनको अपने जान व माल और विदेशी आक्रमण से रक्षा करने की आवश्यकता हुई। इस प्रकार की रक्षा के लिये संगठन स्थापित करना आवश्यक हो गया। जब कि लोगों की संख्या अधिक हो गई और उनमें कुछ योग्य पुरुषों ने अधिक धन प्राप्त कर लिया, तब लोगों को यह ज्ञान होने लगा कि समाज के अन्दरूनी जीवन के लिये एक संगठन आवश्यक है, जो कि

आपस के भेद भाव का फैसला करे और जमीन जायदाद के परिवर्तन के कानून बनाये। जब समाज में इस प्रकार के संघठन स्थापित करने के विचार लोगों के मस्तिष्क में आये तब उस समय में राजनैतिक जागृति का आरम्भ हुआ। इस प्रकार नागरिक जीवन आरम्भ हुआ, और व्यापार, विवाह आदि बढ़ने लगे। यातायात के साधनों और मार्गों की उन्नति हुई। परिवार ने राज्य का रूप धारण कर लिया। इससे स्पष्ट है कि समाज का क्षेत्र परिवार से वंश, वंश से जाति, और जाति से राज्य तक पहुँच गया।

४. शक्ति का प्रभावः—जैसे जैसे सभ्यता बढ़ती गई और लोगों की आवश्यकतायें अधिक होती गई, तो ऐसी स्थिति में सहयोग के बजाय लड़ाई झगड़े को अधिक महत्व मिलने लगा। एक शक्ति शाली राज्य ने कमजोर राज्य को हरा कर अपने राज्य में सम्मलित करना शुरु किया। इससे एक नया प्रभाव हुआ, राजा और प्रजा की स्थापना हुई। दूसरा प्रभाव यह हुआ कि हर एक राज्य ने अपने यहां एक शक्तिशाली संघठन स्थापित किया जो कि अन्दरुनी शान्ति रख कर राज्य को नष्ट होने से रोके। ऐसी स्थिति में जाति के संघठन का महत्व जाता रहा और उन लोगों के हाथ में आधिपत्य आ गया जो कि युद्ध में निपुण थे। धीरे २ राज्य का क्षेत्र फल बढ़ता गया और एक राज्य में कई देश सम्मिलित किये गये। परन्तु इससे संसार में अशान्ति उत्पन्न हुई। १८ वीं शताब्दी में जब कि प्रजातन्त्र का बोल बाला हुआ, नया सिद्धान्त प्रचलित हुआ कि एक राज्य की सीमा में एक ही राष्ट्र हो। परन्तु ऐसे राज्य कमजोर सिद्ध हुए और अब Multi National State यानी एक राज्य में कई राष्ट्र होने पर जोर है। संयुक्त राष्ट्र संघ के स्थापित होने से यह आशा की जाती है कि भविष्य में एक ही राज्य रहेगा परन्तु यह सब बातें भविष्य ही बतलायेगा।

N. B. हमने अध्याय द्वितीय में नागरिक शास्त्र के विस्तार का वर्णन करते हुए लिखा है कि हम राज्य का अध्ययन तीन दृष्टिकोण से

करते हैं। पहले तो भूतकाल में राज्य का निर्माण कैसे हुआ और दूसरे किस प्रकार से उसने वर्तमान स्थिति ग्रहण की। इन दोनों का ज्ञान उपरोक्त लिखी हुई बातों से हो गया होगा। हमारा भविष्य काल का उद्देश्य ऐसा राज्य स्थापित करना है जिसमें सब लोग मिलकर भलिभांति उन्नति कर पायें और इस ध्येय की प्राप्ती के लिये हमने संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की है।

सारांशः—(१) बल प्रयोग का सिद्धान्त (२) दैवी संभूती सिद्धान्त उसका अध्ययन करो (३) सामाजिक समझौते के पक्ष में तीन लेखक हैं। (i) हाब्स (ii) लॉक (iii) रूसो (i) हाब्स ने प्राकृतिक अवस्था का चित्र बहुत खराब बतलाया है और इस कारण लोगों ने आपस में समझौता किया जिससे राज्य की स्थापना हुई। राज्य से कोई समझौता नहीं हुआ था और वह समझौते का परिणाम था। राजा पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं था, हॉब्स के अनुसार सिर्फ एक ही समझौता हुआ था और हॉब्स ने राज्य और सरकार में कोई भेद भाव नहीं किया था (ii) लॉक ने भी प्राकृतिक अवस्था का वर्णन किया है, परन्तु उसने उसका अच्छा चित्र बतलाया है, परन्तु उसमें कुछ कठिनाइयां थीं जिनको दूर करने के लिये राज्य की स्थापना हुई। लॉक के अनुसार दो समझौते हुए, पहले समझौते से तो राज्य की उत्पत्ति हुई और दूसरे समझौते से सरकार की स्थापना हुई। लॉक वैधानिक सरकार के पक्ष में था। (iii) रूसो ने भी प्राकृतिक अवस्था का वर्णन किया है, परन्तु उसने प्राकृतिक अवस्था को दो भागों में विभाजित किया है। पहले भाग में सुख और शान्ति थी और दूसरे भाग में दुःख और अशान्ति थी। रूसो के अनुसार एक ही समझौता हुआ। एकत्रित दल जिसको कि वह सामान्य इच्छा का नाम देता है उसके हाथ में सर्वोच्च सत्ता है और सरकार सामान्य इच्छा के द्वारा स्थापित होती है और सरकार का कार्य सामान्य इच्छा के बनाये हुए कानूनों को कार्य रूप में लाना है। इस प्रकार रूसो Dircet Democraey के पक्ष में था।

अध्याय नौवां

सरकार, उसका संगठन और कार्य

Organs of government and inter-relationship

सरकार के तीन निम्न लिखित अंगों के द्वारा शासन कार्य होता है। पहला अंग का नाम व्यवस्थापिका सभा, दूसरा कार्य पालिका और तीसरा न्यायपालिका है। इन्हीं तीनों अंगों द्वारा शासन के सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न होते हैं।

व्यवस्थापिका सभा के कार्य

१. कानून रचना:—व्यवस्थापिका सभा का प्रथम कार्य कानून रचना है जनता ही को अपने दुःख दर्द और लाभ का पूरा पूरा ज्ञान होता हैं और इस कारण प्रजातन्त्र राज्य में जनता ही के प्रतिनिधि व्यवस्थापिका सभा के सदस्य होते है। और उनका कार्य देश और सरकार की आवश्यकता के अनुसार कानून बनाना होता है। लिखित संविधान प्रणाली वाले देशों में कानून बनाने वाली सभा सर्व प्रभुत्व सम्पन्न नहीं होती। वह संविधान में संशोधन नहीं कर सकती और उसको विधान द्वारा दिये गये अधिकारों पर ही कानून बनाने का अधिकार होता है। परन्तु अलिखित संविधान वाले देशों में विधान सभा सर्व प्रभुत्व सम्पन्न होती है इंगलैन्ड की संसद सर्व प्रभुत्व सम्पन्न संस्था है। ये साधारण कानून भी बना सकती है और संविधान में संशोधन भी कर सकती है।

२. कर निर्धारित करना:—इसका दूसरा कार्य कर निर्धारित करना और शासन व्यय के लिये धन की स्वीकृति देना है। जितना भी कर लगा कर लोगों से रुपया एकत्रित किया जाता है और इस धन को किस प्रकार से खर्च किया जाता है इसकी स्वीकृति व्यवस्थापिका सभा से प्राप्त होती है। बिना इसकी स्वीकृति के न तो कोई कर लगाया जा सकता है और न रुपये को किसी प्रकार खर्च किया जा सकता है।

३. **कार्यपालिका पर नियन्त्रण:**—वह राज्य जहां पर कि पार्लियामेन्ट्री सरकार प्रचलित है वहां पर व्यवस्थापिका सभा का कार्य पालिका पर पूरा पूरा नियंत्रण है। मन्त्री परिषद् के सदस्य व्यवस्थापिका सभा के सदस्यों में से ही चुने जाते हैं और मन्त्री परिषद् व्यवस्थापिका सभा को ही उत्तरदायी होती है। जब तक कि व्यवस्थापिका सभा के सदस्य मन्त्री परिषद् की नीति को स्वीकार करते हैं। तब तक वह अपना कार्य करती है। परन्तु जब कि वह उसका विरोध करने लगते हैं तब मन्त्री परिषद् को त्याग पत्र देना पड़ता है। यह प्रश्न पूछ कर, प्रस्ताव पास करा कर, बजट में कटौती प्रस्ताव, कार्य स्थगन प्रस्ताव, और अविश्वास के प्रस्ताव द्वारा कार्य पालिका पर नियन्त्रण रखती है। परन्तु राष्ट्रपति शासन प्रणाली में विधान सभा कार्यपालिका का एक दूसरे पर इतना नियंत्रण नहीं होता। इस प्रणाली में यह दोनों भिन्न २ महकमे होते हैं। विधान सभा कार्यपालिका के कार्यों में बाधा डाल सकती है, परन्तु वह उससे पद त्याग नहीं करा सकती।

४. **कार्यपालिका और न्यायालय के अधिकार:**—अमेरिका में विधान सभा का उच्च सदन (Senate) कार्य पालिका के कुछ कार्यों में भाग लेता है। वह राष्ट्रपति द्वारा संघीय पदों पर की गई नियुक्तियों और परराष्ट्रों के साथ की गई संधियों पर अपनी स्वकृति देता है। फ्रांस, और ब्रिटेन में विधान सभा न्याययिक कार्य भी करती है।

कार्यपालिका:—कार्यपालिका सरकार के उस अंग को कहते हैं जिसका कि काम विधान सभा या व्यवस्थापिका सभा द्वारा बनाये हुए कानूनों को कार्य रूप में लाना है। बड़े दृष्टिकोण से देखा जाय तो कार्यपालिका में राष्ट्रपति या प्रधानमन्त्री से लेकर छोटे से छोटा कर्मचारी जो कि राज्य प्रबन्ध में भाग ले रहा है वह सब इसमें सम्मिलित हैं। परन्तु छोटे दृष्टिकोण से इसमें राज्य का सर्वे सर्वा और उसके साथी सम्मिलित किये जाते हैं। इस प्रकार से इंगलैन्ड की कार्य

पालिका में राजा और मन्त्री परिषद भी शामिल है और अमेरिका की कार्यपालिका में वहां का राष्ट्रपति और मन्त्री परिषद शामिल किये जाते हैं।

१. कूटनीतिक:—(Diplomatic) कूटनीतिक कार्यों के अन्तर्गत कार्यपालिका अन्य देशों से राजनीतिक और व्यापारिक संधियां करती है और परराष्ट्रों के साथ सम्बन्ध स्थापित करती है और निवेदित स्वतन्त्र राज्यों की स्वतन्त्रता को मान्यता प्रदान करती है और युद्ध की घोषणा और शान्ति स्थापित कराना यह भी सब कार्यपालिका का ही काम है।

२. प्रशंसनीय कार्य:—कार्यपालिका का दूसरा कार्य राज्य प्रबन्ध से सम्बन्ध रखता है इसके अन्तर्गत कार्यपालिका उच्च अधिकारियों की नियुक्ति करती है और व्यवस्थापिका सभा द्वारा स्वीकृत कानूनों को कार्य रूप का वस्त्र पहनाती है। वह राज्य की नीति का भी निर्माण करती है। इस प्रकार राज्य प्रबन्ध की सब जिम्मेदारी उस पर ही है।

३. सैनिक कार्य:—सैनिक कार्य के अन्तर्गत कार्यपालिका राज्य को विदेशी आक्रमणों से बचाने के लिये रक्षा का प्रबन्ध करती है इसके लिये वह एक दृढ़ एवं संगठित सेना रखती है। इसका प्रबन्ध उसी के हाथ में होता है और वह देश में आन्तरिक शान्ति स्थापित रखने के लिये पुलिस और जेल का प्रबन्ध करती है।

४. न्यायायिक कार्य:—न्यायायिक कार्य के अन्तर्गत कार्यपालिका एक अच्छा न्याय का प्रबन्ध रखती है। ताकि अपराधियों को सजा मिले और राज्य में न्याय हो, कार्यपालिका ही न्यायाधीशों की नियुक्ति करती है। और कार्यपालिका को यह भी अधिकार है कि अपराधियों के दण्ड में कमी अथवा परिवर्तन कर दे।

५. कानूनी अधिकार:—केबिनेट प्रणाली में कार्यपालिका

विधान सभा का अधिवेशन बुलाती है और उसके कार्यों के लिये समय निर्धारित करती है। विधान सम्बन्धी कार्यों का श्री गणेश भी कार्य पालिका द्वारा होता है, वही विधेयक का प्रारूप तैयार करती है उनको सदन में प्रस्तुत करती है और विधान सभा द्वारा पास कराती है, परन्तु राष्ट्रपति शासन में कार्यपालिका को ऐसा कोई अधिकार नहीं होता यद्यपि विधान सभा द्वारा स्वीकृत कानून पर उसे स्थाई निषेध अधिकार प्राप्त होता है।

न्यायपालिका:—न्यायपालिका सरकार के उस अंग को कहते हैं जिसका कि कार्य एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से या एक व्यक्ति का सरकार से जो भेद भाव हो जाता है उसका फैसला करना है, न्यायपालिका के निम्नलिखित कार्य हैं।

१. भेद-भाव का निर्णय करके अपराधी को दण्ड देना:- जब कि एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से या एक व्यक्ति का सरकार से भेद भाव हो जाता है तो इसके पक्ष और विपक्ष की गवाही और सफाई सुन कर न्यायाधीश यह निर्णय करता है कि व्यक्ति ने कानून का उलंघन किया है या नहीं और यदि वह अपराधी होता है तो वह उसे कानून के अनुसार दण्ड देता है।

२. कानून की व्याख्या:—न्यायविभाग का दूसरा काम व्यवस्थापिका द्वारा बनाये हुए कानूनों की व्याख्या और परिभाषा करना है।

३. नया अर्थ निकाल कर कानून का विस्तार करना:— न्याय विभाग कुछ व्यवस्थापिका के काम भी करती है, अथवा वह कानून भी बनाती है। कानून कितनी ही होशियारी से क्यों न बनाया जाय परन्तु भविष्य की तमाम स्थितियों और आवश्यकताओं की उसके द्वारा पूर्ती नहीं हो सकती है। जो कि समय समय पर न्यायालय के सामने आती है। न्यायाधीश को ऐसी स्थिति में कानून के नये मायने और

नये अर्थ निकालने होते हैं। बाद में इस निर्णय को इस प्रकार के दूसरे मुकदमों में कानून मान कर पालन किया जाता है और यही न्यायाधीश द्वारा बनाये हुए कानून मान लिये जाते हैं।

व्यवस्थापिका या धारासभा का संगठनः—जो मनुष्य कि जूता पहनता है, उसी को यह ज्ञान हो सकता है कि जूते की कील किस जगह कितनी मात्रा में उसको दुःख दे रही है। यही सिद्धान्त राजनैतिक क्षेत्र में लागू किया जाता है। खुद व्यक्ति को ही यह ज्ञान होता है कि उसके दुःख दर्द और बुराइयाँ क्या हैं और वह किस प्रकार से दूर की जा सकती हैं इस कारण व्यवस्थापिका के सदस्य लोगों के चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं ताकि वह लोगों की बुराइयां दूर करें और अच्छाइयों के विकास के लिये कानून बनाने में सफल हों।

दो सभाओं का होनाः—आज कल हर एक राज्य में व्यवस्थापिका सभा में दो सभाएँ रहती हैं। एक तो उच्च सभा (Upper House) और दूसरी लोक सभा (Lower House) इंगलैन्ड में उच्च सभा को (House of Lords) अमरीका में सीनेट (Senate) और भारत में राज्य परिषद् कहते हैं। निम्न सभा का नाम इंगलैन्ड में हाउस आफ कॉमन्स (House of Commons) अमरीका में हाउस आफ रिप्रेजेन्टेटिव (Houe of Representative) और भारत में लोक सभा है।

लोक सभा का महत्वः—लोक सभा (Popular Chamber) जनता के मत द्वारा चुनी जाती है। उच्च सभा की अपेक्षा यह अधिक शक्तिशाली होती है। प्रायः सरकारी खर्च पर नियन्त्रण रखने की और नये करों की स्वीकृति देने की सर्व शक्ति इसी के हाथ में रहती है। जिन देशों से मन्त्री मंडल प्रधान शासन होता है। उनमें मन्त्री मण्डल में भी इसका पूरा नियन्त्रण होता है।

दो सभाओं के गुण

१. निम्नसभा के आवेश पर उच्च सभा द्वारा अंकुशः—
आज कल करीब करीब तमाम राज्यों में निम्न लिखित कारणों से दो सदन होते हैं। पहला तो यह है कि उच्चसभा निम्नसभा पर नीरिक्षक का काम करती है। उच्चसभा का मुख्य कार्य निरिक्षण और रोक थाम है। कभी कभी ऐसा होता है कि निम्नसभा के सदस्य जनता के आवेश के प्रभाव में आ जाते है और कभी कभी बिना सोचे समझे जल्दी में ऐसा कानून बना देते हैं जो कि जनता के लाभ का नहीं होता है। ऐसी सम्भावना को दूर करना ही उच्च सभा का कार्य है। वह कानून के बनाने में देर कर सकती है। क्योंकि कानून दोनों सभाओं की स्वीकृति से बनता है। उच्च सभा उस समय तक उसको पास होने से रोक सकती है जब तक कि लोगों का आवेश शान्त न हो जाये और फिर पूरी तौर से सोच विचार हो सकता है और जो बुराइयां रह गई हैं वह दूर हो सकती हैं।

२. उच्चसभा द्वारा प्रस्ताव की भली भांति देख-भालः—
रोक थाम के सिवाय उच्चसभा का एक काम निरीक्षण करना या कार्य को दोहराना है। निम्नसभा के सामने बहुत काम रहता है। अधिक कार्यों का कारण यह हो सकता है कि प्रस्तावों को इतनी अच्छी तरह न देख सकें जितनी अच्छी तरह देखना चाहिये। उच्चसभा के पास अधिक काम नहीं रहता इसलिये उसके सामने जो प्रस्ताव आते हैं उनकी वह पूरी तौर से देख भाल कर सकती है।

३. उच्चसभा द्वारा विशेष वर्गों के स्वार्थों की पूर्तीः—
तीसरा लाभ यह है कि उच्चसभा में देश के विशेष वर्ग और स्वार्थों का प्रतिनिधित्व हो सकता है। संघशासन में निम्नसभा में सारी जनता का प्रतिनिधित्व रहता है, परन्तु उच्चसभा में सब प्रान्तों को प्रायः बराबर प्रतिनिधित्व मिलता है। इस प्रकार उच्चसभा द्वारा

स्वार्थों का प्रतिनिधित्व हो जाता है।

४. उच्चसभा द्वारा निम्नसभा पर नियन्त्रण:—अन्त में जैसा कि मिल ने बहुत पहले लिखा था कि यदि शक्ति पर नियन्त्रण न रहे तो वह स्वेच्छाचारी हो जाती है। यदि निम्नसभा की शक्ति पर कोई रोक लगाने वाली संस्था न रहे तो वह भी स्वेच्छाचारी हो सकती है। उच्चसभा के रहने से निम्नसभा की स्वेच्छाचारी प्रवृत्तियों पर लगाम लगी रहती है।

दो सदनों के दोष:—लास्की (Laski) जैसे बहुत से आज के विद्वानों के मत में उच्च सभा अनावश्यक है। उनका कहना है कि उच्च सभा निम्नसभा (लोक सभा) की इच्छा पर रोक थाम नहीं लगा सकती है। निम्न सभा जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करती है, और प्रजातन्त्र में जनता की इच्छा पर कोई रोक थाम नहीं लगा सकती है।

(२) दूसरे उनका कहना है कि यदि उच्चसभा निम्नसभा से सहमत होती है तो वह बेकार है। यदि वह सहमत नहीं होती है तो वह हानिकारक है क्योंकि वह निम्नसभा में जनता के प्रतिनिधियों को जनता की इच्छा पूरी करने में बाधा डालेगी।

(३) तीसरे उच्चसभा में प्राय: धनिक वर्गों के प्रतिनिधि रहते हैं। उससे यह धनिक वर्ग प्रगतिशील कार्यों के विरोधी रहते हैं। इस प्रकार धनिक वर्ग उन्नति में बाधक हो सकती है। इन सब कारणों से कुछ लोग दोहरी व्यवस्थापिका के पक्ष में नहीं है। परन्तु अधिकतर लोगों ने पक्ष में ही राय प्रकट की है और आज कल कोई भी ऐसा राज्य नहीं है, जहां पर दो सदन न हों।

कार्यकारिणी का संघठन:—कार्य कारिणी का संघठन सरकार पर निर्भर है। पार्लियामेन्टरी सरकार में दो सर्वे सर्वा होते हैं। एक तो राज्य का सर्वे सर्वा जो कि राजा हो सकता है जैसा कि इंगलैन्ड में है या लोगों के द्वारा चुना हुआ प्रतिनिधी होता है जो कि राष्ट्रपति कहलाता है राजा या राष्ट्रपती राज्य का सर्वे-सर्वा होता है वह नाम मात्र का

होता है उसके कोई अधिकार या जिम्मेदारियां नहीं होती। यद्यपि वह राज्य का प्रधान होता है परन्तु उसके हाथ में वास्तविक अधिकार या शक्ति नहीं होती है। वास्तविक शक्ति कार्यकारिणी के मन्त्रीमन्डल में होती है। मन्त्रीमन्डल में कई व्यक्ति होते हैं। यह व्यवस्थापिका सभा के सदस्य होते हैं और जब तक उन्हें व्यवस्थापिका सभा के अधिकांश सदस्यों का समर्थन प्राप्त रहता है, तब तक वे अपने पदों पर रहते हैं। मन्त्रीमन्डल का मुखिया प्रधानमन्त्री कहलाता है।

दो प्रकार की कार्यपालिकाः—मन्त्री लोग तो Political Executive कहलाते हैं याने राजनैतिक कार्यपालिका! यह राजनैतिक दल के सदस्य होते हैं और इनका कोई निश्चित समय नहीं होता। जब कि सरकार में परिवर्तन होता है तो इन लोगों को पद छोड़ना पड़ता है। इनकी सहायता के लिये स्थाई कार्यपालिका होती है। जिसमें सेक्रेटरी और अन्य कर्मचारी सम्मिलित होते हैं। यह लोग न तो किसी राजनितिक दल के सदस्य होते हैं और न इनको राजनीतिक मामलों में भाग लेने का अधिकार होता है। वह योग्यता के आधार पर चुने जाते हैं और स्थाई तौर पर सरकार का कार्य करते हैं वे कई कई कार्यों में काम करते हैं और हर एक कार्य के ऊपर एक मन्त्री होता है जो कि लोगों का प्रतिनिधि होता है और उसकी सहायता के लिये एक सेक्रेटरी होता है जो कि स्थाई कार्यपालिका का सबसे बड़ा अफसर होता है, और सरकार के कार्यों में निपुण होता है। इन दोनों की सहायता से सरकार का कार्य चलता है।

राष्ट्रपति प्रणाली में कार्यकारिणी का संगठनः— इस सरकार में राष्ट्र पति कार्यकारिणी का प्रधान होता है। जो जनता द्वारा एक निश्चित अवधि के लिये चुना जाता है। वह राज्य का सर्व सर्वा भी होता है। और इस कारण उसके हाथ में पूरी शासन शक्ति होती है। वो अपनी सहायता के लिये कुछ मन्त्री रख सकता है जो

केवल उसके सलाहकार होते हैं। मन्त्रीमण्डल के नीचे बहुत से नौकर पेशा कर्मचारी होते हैं। जो विभिन्नतर विभागों का काम मन्त्रीमण्डल या राष्ट्रपति की आज्ञा और नीति के अनुसार चलाते है। इन्हें नौकर पेशा (Civil Services) कहा जाता है। इनका चुनाव प्रतियोगता परीक्षा द्वारा होता है और इनकी नौकरी स्थाई होती है। कार्यकारीणी में कई विभाग होते हैं, जैसे गृह, रक्षा, विदेश सम्बन्धी, अर्थ, न्याय, शिक्षा, व्यवसाय इत्यादि!

न्यायालय का संघठनः—न्यायालय का कार्य व्यक्ति के अधिकार और सम्पत्ति की रक्षा करना है और इस दृष्टिकोण से यह विभाग अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि जितना ही ऊंचे दर्जे का न्याय होगा उतना ही लोगों का सरकार में भरोसा अधिक होगा। इस कारण पहली चीज तो न्यायधीश है जिसमें निम्नलिखित खूबियां होनी चाहिये।

न्यायाधीश के आवश्यक गुण

१. कानून का ज्ञान व उसका अर्थ निकालने की योग्यताः- पहली चीज जो न्यायाधीश में आवश्यक है वह यह है कि उसको कानून का पूरा पूरा ज्ञान होना व कानून का पूरा पूरा अर्थ निकालने की योग्यता होनी चाहिये।

२. सत्य और तत्व की बातें निकालने की योग्यताः— उसका शान्तिप्रिय स्वभाव होना चाहिये। लोगों के जोश और उनकी बात चीत से उसको किसी के पक्ष और किसी के विरोध में नहीं हो जाना चाहिये, और एक दूसरे के विपरीत जो गवाही दी जाती है उसमें से सत्य और तत्व की बातें निकालने की योग्यता होनी चाहिये और दोनों फरीकेन, अपने अपने पक्ष में बहस करे उस बहस के द्वारा उसको वास्तविकता समझाने की योग्यता होनी चाहिये।

३. लोभ से प्रभावित न होनाः—तीसरी गुण जो उसमें

होना चाहिये वह ईमानदारी है । कितना ही उसको लोभ क्यों न दिया जाय, उसको न्याय के पथ से नहीं हटना चाहिये ।

निष्पक्ष होकर जनता में विश्वास उत्पन्न करना:—चौथा गुण जो उसमें होना चाहिये वह यह है कि उसको किसी का पक्ष नहीं लेना चाहिये और हमेशा सत्य पर ही उसे रहना चाहिये, सत्य को स्वीकार करना और उसके पक्ष में निर्णय करना और असत्य को अस्वीकार करना और उसके विरुद्ध निर्णय करना यही उसका ध्येय होना चाहिये, जब ही वह ठीक से न्याय कर सकता है और न्यायालय में लोगों का भरोसा उत्पन्न करा सकता है ।

न्यायालय की स्वतन्त्रता का महत्व:—प्रथम तो वह प्रजातन्त्र राज्य में शान्ती स्थापित रखती है राज्य के लोगों की स्वतन्त्रता दृढ़ करती है । इस राज्य में हर एक नागरिक के अधिकार होते हैं और उसकी सम्पत्ति और अधिकारों पर कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता । इन अधिकारों को कुचलने का सरकार को भी अधिकार नहीं होता है। यदि सरकार अनुचित कानून बना कर या किसी और प्रकार की ज्यादती करके व्यक्ति के अधिकारों को कुचलने का प्रबन्ध करे तो न्यायालय का यह कर्तव्य है कि सरकार को ऐसा करने से रोके । आज कल के समय में न्यायालय के सामने एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के झगड़े ही निश्चय होने नहीं आते हैं बल्कि इसके साथ २ न्यायालय को ऐसे झगड़े भी तय करने पड़ते हैं जिनमें कि व्यक्ति सरकार पर दोष लगा कर उसका न्याय चाहता है । एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के झगड़े का न्याय कराना आसान है। क्योंकि इसमें सरकार की किसी भी प्रकार की रुचि नहीं होती है । परन्तु जहाँ सरकार पर दोष लगाया जाता है ऐसी स्थिति में न्यायालय जब ही न्याय कर सकता है जब कि उस पर सरकार तथा कार्यकारिणीसभा का किसी भी प्रकार का दबाव नहीं हो । यदि न्यायालय कार्यकारिणीसभा के आधीन हो तो यह प्रत्यक्ष है कि वह उच्चकोटि का न्याय नहीं कर सकती । न वह अपने

न्याय से लोगों में भरोसा ही पैदा कर सकती है। इन कारणों से न्यायालयों का स्वतन्त्र होना आवश्यक है। आज कल जो विधान बने हैं उनमें इस बात पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है कि न्यायालय पर कार्य कारणी सभा का किसी भी प्रकार का अंकुश नहीं होवे, ताकि वह उचित रूप का न्याय कर सके और लोगों में न्यायालय के प्रति विश्वास उत्पन्न कर सके।

न्यायाधीश के नियुक्ति के तरीके:—इनकी नियुक्ति तीन प्रकार से होती है। एक तो चुनाव के द्वारा नियुक्ति करना जैसा कि अमरीका के कुछ राज्यों में होती है (२) दूसरा व्यवस्थापिका द्वारा चुनाव करके नियुक्ति करना जो कि स्विटज़रलैन्ड में प्रचिलित है। (३) तीसरा तरीका कार्य कारिणी द्वारा नियुक्ति करना है जैसा कि इंगलिस्तान, हिन्दुस्तान और अन्य दूसरे देशों में प्रचलित है।

पहले और दूसरे तरीके की आलोचना:—पहला तरीका अनुचितसा मालुम होता है क्योंकि न्यायाधीश की आवश्यकता योग्यता, कानून का ज्ञान, उसको प्रयोग में लाने की लियाकत और वगैर पक्ष के निर्णय करना है। साधारण जनता में इतनी योग्यता नहीं है कि वह इन बातों का ठीक तौर से निर्णय कर सके और इस कारण लोगों के मत द्वारा न्यायाधीश के नियुक्त करने का तरीका उचित नहीं मालुम होता। दूसरे तरीके के अनुसार यदि व्यवस्थापिका द्वारा नियुक्त किया जाय तो बहुमत दल अपने ही आदमी की नियुक्ति करेगी, और फिर योग्य पुरुष की नियुक्ति न होने के कारण न्याय नहीं हो सकेगा।

कार्यकारिणीसभा द्वारा नियुक्ति:—सबसे अच्छा तरीका कार्यकारिणीसभा द्वारा नियुक्ति का है। इसमें पहली बात तो यह है कि कार्यकारिणीसभा न्यायाधीश के लिये जो गुण होते हैं उनका ध्यान रखते हुए नियुक्ति करे और नियुक्ति करने के बाद न्यायालय पर किसी प्रकार का दबाव नहीं होना चाहिये, यह तभी हो सकता है कि प्रथम

तो न्यायाधीश के लिये एक निश्चित वेतन तय कर लेना चाहिये और जो वेतन नियुक्ति करने से पहले तय हो चुका है, उसमें नियुक्ति होने के बाद उसको कम या ज्यादा करने का कार्यकारिणी को अधिकार नहीं होना चाहिये। दूसरे न्यायाधीश के लिये एक निश्चित अवधि पहले से तय कर लेनी चाहिये, और यह भी तय होना चाहिये कि एक निश्चित आयु तक वह अपना काम करता रहेगा और उसके बाद उसको पेन्शन मिल जायेगी, और उस आयु से पहले कार्यकारिणीसभा उसको पद छोड़ने पर मजबूर नहीं कर सकेगी, तीसरे उसके कार्य में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होगा और जो बात न्यायालय के सामने प्रस्तुत है उस पर न तो कार्यकारिणीसभा और न व्यवस्थापिकासभा, किसी प्रकार की राय दे और न आलोचना करे। जहाँ पर इन बातों का ख्याल रखा जाता है वहां पर कार्यकारिणी की नियुक्तियों ने बहुत सफलता प्राप्त की है और लोगों की स्वतन्त्रता की रक्षा की है।

कार्यशक्ति के विभाजन का सिद्धान्तः—हम पहले बतला चुके हैं कि हर राज्य में सरकार के तीन अंग होते हैं। इन तीनों अंगों में आपस में क्या सम्बन्ध होना चाहिये, इसके सम्बन्ध में लेखकों में अधिक भेद भाव हैं। नितिज्ञ दो वर्गों में विभक्त हैं। एक वर्ग का मत है कि धारासभा का दूसरे अंगों पर प्रभुत्व होना चाहिये क्योंकि कानून बनाने का अधिकार शेष सम्पूर्ण अधिकारों से बड़ा है। दूसरे वर्ग का विचार है कि तीनों अंगों के कर्मचारियों का एक दूसरे में किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होना चाहिये और वे एक दूसरे से पूर्णतया स्वतन्त्र हों, इस सिद्धान्त को "अधिकार पृथक्करण सिद्धान्त" कहते हैं।

अठारहवीं शताब्दी में फ्राँस के लेखक मौन्टेसक्यु (Montesquieue) इस सिद्धान्त के सबसे बड़े समर्थक थे। इंगलैन्ड में इस सिद्धान्त का समर्थक ब्लेक स्टोन था। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रधानतः नागरिकों की स्वतन्त्रता के लिये किया गया था। इस सिद्धान्त का सार निम्नलिखित है:—

तीनों अंगों का अलग अलग प्रबन्ध होनाः—इस सिद्धान्त के अनुसार यदि अंगों का विभाजन न किया जायगा तो व्यक्ति की स्वतन्त्रता में बाधा पड़ेगी। उनका कथन है कि जहाँ व्यवस्थापिकासभा और कार्यकारिणीसभा के अधिकार एक ही व्यक्ति या व्यक्तियों के समूहों के हाथ में होंगे वहाँ स्वतन्त्रता स्थापित नहीं रह सकती क्योंकि ऐसी स्थिती में कठोर कानून बनेंगे और कठोरता से ही उनका पालन कराया जायगा। इसी प्रकार से यदि न्यायालय पर उन व्यक्तियों का आधिपत्य है जो कि कानून बनाते हैं तो ऐसी स्थिती में भी व्यक्ति की स्वतन्त्रता कायम नहीं रह सकती। और यदि न्यायालय पर कार्यकारिणी का आधिपत्य है तो भी उच्चकोटि का न्याय नहीं हो सकता है और वहाँ पर अत्याचार ही होगा। उस जगह बिल्कुल अंधेर नगरी होगी जहाँ कानून या नियम बनाना, उसको लागू करना और न्याय करना, यह तीनों विभाग एक ही व्यक्ति के हाथ में या समुदाय के आधिपत्य में हों। इन कारणों से मोन्टेसक्यु साहब का सिद्धान्त है कि यह तीनों विभाग अलग अलग और स्वतन्त्र होने आवश्यक हैं। तभी व्यक्ति की स्वतन्त्रता स्थापित रह सकती है।

आलोचनाः—

शक्ति के विभाजन से लाभ

१. योग्यता अनुसार कार्य सम्पादनः—अलग अलग विभागों के लिये सरकार के कर्मचारियों में भिन्न भिन्न खूबियों और गुणों का होना आवश्यक है। यदि एक ही विभाग में कुछ कर्मचारी लगातार कार्य करते रहें तो उनको उस विभाग के तमाम कार्यों का पूरा पूरा अनुभव हो जाता है, और वह उन कार्यों में निपुण हो जाते हैं जिससे कि प्रबन्ध सुधरता है और यदि तमाम विभागों से सम्बन्ध रखने वाले कार्य एक ही व्यक्ति के हाथ में हों तो उससे प्रबन्ध खराब हो जाता है, काम में देरी होती है, और वह काम को पूरा नहीं कर पाता और किसी भी विभाग के कार्य में निपुण नहीं हो पाता।

२. निरंकुशता तथा अत्याचार से रक्षाः—सत्ता के पृथक्करण के कारण शासन के तीनों विभाग एक दूसरे से अलग होते हैं उनके अधिकार और कार्य क्षेत्र भी एक दूसरे से भिन्न होते हैं। परन्तु तीनों विभाग एक दूसरे से पृथक होते हुए भी एक दूसरे पर अंकुश का कार्य करते हैं। यदि विधानसभा अन्याय मूलक कानून बनाती है तो न्यायपालिका उसे अवैध घोषित कर सकती है। यदि कार्य-पालिका जनता का दमन करती है तो न्यायपालिका जनता की रक्षा करती है और न्यायाधीश स्वेच्छाचारी बनने की कोशिश करता है तो विधान सभा उसे पदच्युत कर सकती है। इस प्रकार जनता का जीवन और उसकी स्वतन्त्रता सुरक्षित रहती है।

शक्ति के विभाजन से कठिनाइयां

१. सरकार एक सावयव एकताः—(Organic Unity) सरकार के इन तीन अंगो को एक दूसरे से पूर्णतया पृथक करना सम्भव नहीं। सरकार एक मशीन वा यन्त्र है। उसके अंगो को पृथक पृथक कर देने पर यह काम नहीं कर सकती। राज्य एक ऐसी ईकाई है, जिसके हित के लिये हम समग्र सरकार पर विश्वास कर सकते हैं, परन्तु उसके एक अंग पर नहीं।

२. अंगो को अलग करना असम्भवः—जैसा कि हम लिख चुके हैं कि सरकार मशीन के समान इकाई है। जिस प्रकार के मशीन के पुर्जे अलग अलग कर दिये जाँय तो वह कार्य नहीं करेगी, इसी प्रकार अंगों का विभाजन पूरी तरह किया जाय तो वह हानिकारक होगा। हर एक अंग के अधिकारी अपने अधिकारों की रक्षा के लिये दूसरे अंगो के अधिकारियों का निरादर करेंगे। इस प्रकार पग पग पर राज्य शासन में बाधाएँ उपस्थित होंगी, सरकार की शक्ति घट जायेगी और नागरिक जीवन का सुख भी घट जायेगा।

३. अंगो का एक दूसरे को ढ़क लेनाः—सरकार के अंगों

के कार्य इस प्रकार के हैं कि वह कई जगह एक दूसरे को ढकलेते हैं। कार्यकारिणी जिसका कि काम कानून को लागू करना है उसको समय समय पर कानून बनाने पड़ते हैं जिससे कि शासन प्रबन्ध उचित रूप से हो सके। न्यायाधीश कानूनों के अर्थ निकाल कर बनाने वालों के अर्थ से अधिक व्यापक अर्थ और उपयोगिता स्थापित करते हैं। व्यवस्थापिका सभा को भी ऐसे कार्य करने पड़ते हैं जिनमें कानून बनाने का कोई सम्बन्ध नहीं। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि यदि वास्तव में शक्ति का सम्पूर्ण रूप से पृथक्करण किया जाय तो सरकार के अंग अपने कार्य सुगमता पूर्वक नहीं कर सकते।

४. अंगों के अधिकार समान नहीं होना:—इस सिद्धान्त का यह अनुमान मिथ्या है कि सरकार के तीनों अंग समान शक्तिवान हैं। वास्तव में तीनों विभागों में व्यवस्थापिका सभा अधिक शक्तिशाली है यह वित्तीय नियन्त्रण के द्वारा कार्यपालिका पर अंकुश रखती है। न्यायपालिका का क्षेत्राधिकार निर्धारित कर यह उस पर भी नियन्त्रण रखती है। और इस प्रकार शेष अंगों को उसकी आज्ञाओं को ध्यान में रख कर काम करना पड़ता है।

५. सिद्धान्त का महत्व:—व्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये शासन अधिकारों का विभाजन आवश्यक नहीं है। अधिकारों के विभाजन के बिना भी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा की जा सकती है। स्वतन्त्रता जनता के दृष्टिकोण और भावना पर निर्भर है। न कि सरकारी विभाजन पर। इंगलैन्ड की जनता अमेरिकन जनता से किसी दशा में कम स्वतन्त्र नहीं है। हालांकि इंगलैन्ड में इस सिद्धान्त के विरुद्ध कार्य होता है इस सिद्धान्त का तत्व यह है कि हर विभाग अपना ही कार्य करे और दूसरे विभाग के तमाम कार्यों को हड़प न कर जाय।

अमेरिकन और ब्रिटिश शासन विधानों में शक्ति विभाजन का सिद्धान्त:—इस सिद्धान्त का प्रचलन पूरी तौर से किसी

भी देश में नहीं किया गया है। ब्रिटेन की शासन प्रणाली में कार्य कारिणी शक्ति मन्त्रीपरिषद् के हाथ में रहती है, जो कि व्यवस्थापिका सभा के सदस्य होते हैं और अपने कामों और नीति के लिये उसके प्रति जिम्मेदार होते हैं। इसलिये ब्रिटिश मन्त्रीमण्डल के हाथ में व्यवस्थापिका और कार्य कारिणी दोनों की शक्तियां होती हैं। लार्ड चान्सलर मन्त्री मण्डल अर्थात कार्यकारिणी का सदस्य होता है, परन्तु साथ ही वह हाऊस आफ लार्डसका सभापति भी होता है और वह न्याय सभा का भी प्रधान होता है। इसलिये उसके हाथ में न्याय और कार्य कारिणी के अधिकारों का मिश्रण होता है। यह सब शक्ति के विभाजन के सिद्धान्त के विरोध में हैं।

अमेरिका का विधानः—अमेरिका में यह सिद्धान्त लागू किया गया है। शासन की तीन प्रकार की शक्तियां तीन विभिन्नतर भागों को सौंप दी गई हैं। जो एक दूसरे से काफी हद तक स्वतन्त्र हैं। कार्य कारिणी का प्रधान प्रेसीडेन्ट होता है, जो कि जनता द्वारा चुना जाता है वह व्यवस्थापिका सभा का सदस्य नहीं हो सकता न उसमें बैठ सकता है। परन्तु अमेरिका की व्यवस्थापिका सभा जो कि कांग्रेस कहलाती है, यदि कोई बिल वहां स्वीकार हो जावे तो जब तक कि प्रेसीडेन्ट की स्वीकृति न आये वह लागू नहीं हो सकती, और प्रेसीडेन्ट को अधिकार है कि वह उसको अस्वीकार करके कांग्रेस की दोनों सदनों को विचार के लिये दुबारा भेज दें कांग्रेस में दो सदन हैं, एक तो सीनेट और दूसरा हाउस आफ रिप्रजेन्टेटिव है। प्रेसीडेन्ट जो बड़े कर्मचारियों की नियुक्ति करता है, उनकी सीनेट द्वारा स्वीकृति होना आवश्यक है। इन सब बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि कार्य शक्ति के विभाजन का सिद्धान्त पूरी तौर से लागू नहीं होता।

सारांशः—सरकार के तीन अंग हैं, पहला व्यवस्थापिका सभा जिसके चार कार्य हैं। (i) कानून रचना (ii) कर निर्धारित करना (iii) कार्यपालिका पर नियन्त्रण (iv) कार्यपालिका और न्यायलय के अधिकार।

सरकार का दूसरा अंग कार्यपालिका है जिसके कि पांच कार्य हैं (i) कूटनीतिज्ञ (ii) प्रशासनीय कार्य (iii) सैनिक कार्य (iv) न्यायथिक कार्य (v) कानूनी अधिकार। सरकार का तीसरा अंग न्यायपालिक है जिसके कि तीन कार्य हैं (i) भेदभाव का निर्णय करके अपराधी को दण्ड देना (ii) कानून की व्याख्या करना (iii) नया अर्थ निकाल कर कानून का विस्तार करना।

सरकार के तीनों संघठन का हमने वर्णन किया है. उसका अध्ययन करो। व्यवस्थापिका सभा में दो सभायें क्यों होती हैं इसको याद करना आवश्यक है क्योंकि यह कभी २ परीक्षा में पूछ लिया जाता है। न्याय पालिका के संगठन में हमने न्यायाधीश के आवश्यक गुण और न्यायालय की स्वतन्त्रता का महत्व का भी वर्णन किया है इसको भी समझ कर याद करना आवश्यक है क्योंकि यह कभी २ परिक्षा में पूछ लिया जाता है और दूसरी किताबों में ठीक तौर से नहीं दिया गया है।

शक्ति के विभाजन का सिद्धान्त इस अध्याय में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है इसका हमने संक्षेप में वर्णन किया है, इसको याद करना अधिक आवश्यक है और इन्हीं हैडिन्गज में लिखने पर पूरे नम्बर मिलने की सम्भावना रहती है।

Questions

1. Name the various organs of the government & discuss their functions ? (1947.)
2. On what basis the modern lagistature is organised Mention arguments for and against bicameral Legislature 1943.
3. What do you mean by political Executive and Permanant Executive ? Diseuss their positions in modern states.
4. What are the qualities which a good Judge ought possess ?
5. Why is it important to secure the independence of the Jdiciary from Executive control & Interference ?
6. What are the main functions of the lagislature ? How does it control the policy of the Executive.
7. What are the main functions of the Executive in a Democratic state ? Discuss its relation with the lagislature.
8. Explain the Principle of seperation of powers and Indicate its limitations (Q. No. 4 of 1953)

These questions have been dealt with thoroughly and they should be studied under proper headings when only good marks can be obtaind.

9, What is the meaning of separation of powers'? Point out its merits. Illustrate your answer by a concrete example (1944, 1952).

10. Explain the respective functions of the Legislature and Executive. What do you think to be the relation of the two. (1941, 1949)

11. What are the functions of the Judiciary and how does it work as supplement and check to that of the Legislature and Excentive (1942, 1945, 1953)

इस प्रश्न का अर्थ यह है कि न्यायपालिका व्यवस्थापिकासभा के कार्य में भाग लेती है और साथ साथ व्यवस्थापिकासभा और कार्यकारिणीकसभा पर अंकुश भी रखती है।

न्यायपालिका का व्यवस्थापिका का कार्य क्रमः—भविष्य की सारी बातों का ज्ञान पहले से नहीं हो सकता और कभी २ ऐसे अभियोग होते हैं जिसके निर्णय के लिये वर्तमान कानून लागू नहीं होता ऐसे अवसर पर न्यायपालिका या तो कानून की नवीन व्याख्या द्वारा अथवा अपनी विवेक शक्ति द्वारा निर्णय देती है भविष्य में ये निर्णय अन्य न्यायलयों के लिए प्रमाण बन जाता है जो कि अंग्रेजी में (Judicial Precedents) कहलाते हैं।

व्यवस्थापिकासभा पर अंकुशः—लिखित और संग आत्मिक विधान में न्यायपालिका को ये भी अधिकार है कि यदि केन्द्रीय सरकार की व्यवस्थापिकासभा कोई ऐसे कानून बनाले जो कि विधान द्वारा अधिकारों के विरोध में हो तो ऐसी स्थति में न्यायपालिका उस कानून को वह वैधानिक निर्णय कर सकती है और यह कानून लागू नहीं किया जाता इस न्यायपालिका के इस अधिकार को अंग्रेजी में (Judicial review) कहते हैं।

कार्यकारिणी पर अंकुशः—न्यायपालिका की बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus) परमादेश (Mandamus) प्रतिषेध (Prohibition)

अधिकार पृच्छा (Quo warranto) और उत्प्रेषण (Certiorari) के लेख भी निकालने का अधिकार प्राप्त होता है।

१. **बन्दी प्रत्यक्षीकरण:**—(Habeas Corpus) यदि कार्यकारिणी का कोई कर्मचारी बगैर मजिस्ट्रेट की आज्ञा के गैर कानूनी तरीके से किसी को नज़र बन्द करले और यदि यह बात अर्जी के द्वारा उच्चतम न्यायालय तक पहुँचा दी जाय तो न्यायपालिका इस लेख के द्वारा कार्यकारिणी को हुक्म दे सकती है कि वह आदमी उसके सामने पेश किया जाय और यदि वह वास्तविक गैर कानूनी नज़रबन्द है तो वह उसको रिहा होने का हुक्म कर सकती है।

२. **परमादेश:**—(Mandamus) इस लेख द्वारा न्यायपालिका छोटी अदालत को या व्यक्ति को कोई काम जो कि उसकी जनता के प्रति जुम्मेदारी है उसको करने के लिए इस लेख द्वारा हुक्म दे सकती है

३. **प्रतिषेध:**—(Prohibition) इस लेख के द्वारा न्यायालय छोटी न्यायालय को ऐसा काम करने से रोक सकती है जो कि उसके अधिकारों के बाहर हों।

४. **अधिकार पृच्छा:**—(Certiorari) इस लेख के द्वारा छोटी अदालतें या कोई अन्य व्यक्ति जो कि न्याय सम्बन्धी कार्य कर रहा है उनको न्याय के आधार पर कार्य करने का हुक्म दे सकती है।

५. **उत्प्रेषण:**—(Quo warranto) इस लेख के द्वारा यदि कोई कर्मचारी अपने स्वयं के जो अधिकार है उनसे अधिक जुम्मेदारी अपने ऊपर ले रहा है और दूसरे की स्वतन्त्रता और अधिकार को कुचलना चाहता है तो ऐसी स्थिति में न्यायपालिका उसको इस प्रकार का कार्य करने का हुक्म दे सकती है कि वह गैर कानूनी कोई कार्य न करे। इन लेखकों के द्वारा न्यायपालिका कार्यकारिणी पर अपना अंकुश रखती है।

अध्याय दसवां

शासन विधान (Constitution)

आजकल की सरकार और मध्यकाल की सरकार में अन्तरः—सरकार अधिक समय से चली आ रही है। मध्यकाल में भी सरकार थी और आजकल भी सरकार है। मध्यकाल की सरकार और आजकल की सरकार में यह अन्तर है कि मध्यकाल में जनता को तो मनमानी करने से रोका जाता था, परन्तु सरकार मनमानी करती थी और उस पर किसी प्रकार का दबाव नहीं था। यदि कुछ दबाव था तो यह था कि जब सरकार अधिक अत्याचार करती तो जनता विद्रोह करने पर तुल जाती थी। और विद्रोह का भय सरकार को अधिक ज्यादती करने से रोकता था। समय बीतने पर समाज ने उन्नति की और उसको ज्ञान हुआ कि सरकार पर भी अंकुश होना आवश्यक है। शासन विधान उन नियमों को कहते हैं जिनके द्वारा सरकार पर अंकुश रहता है, इनका महत्व सरकार के लिये वही है जो कि कानून का साधारण जनता के लिये है।

शासन विधान की परिभाषाः—शासन विधान उन नियमों को कहते हैं जिनके आधार पर सरकार का संगठन होता है। इसमें यह वर्णन होता है कि सरकार की रूप रेखा क्या है। सरकार किन २ अंगों द्वारा कार्य करती है इन अंगों के कार्य क्या हैं? इन अंगों में कर्मचारी किस प्रकार से नियत किये जाँय? एक अंग का दूसरे अंग से क्या सम्बन्ध है? व्यक्ति के क्या २ अधिकार हैं? व्यक्ति का सरकार के भिन्न भिन्न अंगों से क्या सम्बन्ध है? सरकार का क्या ध्येय है? इसी प्रकार की अन्य बातें इसमें सम्मिलित होती हैं जिनसे सरकार चलाने में सुविधा होती है और व्यक्ति और सरकार की स्थिति साफ २ प्रगट हो जाती है। इन सिद्धान्तों और नियमों के संग्रह को शासन विधान कहते हैं।

शासन विधान की आवश्यकता और उससे लाभ

१. सरकार पर अंकुशः—शासन विधान द्वारा सरकार को मनमानी करने से रोका जाता है। शासन विधान सरकार के हाथ पैर बाँध देता है और सरकार कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकती है जो कि विधान के विरुद्ध हो और लोगों के लिये हानिकारक हो।

२. नागरिकों को अधिकारों का ज्ञानः—शासन विधान द्वारा नागरिकों को यह ज्ञान हो जाता है कि उनके अधिकार क्या हैं और सरकार और समाज के प्रति उनका क्या कर्तव्य है। इस प्रकार विधान से यह लाभ होता है कि सरकार यदि अपना कार्य विधान द्वारा करती रहे और नागरिक अपने उत्तरदायित्व को समझें तब फिर दोनों में भेद भाव होने की सम्भावना कम हो जाती है और समाज की तेजी से उन्नति होती है।

३. आर्थिक और सामाजिक उन्नति के लिये अवसरः—वैधानिक सरकार में भेद भाव कम होना और आपस में परस्पर का सहयोग होने के कारण रचनात्मक कार्यों के लिये काफी समय मिलता है। सरकार के कर्मचारी और जनता के योग्य पुरुष दोनों मिल जुल कर ऐसी २ योजनायें बनाते हैं जिनसे समाज की हर प्रकार की उन्नति होती है और इस प्रकार समाज का उत्थान होता है।

अच्छे विधान की विशेषता

१. एतिहासिक दृष्टिकोण की आवश्यकताः—एक राज्य की सरकार, उसकी एतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति पर निर्भर है। यह स्थितियां, भिन्न २ राज्यों में भिन्न २ होती हैं और इस कारण एक विधान जो कि किसी एक राज्य में किसी एक समय पर अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ है वही विधान दूसरे राज्य में दूसरे समय पर यदि लागू कर दिया जाय तो वह उतना

लाभदायक सिद्ध नहीं होता है। इस कारण विधान की विशेषता यही है कि वह अपने देश की स्थिति के अनुसार बनाया जाय।

२. सिद्धान्तिक बातों का ही वर्णन हो:—विधान वर्तमान स्थिति की पूर्ती के लिये ही नहीं होता है बल्कि भविष्य में वह कई शताब्दियों तक लागू रहता है जो विचार के आज प्रचलित हैं वही विचार भविष्य में अस्वीकार हो सकते हैं। इस कारण अच्छा विधान वह है जिसमें कि मोटी मोटी सिद्धान्तिक बातों का ही वर्णन किया हो और साधारण महत्व की बातें जो कि संसद के द्वारा समय २ पर लागू की जा सकती हैं उनका विधान में वर्णन नहीं हो। नहीं तो भविष्य जंजीरों में बंध जाता है और समाज की उन्नति रुक जाती है।

३. परिवर्तनशील हो:—अच्छे विधान को परिवर्तन शील होना चाहिये परन्तु अपरिवर्तनशीलता (rigidity) दो बातों पर निर्भर है प्रथम तो परिवर्तन करने के तरीके पर, द्वितीय विधान के विस्तार पर यदि विस्तार अधिक है तो वह अपरिवर्तनशील विधान का रूप ग्रहण कर लेता है। क्योंकि साधारण महत्व की बातें विधान में सम्मिलित कर लेने से उसका विस्तार अधिक हो जाता है और समय समय पर उसमें परिवर्तन लाने की आवश्यकता होती है। यदि उनमें मोटी मोटी सिद्धान्तिक बातों का ही वर्णन हो और परिवर्तन करने का तरीका कुछ मात्रा तक पेचीदा हो तो भी वह परिवर्तनशील विधान रहता है क्योंकि वर्तमान स्थिति की पूर्ती के लिये संसद द्वारा आसानी से कानून बन सकते हैं। उदाहरण रूप हमारा भारत का विधान है इसके विधान में परिवर्तन लाने का तरीका अधिक पेचिदा नहीं है, परन्तु इस पर भी लोग यही कहते हैं कि भारत का विधान अपरिवर्तनशील विधान है क्योंकि इसका विस्तार अधिक है। धारा नं० १२८ में यहाँ तक लिखा है कि रिटायर्ड न्यायाधीश को फिर दुबारा उच्चतम न्यायालय में कार्य करने की प्रार्थना की जा सकती है। ऐसी साधारण बातें सम्मिलित कर लेने से इसने अपरिवर्तनशील विधान का रूप ग्रहण कर लिया है।

विधान लागू करने के कुछ समय बाद ही इसमें परिवर्तन करना पड़ा और अब फिर परिवर्तन करने की आवाज़ें उठ रही हैं। इस दृष्टिकोण से हमारा विधान कुछ हद तक इतना विशेष नहीं है। जैसा कि हम लिख चुके हैं कि साधारण बातों के सम्मिलित कर लेने से भविष्य जंज़ीरों में बंध जाता है और समाज की उन्नति रुक जाती है।

४. मौलिक अधिकारों का वर्णनः—अच्छे विधान में मौलिक अधिकारों का वर्णन होना आवश्यक है क्योंकि इससे लोगों को अपने अधिकारों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। लोगों को उन्नति करने का अवसर मिलता है और कोई भी सरकार हो वह किसी भी वर्ग या दल पर किसी प्रकार का अत्याचार नहीं कर सकती।

५. न्यायपालिका की स्वतन्त्रताः—न्याय की विशेषता से ही सरकार की प्रभुता का ज्ञान हो सकता है और न्याय की विशेषता के लिये प्रथम और आवश्यक बात यह है कि न्यायपालिका स्वतन्त्र और निष्पक्ष होनी चाहिये, ताकि वह नागरिकों के अधिकारों की रक्षा कर सके और प्रजा में सरकार का भरोसा उत्पन्न कराये। न्यायपालिका का सबसे अधिक महत्व संघात्मिक सरकार में होता है। क्योंकि इस सरकार में और दूसरे अधिकारों के साथ साथ केन्द्र और ईकाइयों के भेद भाव का निर्णय भी इसके हाथ में होता है।

६. लोकसेवा आयोग (पब्लिक सर्विस कमीशन) की स्वतन्त्रताः—प्रजातन्त्र और अन्य सरकार की सफलता कर्मचारियों पर निर्भर है और यदि कर्मचारि लोग, ईमानदार, परिश्रमी और लोक सेवा भाव के दृष्टिकोण के और अच्छे चरित्र के हैं तो राज्य प्रबन्ध अच्छा होगा और यदि स्वार्थी लोग इसमें घुस जायेंगे तो प्रबन्ध बिगड़ेगा। अच्छे विधान में इनकी नियुक्ति पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इनकी नियुक्ति सरकार याने कार्यकारिणी पर छोड़ दिया जाय तो वह योग्यता का इतना ख्याल नहीं रखेंगे बल्कि अपने नातेदार खुशा-

मदी और राजनैतिक दल के मनुष्यों से सरकार में तमाम जगह जो खाली होंगी वह भर देंगे। इसलिये यह आवश्यक है कि कर्मचारियों की नियुक्ति में कार्यकारिणी का किसी प्रकार का हाथ न होना चाहिये और यह विधान की विशेषता पर निर्भर है कि इनकी नियुक्ति इस प्रकार से की जाय जिससे कि योग्य पुरुष ही नियुक्त होने पायें।

७. नियन्त्रक महालेखा परिक्षक के स्वयं और उसके विभाग की स्वतन्त्र स्थितिः—प्रजातन्त्र में व्यवस्थापिका सभा कर लगाने और किस काम के लिये किस प्रकार रुपया खर्च हो, इन सबकी स्वीकृति प्रदान करती है, परन्तु खर्च करना कार्यकारिणी पर निर्भर है। इस खर्चे की देख-भाल एक अलग कर्मचारी नियन्त्रक महालेखापरीक्षक और इस विभाग के अन्य कर्मचारियों पर निर्भर है। यह लोग कार्यकारिणी के कार्य की ही देख-भाल करते हैं और निष्पक्ष होकर उनके विभाग की देख-भाल जभी हो सकती है जब कि कार्यकारिणी का उन पर किसी प्रकार का दबाव नहीं हो। अच्छे विधान की एक विशेषता यह भी है कि वह कार्यकारिणी से काफी सीमा तक स्वतन्त्र हो।

८. निर्वाचन-आयोग स्वयं की और उसके विभाग की स्वतन्त्र स्थितिः—प्रजातन्त्र राज्य में निर्वाचन समय २ पर होते हैं और प्रजातन्त्र की सफलता तभी होती है जब कि निर्वाचन निष्पक्ष हों और इन पर कार्यकारिणी का किसी प्रकार का दबाव नहीं हो। विधान की एक विशेषता यह भी है कि निर्वाचन आयोग और उसका विभाग के अन्य कर्मचारी कार्यकारिणी से स्वतन्त्र हों।

उदाहरणः—भारत के विधान का उदाहरण। भारत के विधान में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश लोक-सेवा-आयोग के चेयर-मैन और उसके सदस्य, नियंत्रक महालेखा परीक्षक और निर्वाचन आयोग के सदस्य इन सब की नियुक्ति, अवधि और पद की शर्तें इन

सब में कर्मचारियों को बराबर का स्थान दिया गया है। राष्ट्रपति स्वयं बिना कार्यकारिणी की सलाह के इनकी नियुक्ति करेगा। जब तक कि वह अपना कार्य ठीक तरीके से कर रहे हैं उनको उनके पद से नहीं हटाया जा सकता। यह लोग पद से जभी हटाये जाते हैं जब कि संसद के दोनों सदन अयोग्यता के बिना पर कोई प्रस्ताव के २/३ बहुमत से स्वीकार करके राष्ट्रपति के सामने पेश करें तभी इनको पद से हटाया जाता है। साधारण तौर पर इनको पद से नहीं हटाया जा सकता है। इनके वेतन, भत्ते, छुट्टी और पेन्शन के कानून उनकी नियुक्ति के बाद बदले नहीं जा सकते। उच्चतम न्यायालय और हाईकोर्ट के न्यायाधीश पेन्शन के बाद किसी अदालत में वकालात नहीं कर सकते और बाकी कर्मचारियों के लिये यह शर्तें है कि उनके ओहदे खत्म होने पर उनको पेन्शन मिल जायगी और फिर वह केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य के किसी ओहदे पर नियुक्त नहीं हो सकते। यह शर्त इसलिये लगाई गई है कि वह निष्पक्ष होकर अपना काम करें। यदि कार्यकारिणी नाराज हो जाय तो वह हानि नहीं पहुँचा सकती और खुश हो तो भविष्य में लाभ नहीं पहुंचा सकती है। क्योंकि कोई सरकारी पद वह बाद में ग्रहण नहीं कर सकते हैं। इस प्रकार हमारे विधान में यह सब विभाग कार्यकारिणी से स्वतन्त्र हैं और यही हमारे विधान की विशेषताऐं है।

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद का कथनः—किसी विधान की प्रभुता विधान पर निर्भर नहीं है बल्कि उन लोगों पर है जो कि उस विधान को कार्य रूप का वस्त्र पहनाते हैं। यदि वह लोग योग्य पुरुष हैं और उनका चरित्र उच्च कोटि का है तो वह लोग खराब से खराब विधान को भी अच्छे विधान में परिणत करके सफलता पूर्वक कार्य करेंगे। यदि वह अयोग्य और स्वार्थी पुरुष हैं तो वह अच्छे से अच्छे विधान को भी असफल बना देंगे। विधान मशीन की तरह एक निर्जीव वस्तु है, वह तो कागज के परचे हैं और उनकी वास्तविकता उन मनुष्यों/ पर निर्भर है जो कि उनको कार्य में लाते हैं।

लिखित और अलिखित दो प्रकार के शासन विधान

लिखित शासन विधान की परिभाषाः—लिखित शासन विधान में संगठन सम्बन्धी नियम, उसके विभिन्न अंगों की रूप रेखा, उनके कार्य प्रणाली तथा अधिकार निश्चित रूप से एक ग्रन्थ के रूप में लिख दिये जाते हैं। अमेरिका का संयुक्त राज्य तथा भारत का शासन विधान लिखित है।

अलिखित शासन विधान की परिभाषाः—अलिखित शासन विधान में सरकार के संगठन सम्बन्धी नियम किसी ग्रन्थ अथवा विशेष रूप में लिखे नहीं होते, देश का शासन सर्वमान्य सिद्धान्तों, नियमों और प्रथाओं के अनुसार चलता है। इंगलैन्ड का शासन विधान अलिखित शासन विधान का एक मात्र उदाहरण है।

दोनों की तुलनाः—इन दोनों में मात्रा का अन्तर है। लिखित में कुछ बातें अलिखित अवश्य होती हैं। और इसी प्रकार से अलिखित शासन विधान में भी कुछ बातें लिखित होती हैं। और इस कारण इनमें मात्रा का ही भेद भाव है। लिखित विधान में यह खूबी होती है कि उसको एक निगाह के देखने ही से लोगों को सरकार की रूप रेखा का पूरा ज्ञान हो जाता है। कुछ लेखकों ने इस वर्गीकरण को छोड़ दिया है और वे शासन विधान का वर्गी करण परिवर्तनशील और अपरिवर्तनशील विधानों के आधार पर करते हैं।

परिवर्तनशील विधान की परिभाषाः—(Flexible Constitution) यदि कोई शासन विधान उसी साधारण रीति से बदला या सुधारा जा सकता है जैसे साधारण कानून बनाये जाते हैं तो वह विधान परिवर्तनशील विधान कहलाता है। इंगलैन्ड का शासन विधान परिवर्तनशील है। इंगलैन्ड की संसद में विधान सम्बन्धी कानून भी उसी साधारण रीति से बनाये जाते हैं जिस रीति से कानून बनता है और इनके बनाने के तरीके में कोई भेद भाव नहीं है; इसी कारण इंगलैन्ड का शासन विधान परिवर्तनशील है।

अपरिवर्तनशील विधान की परिभाषा:·(Rigid Constitution) अपरिवर्तनशील विधान में वैधानिक सुधार सम्बन्धी कानून उसी रीति से नहीं बनाये जा सकते जिस रीति से कि साधारण कानून बनाये जा सकते हैं। विधान बदलने या सुधारने के लिये जब कानून बनाना होता है तब विशेष प्रकार की व्यवस्था की आवश्यकता होती है। अमेरिका का विधान अपरिवर्तनशील है। अमेरिका की धारा सभा साधारण कानून बना सकती है, परन्तु वह शासन विधान नहीं बदल सकती। विधान बदलने के लिये पहले काँग्रेस की दोनों सभाओं में दो तिहाई मत से विधान बदलने की स्वीकृति का प्रस्ताव स्वीकृत होना चाहिये, फिर यह प्रस्ताव सब राज्यों की धारा सभाओं के सामने जाता है, यदि तीन चौथाई राज्यों ने स्वीकार कर लिया तो वह प्रस्ताव कानून बनता है। परन्तु साधारण कानून कांग्रेस के साधारण बहुमत से बन जाता है। और वे राज्यों की धारा सभाओं में नहीं भेजे जाते।

इन दोनों की तुलना:—परिवर्तनशील विधान का सबसे बड़ा गुण उसका लचीलापन है। वह बड़ी आसानी से बदला जा सकता है। देश में जब कोई नई परिस्थिति उत्पन्न होती है तब उसके अनुसार शासनविधान बदला जा सकता है। अपरिवर्तनशील विधान में इतनी जल्दी परिवर्तन लाना सम्भव नहीं है, और ऐसी स्थिति में राजनैतिक कठिनाइयां उत्पन्न होने का भय रहता है। दूसरे, परिवर्तनशील विधान में यह दोष लगाया जाता है कि वह स्थिर नहीं होता, परन्तु यह गलत है। इंगलैन्ड का विधान पवरिर्तनशील होने पर भी स्थिर है क्योंकि वहां के लोग परिवर्तन लाने को तैयार नहीं है। अन्त में हमें यह मानना होगा कि दोनों प्रकार के विधानों में कुछ न कुछ लाभ और कुछ न कुछ हानि है। कौन से देश में किस प्रकार का विधान लागू होगा यह उस देश के इतिहास, लोगों के सुझाव और समाज के आर्थिक और राजनैतिक स्थिति पर निर्भर है।

अध्याय ग्यारहवां

स्वतन्त्रता तथा समानता,

Liberty will not descend to a people; a people must raise themselves to liberty. It is a blessing that must be earned before it can be enjoyed.

मनुष्य की प्रकृतिः—मनुष्य की प्रकृति में दो बातें पाई जाती हैं पहला स्वार्थ, और दूसरा जनहित। समाज की उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि स्वार्थ की मात्रा को कम किया जाय और जनहित के विकास के लिये व्यक्ति को पूरा पूरा अवसर दिया जाय।

स्वतन्त्रता का अर्थः—स्वतन्त्रता का यह अर्थ है कि व्यक्ति के स्वार्थ की भावना पर अंकुश लगाया जाय और उसकी अच्छाइयों के विकास के लिये पूरा २ अवसर दिया जाय। इस प्रकार से स्वतन्त्रता के दो दृष्टिकोण हैं। पहला रोक थाम का दृष्टिकोण (Negative) और दूसरा अच्छाइयों के विकास के लिये साधन उत्पन्न करने का दृष्टिकोण (Positive)

रोक थाम (Negative) का दृष्टिकोणः—मनुष्य की प्रकृति में स्वार्थ की भावना पाई जाती है। जब कि यह अधिक मात्रा में हो जाती है तो समाज की उन्नति रुक जाती है। समाज की उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य की खराब प्रकृति और उसकी स्वार्थ की भावना पर अंकुश लगाया जाय। लॉस्की साहब का कथन है कि यदि मुझे दूसरे को लूट कर या उसको कत्ल करके धन एकत्रित करने से रोका जाता है या मुझे गलत रस्ते पर मोटर चलाने से मना किया जाता है तो इन बातों से मेरे गुणों के विकास में किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचती है। आगे चल कर उन्होंने लिखा है कि इस प्रकार के वातावरण में मुझे अपने गुणों के विकास में बहुत सहू-

लियत प्राप्त होती है। मनुष्य जाति के अनुभव और इतिहास ने हमको कुछ ऐसी सुबीते की बातें बतलाई है जिनको ग्रहण करने से अच्छा जीवन व्यतीत हो सकता है और उन बातों को लोगों पर लागू करने से व्यक्ति की स्वतन्त्रता किसी प्रकार से कम नहीं होती है। स्वतन्त्रता का अर्थ यही है कि हर एक व्यक्ति पर बराबर से अंकुश लगाया जाय जिससे समाज की उन्नति बराबर जारी रहे यदि इस प्रकार के अंकुश अनुभव के आधार पर हैं, मनमानी नहीं हैं और वास्तव में आवश्यक है और जिनको व्यक्ति अपने ज्ञान द्वारा स्वीकार कर सकता है तो इस प्रकार की रोक थाम से व्यक्ति की स्वतन्त्रता कम नहीं होती बल्कि और दृढ़ होती है। इस प्रकार की रोक थाम की आवश्यकता इस कारण से होती है कि मनुष्य में प्रकृति की ओर से बुराइयाँ और स्वार्थ की भावनायें भरी हुई हैं यदि ऐसा नहीं होता और उसमें अच्छाइयाँ ही अच्छाइयाँ होती तो इस प्रकार की रुकावटों की कुछ आवश्यकता नहीं होती। परन्तु स्वार्थ होने के कारण समाज़ को व्यक्ति पर रुकावटें लगाना आवश्यक होगया है। राज्य इस प्रकार की रुकावटें कानून द्वारा लगाता है। और यह सब स्वतन्त्रता की रोक थाम (Negative) का दृष्टिकोण है।

(Positive) **अच्छाइयों के विकास का दृष्टिकोण:—** मनुष्य में प्रकृति की ओर से अच्छाइयाँ अवश्य होती हैं, परन्तु वह छुपी हुई होती हैं इस कारण हर एक व्यक्ति को अपनी अच्छाइयों के विकास के लिये अवसर देना आवश्यक है। हर एक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने के लिये पूरा २ अवसर देना चाहिये जिससे वह अपने गुणों का विकास करके अपनी इच्छानुसार समाज की सेवा कर सके। स्वतन्त्रता का यह अर्थ है कि हर एक व्यक्ति को अपने गुणों को पहचानने (Self realization) तथा उनके विकास का पूरा पूरा अवसर प्राप्त करना है। लॉस्की साहब के कथन के अनुसार स्वतन्त्रता में दो बातें छुपी हुई हैं। पहले तो अपने विकास के लिये अवसर प्राप्त होना दूसरे

बिना किसी बाहरी रुकावट के अपनी इच्छानुसार अपना जीवन व्यतीत करने का अधिकार। स्वतन्त्रता से यह अर्थ है कि समाज में इस प्रकार का वातावरण स्थापित किया जाय जिसमें हर एक व्यक्ति को अपने आत्म निर्णय के लिये अपने अस्तित्व को स्थिर रखने के लिये पूरा २ अधिकार हो और वह अपने गुणों का अधिक से अधिक विकास करके समाज सेवा कर सकें। यह जभी सम्भव है जब कि उसे अधिकार प्राप्त हों जो कि उसको यह रास्ता बतलाते हैं कि इन पर वह निडर होकर चल सकता है और अपने गुणों का पूरा विकास कर सकता है।

स्वतन्त्रता की परिभाषा:—हम पहले बतला चुके हैं कि मनुष्य की प्रकृति में अच्छाइयाँ और बुराइयाँ दोनों पाई जाती हैं और स्वतन्त्रता के लिये यह आवश्यक है कि कानून द्वारा व्यक्ति पर अंकुश लगाया जाय ताकि बुराइयाँ अधिक मात्रा में न फैलने पायें और अच्छाइयों के विकास के लिये पूरी स्वतन्त्रता दी जाये ताकि व्यक्ति अपना पूर्ण रूप से विकास करके समाज की सेवा करे।

स्वतन्त्रता के रूप:—(Kinds of Liberty)

स्वतन्त्रता में एक नहीं बल्कि निम्नलिखित विचार सम्मिलित हैं।

१. प्राकृतिक स्वतन्त्रता:-(Natural liberty)
२. राष्ट्रीय स्वतन्त्रता:-(National liberty)
३, राजनैतिक स्वतन्त्रता:-(Political liberty)
४. नागरिक स्वतन्त्रता:-(Civil liberty)
५. व्यक्तिगत स्वतन्त्रता:-(Personal liberty)
६. आर्थिक स्वतन्त्रता:-(Economic liberty)

१. प्राकृतिक स्वतन्त्रता(Natural liberty):-राजनैतिक दार्शनिका ने इसका वर्णन किया है और इसमें सामाजिक समझौते के लेखकों ने इसको अधिक महत्व दिया है। रूसो का यह कहना है कि प्राकृतिक अवस्था के शुरू में एक प्रकार की प्राकृतिक स्वतन्त्रता थी

जिसमें लोग सुख, शान्ति और चैन से रहते थे, परन्तु वह स्वयं इस बात को मानता है कि बाद में यही अवस्था बदल गई और बजाय समानता के असमानता उत्पन्न हो गई जिसके कारण की राज्य की आवश्यकता हुई। रूसो का यह विचार केवल एक कल्पना मात्र है इसकी वास्तविकता कुछ नहीं है। बिना किसी प्रकार के राज्य के स्वतन्त्रता नहीं हो सकती वह तो अंधेर नगरी होगी, जिसकी लाठी उसकी भैंस। इसमें सबके समान अधिकार नहीं होंगे जो कि स्वतन्त्रता के लिये आवश्यक है। अतः प्राकृतिक स्वतन्त्रता एक कल्पना मात्र है।

२. राष्ट्रीय स्वतन्त्रता(National liberty):-इसका अर्थ यह है कि एक राज्य में किसी विदेशी जाति का राज्य न हो। यदि वहीं के किसी व्यक्ति का राज्य है तो वहाँ पर अवश्य राष्ट्रीय स्वतन्त्रता है। जब कि अंग्रेजों का भारतवर्ष में राज्य था उस समय अफगानिस्तान का ही एक व्यक्ति अफगानिस्तान पर राज्य कर रहा था उसका राज्य निरंकुश शासन था और व्यक्ति का जीवन और सम्पति राजा पर ही निर्भर थी, परन्तु इस पर भी अफगानिस्तान में राष्ट्रीय स्वतन्त्राता अवश्य थी। भारतवर्ष में विदेशी राज्य (Foreign domination) होने के कारण "राष्ट्रीय स्वतन्त्रता" यहाँ पर नहीं थी, यद्यपि यहाँ पर अफगानिस्तान की अपेक्षा अधिक नागरिक स्वतन्त्रता थी।

३. राजनैतिक स्वतन्त्रताः—इससे अर्थ वैधानिक सरकार से है। हम पहले यह बतला चुके हैं कि विधान सरकार के ऊपर एक प्रकार का अंकुश है। इससे सरकार के हाथ पैर बंध जाते हैं और फिर वह किसी प्रकार की ज्यादती नागरिकों पर नहीं कर सकती है। दूसरे वैधानिक राज्य में नागरिकों के मौलिक अधिकार होते हैं। तीसरे नागरिकों को मत देने का अधिकार होता है। वह अपने मत द्वारा अपने प्रतिनिधि चुनते हैं जो कि व्यवस्थापिकासभा में जाकर लोगों के लाभ के लिये कानून बनाते हैं। चौथे व्यवस्थापिकासभा में सदस्य निश्चित समय के लिये चुने जाते हैं और अपनी अवधि के अन्त होने पर वह फिर

नागरिकों के पास प्रतिनिधि बनने के लिये जाते हैं। यदि उन्होंने लोगों के लाभ के कार्य किये हैं तो वह फिर प्रतिनिधि चुने जाते हैं। पाँचवें इसमें सभायें एकत्रित करके सरकार की नीति का समर्थन करने या विरोध करने का पूरा २ अधिकार होता है और इस प्रकार यह सरकार लोगों की स्वीकृति पर निर्भर रहती है। छटा इस प्रकार की सरकार में सबको बराबर के अधिकार प्राप्त होते हैं, इसमें धर्म, जाति, रंग या वर्ग के आधार पर कोई भेद भाव नहीं होता है हर एक योग्य व्यक्ति को बड़े से बड़ा पद ग्रहण करके समाज सेवा का अवसर मिलता है। राजनैतिक स्वतन्त्रता जिसका कि अर्थ वैधानिक सरकार है उसमें यह सब बातें सम्मिलित है और यही राजनैतिक स्वतन्त्रता कहलाती है।

४. नागरिक स्वतन्त्रता:—यह उस प्रकार की स्वतन्त्रता को कहते हैं जो कि व्यक्ति को राज्य में प्राप्त होती है। इसके दो दृष्टिकोण हैं, एक तो (Negative) रोक थाम दृष्टिकोण और दूसरा सुखी जीवन के साधन उत्पन्न करना, उसको (Positive) दृष्टिकोण कहते हैं।

५. सुखस्थापित करने का दृष्टिकोण:—(Positive) हमने स्वतन्त्रता की परिभाषा वर्णन करते हुये लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने गुणों को पहिचानने और गुणों के विकास करने का अवसर देने को स्वतन्त्रता कहते हैं, ताकि वह अपना विचार करके अपनी इच्छानुसार समाज सेवा कर सके। यह जभी सम्भव है जब कि उसे अधिकार प्राप्त हैं। अधिकार उसको उन्नति का मार्ग बतलाते हैं यदि वह इन अधिकारों के अनुसार कार्य करेगा तो वह अपने कार्य में सफलता प्राप्त करेगा। वह सब अधिकार जो कि कानून द्वारा स्थापित होते हैं और राज्य उनको स्वीकार करता है, वह सब अधिकार नागरिक स्वतन्त्रता में सम्मिलित हैं और उनका सम्मिलित नाम Civil liberty नागरिक स्वतन्त्रता है।

निम्नलिखित अधिकार नागरिक स्वतन्त्रता में सम्मिलित हैं।

1. Liberty of person.

2. Liberty of movement and settlement within the state.
3. Liberty of migration and the right to the protection by the state.
4. The inviolabilty of one's house.
5. The right of property.
6. Freedom of expression of opinion.
7. Freedom of public meetings and association.
8. Freedom to orgainze, strike and picket.
9. Freedom of racial minorities.
10. Freedom of conscience, thought and education.

राज्य और नागरिक स्वतन्त्रता:—नागरिक स्वतन्त्रता के लिये राज्य का होना आवश्यक है और वह राज्य जो कि व्यक्ति को इन अधिकारों की स्वीकृति देता है इस राज्य में व्यक्ति पूर्ण रूप से स्वतन्त्र होता है। कानून इन अधिकारों को स्वीकार करता है और व्यक्ति को अपने भविष्य का पूर्ण विश्वास होता है। वह जानता है कि जब तक वह इन अधिकारों के अनुसार कार्य करे तो वह पूरा पूरा स्वतन्त्र है।

रोक थाम:—(Negative) नागरिक स्वतन्त्रता स्थापित करने के लिये व्यक्तियों के लिये दो प्रकार के अंकुश आवश्यक हैं। एक तो व्यक्ति तथा व्यक्तियों के समूह पर और दूसरा सरकार पर।

स्वतन्त्रता का सीमित दृष्टिकोण:—स्वतन्त्रता से यह अर्थ नहीं है कि व्यक्ति अपनी मनमानी कार्यवाही कर सके। यदि इस प्रकार का अधिकार मिल जाय तो फिर यहाँ पर स्वतन्त्रता नहीं होगी, अंधेर नगरी होगी। स्वतन्त्रता से यह अर्थ है कि व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार कार्य करने का अधिकार है जब तक कि वह दूसरों के अधिकारों पर हस्तक्षेप न करे। राज्य को सर्वोच्चसत्ता इसी कारण दी गई है कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता की सीमा नियत करे। जब तक कि व्यक्ति सीमा के अन्दर रहेगा उसको पूरी पूरी स्वतन्त्रता है, परन्तु जब वह सीमा के बाहर कदम रखेगा और दूसरे की स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप करेगा तो राज्य उसको इस प्रकार के कार्य करने से रोकता है और इस प्रकार के अंकुश के द्वारा व्यक्ति की "नागरिक स्वतन्त्रता" स्थापित रहती है।

सरकार पर अंकुशः—नागरिक स्वतन्त्रता को स्थापित रखने के लिये व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह पर अंकुश लगाना आवश्यक है जैसा कि हमने ऊपर वर्णन किया, परन्तु उसके साथ-साथ सरकार पर भी अंकुश आवश्यक है। इसी कारण तमाम वर्तमान समय के विधानों में व्यक्ति के अधिकार मौलिक अधिकारों के नाम से उसको सौंपे जाते हैं। और इन अधिकारों पर सरकार भी हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। लॉस्की का कथन है कि स्वतन्त्रता कभी दृढ़ नहीं रह सकती है जब तक कि सरकार पर अंकुश न हो और जब कभी सरकार व्यक्ति के अधिकारों में हस्तक्षेप करे तो व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह न्यायालय द्वारा सरकार से प्रश्नोत्तर करें। हमारे विधान में नागरिकों को मौलिक अधिकार प्राप्त हैं और जब कभी व्यवस्थापिकासभा या कार्यकारिणीसभा, उनके अधिकारों में हस्तक्षेप करे तो व्यक्ति उच्चतम न्यायालय के द्वारा इनको ऐसा कार्य करने से रोक सकता है और इस प्रकार नागरिक स्वतन्त्रता की नींव दृढ़ होती है

नागरिक स्वतन्त्रता और राजनैतिक स्वतन्त्रता में संबंधः—
यह सम्भव है कि राजनैतिक स्वतन्त्रता न होते हुये भी एक राज्य में नागरिक स्वतन्त्रता हो। यदि राजा योग्य पुरुष है तो वह अवश्य ही लोगों की नागरिक स्वतन्त्रता स्वीकार कर लेता है, परन्तु उसकी नींव दृढ़ नहीं रहती, वह राजा पर ही निर्भर है। इस कारण से नागरिक स्वतन्त्रता के लिये राजनैतिक स्वतन्त्रता आवश्यक है। जहाँ राजनैतिक स्वतन्त्रता होती है वहाँ वैधानिक राज्य होता है। सरकार पर अंकुश होता है। लोगों को मौलिक अधिकार प्राप्त होते हैं और सरकार यदि कुछ ज्यादती करे तो उच्चतम न्यायालय द्वारा उसको ज्यादती करने से रोका जा सकता है। और इस कारण राजनैतिक स्वतन्त्रता में ही नागरिक स्वतन्त्रता दृढ़ रहती है।

व्यक्तिगत स्वतन्त्रताः—(Personal liberty) व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अर्थ यह है कि व्यक्ति के सुख के लिये, प्रसन्नता पूर्वक

जीवन बिताने के लिये और उसमें जो गुण है उसके पूर्ण विकास के लिये ऐसा वातावरण उत्पन्न किया जाय जिससे कि उसका पूरा पूरा विकास होकर समाज की सेवा अपनी इच्छानुसार कर सके। वर्तमान समय में यह स्वतन्त्रता हर एक व्यक्ति को प्राप्त है। जो आज कल विधान बनाये गये हैं उनमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर बहुत अधिक ध्यान दिया गया है। इनको अंग्रेजी में Fundamental Rights और हिन्दी में मौलिक अधिकार कहते हैं। यह सब व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में सम्मिलित हैं। इससे यह अर्थ है कि व्यक्ति को उसके सोच विचार भाषण और सभाएँ करने में किसी प्रकार का अंकुश न हो यह और अन्य अधिकार सब व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में सम्मिलित है।

आर्थिक स्वतन्त्रता:—आर्थिक स्वतन्त्रता का अर्थ यह है कि वर्तमान आर्थिक असमानता को दूर करके सब नागरिकों को संसारिक वस्तुओं की पूर्ती का पूरा पूरा अवसर दिया जाय। जिस प्रकार से राजनैतिक क्षेत्र में वैधानिक सरकार की स्थापना करके नागरिकों को राज्य प्रबन्ध में भाग लेने का पूरा २ अवसर प्राप्त हुआ है। इसी प्रकार से उद्योग-धंधों में भी प्रजातन्त्र का आधार लागू करना आवश्यक है। वर्तमान समय में उद्योग-धंधो तानाशाही आधार पर निर्भर है। पूंजी पति जो कि मिल का मालिक है वह स्वेच्छाचारी कार्य करता है। मजदूरों को पद से अलग कर दिये जाने का भय हमेशा लगा रहता है। उसका वेतन इतना कम होता है कि उसकी आवश्वकताओं की पूर्ती नहीं हो पाती और उससे अधिक समय तक काम लिये जाने के कारण उसको मनोरंजन और गुणों के विकास के लिये समय नहीं मिलता। इन कारणों से लोगों का यह कहना है कि पूंजी पति पर अंकुश लगाना और मजदूरों को अपने संघठन में भाग लेने का अवसर देना आवश्यक है जिससे कि वर्तमान आर्थिक असमानता कम हो और उद्योग-धंधों का प्रबन्ध एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के लाभ के लिये न हो बल्कि

उससे तमाम समाज की उन्नति हो। वर्तमान समय में आर्थिक स्वतन्त्रता पर बहुत जोर दिया जाता है क्योंकि ऐसी राजनैतिक स्वतन्त्रता जिसमें धन कुछ व्यक्तियों के हाथ में एकत्रित हो गया हो और अधिक संख्या में लोग निर्धन हों तो लोग असन्तुष्ट रहते हैं और फिर राजनैतिक स्वतन्त्रता का महत्व चला जाता है। वह धर्म की तरह एक प्रकार का पाखण्ड बन जाता है। आज कल तमाम सरकारें मजदूरों की आर्थिक स्थिति सुधारने में लगी हुई है। उनके काम करने के समय कानून द्वारा निश्चत किये गये हैं और उनका कम से कम वेतन (Minimum wages) कानून द्वारा निश्चित होते है और इसी प्रकार से दूसरे सुधार भी हो रहे है जिससे मजदूरों की आर्थिक स्थिति सुधरें।

ऊपर अंग्रेजी में लिखे कथन का अर्थः—इस अध्याय से तुम्हें यह ज्ञान हो गया होगा कि स्वतन्त्रता के अर्थ में कितने विचार सम्मिलित हैं। हम अपना देश भारत वर्ष का उदाहरण देकर फिर समझाने का प्रयत्न कर रहे है। हमारे देश में अंग्रेजी राज्य (Foreign-domination) था और इस कारण राष्ट्रीय स्वतन्त्रता हमें प्राप्त नहीं थी। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने लगातार सत्ताईस साल तक प्रयत्न करने पर अंग्रेजी राज्य का अन्त किया और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त कराई। हमें दुःख है कि राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर ही एक पागल आदमी ने उनका जीवन अन्त कर दिया, परन्तु महापुरुष मरते नहीं हैं वह हमेशा जीवत रहते हैं उनके राजनैतिक उत्तराधिकारी पं० जवाहरलाल नेहरू ने महात्माजी का बतलाया हुआ रास्ता ग्रहण किया और बहुत जल्दी विधान बना कर राष्ट्र की नींव दृढ़ की। विधान बनने पर हमने राजनैतिक स्नतन्त्रता की नींव डाली। नागरिकों को अधिकार देकर नागरिक स्वतन्त्रता की स्थापना की। नागरिकों को मौलिक अधिकार देकर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता (Personal liberty) की नींव डाली। परन्तु इनसे उन्नति का अन्त नहीं हो जाता। यह तो उन्नति की पहली मंजिल है और वास्तविक स्वतन्त्रता

जो कि आर्थिक स्वतन्त्रता (Economic liberty) है वह अब शुरू होगी और इसके लिये भी अब बहुत तेजी से काम हो रहा है। जुलाई १९५४ को भाखरा नांगल डेम का उद्‌घाटन करके हमने यह सिद्ध कर दिया है कि हम अपने राज्य की आर्थिक स्थिति सुधारने पर तुले हुए हैं। हमने अपने देश से भूख, बेकारी, निर्धनता और बिमारियां दूर करने का प्रयत्न कर लिया है। कई रिवर वैली प्रोजेक्टस, कम्युनीटि प्रोजेक्ट्स, नेशनल एक्स—टेन्शन सर्विसेज और अन्य दूसरे कार्य हो रहे हैं जिनसे देश की निर्धनता दूर होंगी। जितना अधिक प्रजा सरकार का हाथ बटायेगी उतनी ही जल्दी हमें इसमें सफलता प्राप्त होगी। आर्थिक स्वतन्त्रता के लिये पहले हमें परिश्रम करना पड़ता है फिर उससे लाभ प्राप्त होता है। गांधीजीने हमको राष्ट्रीय स्वतन्त्रता दिलवाई और पं० नेहरू जी के समय में आर्थिक स्वतन्त्रता की नींव डली।

हमारे पड़ौसी देश की स्थितिः—विदेशी राज्य के अन्त होने पर हमारे पड़ौसी देश स्थापित हुआ और वहाँ पर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता (National liberty) की नींव डली परन्तु अभी तक विधान नहीं बन सका और इसलिये राजनैतिक स्वतन्त्रता अभी तक प्राप्त नहीं हुई है। राजनैतिक स्वतन्त्रता न होने के कारण नागरिक स्वतन्त्रता (Civil liberty) की स्थापना नहीं हुई है और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता (Fundamental liberty) बहुत दूर है और आर्थिक स्वतन्त्रता का तो कोई जिक्र ही नहीं है क्योंकि बिना राजनैतिक स्वतन्त्रता के आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं हो सकती। जब कि हमने आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये तेजी से काम शुरू कर दिया है हमारे पड़ौसी देश की उन्नति राष्ट्रीय स्वतन्त्रता पर ही सीमित है। निराश होकर हमारे पड़ौसी देश ने अमरीका से मीलिट्री अलाइन्स प्राप्त किया है। पं० नेहरूजी ने इसके सम्बन्ध में यह लिखा है कि यदि कोई कमजोर मुल्क किसी शक्तिशाली देश से सम्बन्ध स्थापित कर लेता है तो वह आधीन बन जाता है और फिर उसका उससे सम्बन्ध अलग करना कठिन हो जाता है

Nehru's letter to P.C.C. Presidents from Mahsoba, Simla, 8 August 1954.

But to tie oneself up with other countries leads to consequences which are obvious enough in the world today. A weak country doing so becomes a subservient country and it is increasingly difficult for it to break away those ties.

यही कारण है कि हम दूसरों की सहायता पर निर्भर रहना पसंद नहीं करते ! हमारी सरकार ने एक लोन की योजना देश के सामने रखी है। हर एक व्यक्ति को चाहिये कि इस नेशनल लोन सार्टिफिकेट को खरीद लें और इस प्रकार देश की आर्थिक स्वतन्त्रता में साझेदार बनें।

राष्ट्र को एलान

राष्ट्रीय योजना ऋण

१९६४

साढ़े तीन प्रति वर्ष ब्याज छः माही दिया जायगा

यह योजना देश के प्रत्येक व्यक्ति के लिये अनिवार्य है। यह वास्तव में एक ऐसा ऋण है जो प्रत्येक देशवासी से सम्बंध रखता है। चाहे वह गरीब से गरीब हो जिसे इस महान कार्य में इतना ही यज्ञ दान देना चाहिये जितना किसी और को। नवीन भारत का निर्माण वर्तमान समय में यज्ञ के समान है और इसमें रुपया लगाने का वही महत्व है जो कि यज्ञ में आहुति का है। —जवाहरलाल नेहरू

राष्ट्रीय योजना ऋण में दिल खोल कर रुपया दीजिये

भारत के भविष्य में रुपया लगाइये

समानता (Equality)

समानता के गलत अर्थः—समानता का यह अर्थ नहीं है कि सबको एक समान कर दिया जाय अर्थात् असमान कार्य करने पर समान वेतन दिया जाय इस प्रकार की समानता नहीं हो सकती।

बराबर के अवसर देनाः—राज्य का यह कर्तव्य है कि शिक्षा, कला, संगीत, साहित्य इत्यादि हर प्रकार के प्रचार का पूरा पूरा और इस प्रकार का प्रबन्ध करे कि निर्धन से निर्धन व्यक्ति भी इन से लाभ उठा कर अपने गुणों का विकास कर सके और फिर अपनी इच्छानुसार समाज की सेवा कर सके।

सबको बराबर का अधिकार देनाः—समानता का यह अर्थ है कि समाज में सब व्यक्तियों के अधिकार समान हों। समाज में कोई ऐसा दल नहीं होना चाहिये, जिसके कि अधिकार दूसरे दलों से अधिक हों। इसका अर्थ यह है कि मनुष्य २ में किसी प्रकार के भेद-भाव नहीं हों।

समानता के भिन्न २ रूपः—

१. सामाजिक समानता (Social Equality)
२, राजनैतिक समानता (Political Equality)
३. नागरिक समानता (Civil Equality)
४. आर्थिक समानता (Economic Equality)

१. सामाजिक समानता का अर्थः—जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है इसका अर्थ यह है कि मनुष्य मनुष्य में किसी प्रकार का भेद भाव नहीं होना चाहिये। सबको अपने विकास के लिये बराबर के अवसर प्राप्त होने चाहिये और अपने योग्यता के अनुसार पद ग्रहण करके समाज सेवा का अवसर देना चाहिये। यदि किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को राष्ट्र के भिन्न भिन्न पदों को प्राप्त करने से और समाज की सेवा करने से रोका जाय तो उसका अर्थ यह है कि ऐसे राज्य में न तो स्वतन्त्रता है और न समानता है।

२. राजनैतिक समानता:—इसका अर्थ यह है कि राजनैतिक दृष्टिकोण से सबको बराबर के अधिकार प्राप्त हों, और हर एक व्यक्ति को अपनी योग्यता के अनुसार पद ग्रहण करके समाज सेवा का अवसर प्राप्त हो। Laski का यह कथन है कि मत देते समय मेरे मत की और मेरी इच्छा की वही कीमत हो जो कि दूसरे व्यक्तियों की इच्छा और मत की होती है। इसका अर्थ यह कि हर एक व्यक्ति चाहे छोटा हो चाहे बड़ा हो, उसको एक ही वोट देने का अधिकार है। एक आदमी एक वोट। यह सिद्धान्त समानता के आधार पर निर्भर है, और इसके द्वारा राजनैतिक क्षेत्र में छोटे बड़े का भेद भाव दूर कर दिया गया है। छोटे से छोटा व्यक्ति भी यदि योग्य है तो बड़े से बड़ा पद ग्रहण कर सकता है। इसका अर्थ यह है कि यदि और गुण मुझ में बराबर के है तो मेरा महत्व समाज में वही है जो कि दूसरे व्यक्ति का है। इसी आधार पर सभायें एकत्रित करना, समाचार पत्र द्वारा प्रचार करना और इस प्रकार के दूसरे अधिकारों में सबको बराबर के अधिकार प्राप्त हो।

३. नागरिक समानता:—इसका अर्थ यह है कि कानून के समक्ष सब लोग एक समान हों। हर एक व्यक्ति चाहे अमीर हो, या गरीब, चाहे ऊंचे पद पर हो या छोटे पद पर उसके जीवन, उसकी सम्पत्ति, और उसके दूसरे अधिकारों की कानून द्वारा एक जैसी रक्षा होगी।

४. आर्थिक समानता:—इसका अर्थ यह है कि समान योग्यता वाले सर्व-भांति से समान हों तथा असमान योग्यता वाले असमान। इसका अर्थ यह कि दो व्यक्ति जिसका कि एक समान उत्तर दायित्व हो उनको एक समान वेतन मिलेगा और दूसरा व्यक्ति जिसका कि उत्तर दायित्व असमान हो उसको अपने उत्तर-दायित्व के अनुसार कम या ज्यादा वेतन मिलना चाहिये। इसमें दो बातें सम्मिलित हैं।

अ. कम से कम वेतन:—(Minimum wages) इसका अर्थ यह

है कि छोटे से छोटे व्यक्ति को इतना वेतन अवश्य मिलना चाहिये, जिसके द्वारा हर एक व्यक्ति अपना जीवन सुख पूर्वक बिता सके जिससे उसकी वास्तविक अवश्यकताओं की पूर्ती हो सके। इसके साथ साथ उसको अवसर मिलना चाहिये कि वह अपनी योग्यता का विकास करके अधिक धन प्राप्त कर सके।

ब. अधिक वेतन की सीमा:—समान उत्तर दायित्व पर समान वेतन मिले और अधिक से अधिक वेतन की सीमा निश्चित होनी चाहिये जो समाज की उन्नति के लिये बाधा स्वरूप न हो। इस सबका यह अर्थ है कि जहाँ तक आवश्यकताओं से सम्बन्ध है वहाँ तक तो समानता होनी चाहिये और दूसरे धन को एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के हाथ में एकत्रित नहीं होने देना चाहिये। यदि कुछ व्यक्ति या व्यक्ति का समूह धनवान हो जाये और अधिक संख्या में लोग निर्धन हो तो यह आर्थिक समानता नहीं है और फिर ऐसी स्थिति में स्वतन्त्रता का प्राप्त करना कठिन हो जाता है। इसलिये अधिक से अधिक वेतन जो कि योग्य व्यक्ति प्राप्त कर सकता है वह भी एक निश्चित रकम होनी चाहिये और इसी प्रकार उद्योग धंधों पर कर लगा कर उनके हाथ में धन एकत्रित नहीं होने देना चाहिये ताकि समाज में आर्थिक समानता स्थापित हो।

Questions.

1. What do you understand by 'Equality'? Is Equality consistent with Liberty? (1948)
2. Explain the term 'Equality'. How is it related to Liberty? (1951)
3. Explain what you understand by the term 'Equality' and 'Liberty'. Is Liberty consistent with Equality? (1953)
4. Discuss 'Liberty implies orders' (1951)
   order here means arrangement or efficient administration which can exist even in monarchy. In other words, it means that there is civil Liberty only and political, personal and economic aspects of liberity are omitted.

अध्याय बारहवां

कानून की उत्पत्ती और उसके महत्व

कानून का महत्वः—शायद कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसने कानून का शब्द न सुना होगा। परन्तु इसका अर्थ, इसका तत्व और इसकी वास्तविकता बहुत ही कम लोग समझ पायें हैं और जितना ही इसके अर्थ का ज्ञान लोगों में अधिक हो जाता है उतनी ही समाज उन्नति शील होती है।

कानून के तत्वः—इस तरह कानून के तीन तत्व हैं। प्रथम, कानून मनुष्य के बाहरी आचरण के नियम हैं। द्वितीय, ये अन्य सामाजिक नियमों से पृथक होते हैं और तृतीय राज्य सत्ता दबाव से उनका अन्ततोगत्वा पालन करवाती हैं। हौलैन्ड के अनुसार कानून "मनुष्य के बाहरी कार्यों के वे सामान्य नियम हैं जिनका पालन राज्य अपनी प्रभुत्व सम्पन्न सत्ता द्वारा करवाती है।"

कानून और आज्ञा में भेद भावः—साधारण व्यक्ति का यह विचार है कि कानून और आज्ञा ये दोनों एक ही चीज़ हैं परन्तु यह गलत विचार है और कानून और हुक्म ये दोनों भिन्न २ वस्तु हैं।

१. हुक्म या आज्ञा एक व्यक्तिगत चीज़ है। कानून, एक विशेष स्थिति को सम्भालने के लिये एक आम रास्ता बतलाता है।

२. एक बड़ा कर्मचारी या पुरुष छोटे कर्मचारी या पुरुष को एक काम करने या न करने के, कहने को हुक्म कहते हैं। इस प्रकार हुक्म आपस में भेद भाव स्थापित करता है। इसके विपरीत कानून सबको एक लड़ में पिरोता है और कानून में किसी प्रकार का छोटे बड़े का भेद भाव नहीं होता है।

३. हुक्म आम स्थिति से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। कानून का सम्बन्ध आम स्थिति से है।

४. हुक्म स्थाई नहीं होता और कानून स्थाई रहता है।

५. हुक्म इच्छानुसार अनुसार होता है। परन्तु कानून किसी कारण (Reason) से लागू किया जाता है इच्छानुसार नहीं और उसको लागू करते समय उसके लागू करने वाले को यह बात सिद्ध करनी होती है कि समाज के लिये वह आवश्यक है और उससे समाज की उन्नति होगी। इसी कारण से कानून के द्वारा राज्य पर अधिपत्य स्थापित होता है। परन्तु हुक्म द्वारा अधिपत्य स्थापित नहीं होता।

कानून की उत्पत्ति के स्रोतः—१. रीति रिवाज (Customs) रीति-रिवाज कानून के सबसे प्राचीन स्रोत है। प्राचीन काल में जिन रीति रिवाजों का लोग पालन करते रहे वे आगे चल कर कानून बन गये और राज्य ने उन्हें स्वीकार किया। प्राचीन काल में कोई कानून राज्य निर्मित नहीं था। परन्तु रीति रिवाजों द्वारा ही सामाजिक झगड़ों का निपटारा होता था। व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध निर्धारित किया जाता था और कुटुम्ब के सदस्यों के कर्तव्यों की व्याख्या की जाती थी। उन रीति रिवाजों के निर्माण में राज्य का कोई हाथ नहीं था। वे सामाजिक चेतना के विकास के परिणाम थे। बहुत से रीति रिवाज ऐसे थे जो आज न्यायालयों द्वारा मान्य हैं। ब्रिटेन में सामान्य कानून (Common laws) अधिकांश उन रीति रिवाजों पर आधारित हैं जिनको राज्य और न्यायालयों ने स्वीकार कर लिया है।

२. धर्म (Religion) प्राचीन काल में धर्म कानून का एक शक्ति शाली स्रोत था। रीति रिवाज, धर्म से पूर्व भी विद्यमान थे। परन्तु धर्म ने रीति रिवाजों को अधिक दृढ़ बनाया। हर धर्म के नियम और सिद्धान्त थे जिनको मानना सब धर्मावलम्बियों के लिये अनिवार्य था। दैवी सिद्धान्त के समर्थकों के मत में राज्य का निर्माता ईश्वर का प्रतिनिधि है जो शासन करने के लिये इस धरती पर आया है। उस समय राजा किसी न किसी धर्म को स्वीकार अवश्य करते थे। अतः उनके राज्य के कानून भी धार्मिक सिद्धान्तों से प्रभावित होते थे। इसके अतिरिक्त धर्म में लोगों की श्रद्धा असीम थी। हर धार्मिक काम को करना और

उसके नियमों का पालन करना वे लोग अपना प्रथम कर्तव्य समझते थे। धीरे धीरे ये ही धार्मिक नियम कानून का रूप धारण करने लगे और राज्य उन्हें संरक्षण प्रदान करता गया। आज भी कई ऐसे राज्य हैं जहां पर धर्म के आधार पर कानून निर्माण की मांग की जा रही है।

३. न्यायालयों के निर्माण (Judicial Precedents) न्यायाधीश केवल बने बनाये कानूनों को ही क्रियान्वित नहीं करते, परन्तु यदा कदा अपने विवेक और तर्क के आधार पर नवीन कानून भी बना डालते हैं। कभी कभी न्यायालय के सम्मुख ऐसे अभियोग आते हैं जिनके सम्बन्ध में कानून स्पष्ट नहीं होता। ऐसे अवसर पर न्यायाधीश या तो कानून की नवीन व्याख्या द्वारा अथवा अपनी विवेक शक्ति द्वारा निर्णय देता है। भविष्य में ये निर्णय अन्य न्यायालयों के लिये प्रमाण बन जाते हैं।

४. न्याय भावना (Equity) कभी कभी न्यायालय से सम्मुख ऐसे अभियोग आते हैं जिनके लिये कोई कानून नहीं होता। इस अवसर पर न्यायाधीश अपनी न्याय भावना के आधार पर नवीन कानून बना कर अपना निर्णय देता है और ये सब दृष्टान्त भविष्य के लिये प्रमाण बन जाते है।

५. वैज्ञानिक विवेचन (Scientific commentaries) उपर्युक्त रीति से कानून निर्माण के कार्य को कानून विशारद भी कहते हैं। प्राचीन काल में बड़े बड़े नितिज्ञ, दार्शनिक और धार्मिक नेता उत्पन्न हुए जिन्होंने बड़े परिश्रम से आचार विचारों के नियमों का संग्रह किया और उनका विवेचन संकलन किया। भारतवर्ष में मनु और याज्ञवल्क्य मुनि इसी प्रकार के विद्वानों में से थे। इगलैन्ड में कोक और ब्लेक स्टोन और अमेरिका में जार्ज स्टोरी आदि भी इसी प्रकार के कानून विशारद हुए हैं। ये कभी कभी कानून की त्रुटियों की ओर भी विद्वानों का ध्यान आकर्षित करते हैं। न्यायाधीश इस प्रकार के विवेचन का आदर करते हैं और निर्णय देते समय इनका ध्यान रखते हैं।

६. विधान सभा (Legislation) परन्तु आज कल कानून का निर्माण तो अधिकतर विधान सभाओं में होता है, जहां जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि होते है। विधान सभा में विधेयक प्रस्तुत होते हैं, उन पर पर्याप्त वाद विवाद होता है, उनका पूर्ण विवेचन और समीक्षा होती है। उनके पक्ष और विपक्ष में तर्क प्रस्तुत किए जाते हैं और अन्त में तृतीय वाचन के पश्चात वे कानून का रूप धारण कर लेते हैं जो न्यायालयों द्वारा मान्य होते हैं। जो व्यक्ति उनकी अवहेलना करते है वो दण्ड पाते हैं।

भिन्न भिन्न प्रकार के कानूनः—कानून दो भागों में विभाजित है एक तो राष्ट्रीय कानून (National law) दूसरा अन्तर्राष्ट्रीय कानून (International law)

अन्तराष्ट्रीय कानूनः—वर्तमान समय में विज्ञान की उन्नति के कारण समय और फासला कम होगया है और एक जगह से दूसरी जगह हम आसानी से कम समय में पहुंच सकते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक कारणों की वजह से एक राज्य का दूसरे राज्य से गहरे सम्बन्ध स्थापित हो गये हैं और इन सम्बन्धों को अन्तराष्ट्रीय सम्बन्ध कहते हैं और वह कानून जो कि यह सम्बन्ध स्थापित करता है और भिन्न २ राज्यों को इन कानूनों के अनुसार कार्य करने पर जोर देता है, अन्तराष्ट्रीय कानून कहलाता है। यह वह नियम है जो कि एक राज्य दूसरे राज्यों से सम्बन्ध स्थापित रखते समय पालन करता है। इसका अर्थ ये है कि कुछ ऐसे सिद्धान्त हैं जिनकी कि सब राज्यों ने स्वीकृति दे दी है और एक दूसरे से सम्बन्ध के वक्त वह इन सिद्धान्तों और नियमों का पालन करते हैं परन्तु इन कानूनों में एक कमजोरी ये है कि इनके पीछे कोई शक्ति नहीं है जो कि राज्यों को इनके पालन कराने पर जोर दे सके। इसका परिणाम यह होता है कि जब तक यह कानून राज्यों के पक्ष में होते हैं और उनको लाभ दायक दिखाई देते हैं तब तक तो वह इनका पालन करते हैं परन्तु जब

कि वह इनको हानिकारक मालूम होने लगते हैं तभी वह राज्य इनका उल्लंघन कर देते हैं और इस प्रकार कानून न होने से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिती खराब हो जाती है।

राष्ट्रीय कानूनः—राष्ट्रीय कानून वह है जो कि राष्ट्र की सीमा के अन्दर रहने वाले लोगों पर ही लागू किया जाता है। राष्ट्रीय कानून तीन भागों में विभाजित किया गया है। एक तो वैधानिक कानून, दूसरा साधारण कानून, और तीसरा Permissive legislation इन सब कानूनों की परिभाषा निम्नलिखित हैं।

वैधानिक कानूनः—(Constitutional law):-मध्यकाल में व्यक्ति पर कानून के द्वारा अंकुश था परन्तु सरकार पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं था। जैसे जैसे समाज उन्नति करता गया और लोगों में जागृति उत्पन्न हुई तो उन्होंने सरकार पर भी अंकुश लगाना आवश्यक समझा। वैधानिक कानून सरकार के कार्य पर अंकुश लगाता है जिस प्रकार से कानून के द्वारा व्यक्ति पर दवाव डाला जाता है। वर्तमान समय में लोगों के प्रतिनिधि द्वारा एक सभा एकत्रित होती है जो कि विधान सभा के नाम से पुकारी जाती है और जिसका कि ध्येय विधान बना के सरकार को स्वेच्छाचारी बनने से रोकना है। विधान में इस बात का वर्णन होता है कि किस प्रकार की सरकार होनी चाहिये, उसके भिन्न भिन्न भागों के क्या अधिकार होंगे, एक भाग का दूसरे भाग से क्या सम्बन्ध होगा, सरकार और राज्य में आपस में क्या क्या सम्बन्ध होंगे। लोगों के मौलिक अधिकार क्या होंगे। सरकार का कोई भी अंग अपने वर्णन किये हुए कार्यों से अधिक कार्य करे तो किस प्रकार से इसको रोका जायगा। इस प्रकार की सब बातें विधान में लिखी होती हैं और इनको वैधानिक कानून कहते हैं। वैधानिक कानून लिखित और अलिखित दोनों हो सकता है। इंगलिस्तान में राज्य का विकास हुआ और इस कारण अधिक मात्रा में वहां का कानून अलिखित है, परन्तु वहां पर भी कुछ भाग

लिखित है। जो कि वहाँ की संसद ने समय २ पर स्वीकार करके स्थापित किया है।

साधारण कानूनः—एक नागरिक का राज्य से क्या सम्बन्ध होगा या एक नागरिक का दूसरे नागरिक से क्या सम्बन्ध होगा। इन सब बातों का निश्चय साधारण कानून द्वारा होता है। यदि कोई व्यक्ति इन कानूनों का उल्लंघन करता है तो न्यायालय द्वारा उसकी देख भाल होती है और उल्लंघन करने वाले को दण्ड मिलता है। इस प्रकार ये कानून व्यवस्थापिका द्वारा स्थापित होते हैं। राज्य की पुलिस अधिकतर इन कानूनों की देख भाल करती है, लोगों को इनके पालन करने पर जोर देती है और यदि कोई उनका उल्लंघन करता है तो न्यायालय द्वारा उनको दण्ड मिलता है इस प्रकार यह वैधानिक कानून से काफी हद तक अलग हैं।

Permissive Legislation:—साधारण कानून दो प्रकार के होते हैं एक तो (Compulsory legislation) याने सब पर लागू होने वाले कानून और दूसरे (Permissive legislation) याने वे कानून जो कि एक कार्य करने की स्वीकृति देते हैं। परन्तु कार्य करना व्यक्ति के ऊपर निर्भर है। समाज के सुधार के लिये सरकार जब कोई कानून बनाती है और उस कानून में अधिक भेद भाव होता है तो सरकार (Compulsory legislation) नहीं बनाती है। क्योंकि इससे जनता में अशान्ति उत्पन्न होती है और वह यह विचार करते हैं कि उनकी इच्छा के विरुद्ध उन पर एक कानून लागू किया गया है जिसको कि वह समाज के लाभ का नहीं समझते हैं। इस गलत विचार को दूर करने के लिये सरकार (Permissive legislation) बनाती है जिसका कि अर्थ यह है कि उस कानून की शर्तें सिर्फ उन लोगों को लागू होंगी जो कि इनको स्वयं स्वीकार करेंगी। और दूसरे लोग जो इसको अस्वीकार करेंगे उनको ऐसा कानून लागू नहीं होगा (Hindu marriage & divorce Bill) हिन्दू शादी और तलाक का बिल

जो आज कल संसद् के सामने है वह (Permissive legislation) है। वह एक प्रकार से लोगों को ज्ञान देता है और वह लोगों पर उनकी इच्छा के विरुद्ध उन पर लागू नहीं किया जायगा। जो लोग कि धार्मिक रीति-रिवाज में परिवर्तन नहीं चाहते हैं उनको पूरा अधिकार है कि वह अपने धार्मिक रीति रिवाज से अपनी शादी विवाह करें और इस कानून की धाराएं उनको लागू नहीं होंगी, परन्तु वह लोग जो कि यह विचार करते हैं कि रीति रिवाज में परिवर्तन लाना आवश्यक है, उनके लिये यह कानून रास्ता साफ कर देता है। यदि वह स्वयं अपनी इच्छा से रजिस्ट्रार के यहां अपनी शादी रजिस्टर करायें तो इस कानून की धाराएं उनको लागू होंगी और दोनों की इच्छा से आपस में तलाक हो सकेगा, और दूसरी बातों का भी जो कानून में वर्णन है उनसे लाभ उठा सकेंगे और फिर जब भविष्य में लोगों का विकास होगा, इस पर विरोध कम हो जायेगा और जनता सहमत अधिक हो जायेगी तो यह कानून उन पर लागू कर दिया जायगा और इस प्रकार समाज की उन्नति होगी।

कानून की मुख्य २ बातें निम्नलिखित हैं

१. कानून जनता को आम रास्ता बतलाता है उसका ध्येय यह होता है कि किस प्रकार से व्यक्ति कार्य करे जिससे कि अधिक मात्रा में उन्नति हो सके।

२. वह बराबर की स्थिति से छोटे और बड़े अमीर और गरीब सब पर एक समान लागू किया जाता है।

३. कानून का सम्बन्ध व्यक्ति के बाहरी कार्यों से है न कि उसके अन्दरुनी विचार से। एक व्यक्ति के यदि विचार खराब हैं पर वह कार्यरूप में बाहरी तौर पर कोई खराब कार्य नहीं करता है तो वह कानून की पकड़ में नहीं आता है।

४. कानून राज्य के उच्चकोटि के मनुष्य के उच्च विचारों का निचोड़ नहीं है। बल्कि वह लोगों के विचारों का समझौता है जिसमें

कि सब लोगों के विचारों का औसत निकाल कर कानून में सम्मिलित किया जाता है जिससे अधिक से अधिक संख्या में लोगों की स्वीकृति प्राप्त हो सके और फिर वह खुशी से उसका पालन करें।

५. कानून उच्चकोटि के मनुष्य के विचारों को प्रकट नहीं करता बल्कि इससे साधारण व्यक्ति के विचार प्रकट होते हैं। जो कि उच्च कोटि के मनुष्यों के विचारों से बहुत पीछे होते हैं। परन्तु जैसे २ समाज में उन्नति होती है मनुष्य के विचारों में परिवर्तन आता जाता है और धीरे धीरे उसके विचार उच्चकोटि के मनुष्य के विचार के भांति होने लगते हैं। कानून इस कारण हमेशा के लिये स्थिर नहीं हो सकता और समाज में परिवर्तन आने पर कानून में भी परिवर्तन लाना आवश्यक हो जाता है। जब कि समाज में उन्नति हो जाये और कानून वैसा का वैसा ही रहे तो वह कानून बजाय लाभ के हानिकारक बन जाता है और इसलिये यह आवश्यक है कि समाज की उन्नति के अनुसार कानून में भी परिवर्तन लाया जाये तभी समाज की उन्नति शीघ्रता से हो सकती है।

६. कानून एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के मन मानी राय नहीं है बल्कि इसमें औसत दर्जे के आदमियों के विचार प्रकट होते हैं और कानून उल्लंघन करने पर पुलिस के द्वारा इसको स्वीकार कराया जाता है। परन्तु नैतिक दृष्टिकोण से हमारे लिये यह आवश्यक है कि पुलिस के भय के कारण नहीं बल्कि अपना कर्तव्य समझ कर इसका पालन करें। वर्तमान समय में व्यवस्थापिकासभा द्वारा कानून बनाया जाता है और व्यवस्थापिकासभा में लोगों के चुने हुए सदस्य उपस्थित होते हैं जो कि लोगों की भलाई और बुराई को पूरी तरह जानते हैं और वह लोगों की कठिनाइयाँ दूर करने और उनके लाभ को सामने रखते हुए कानून बनाते हैं और इस प्रकार कानून का पालन करना हमारी एक नैतिक जिम्मेदारी है।

अमेरिका तथा दूसरे देशों में कानून पालन पर जोर

प्रजातन्त्र सरकार कानूनी सरकार कहलाती है और जितनी अधिक मात्रा में लोग कानून को खुशी-खुशी पालन करते हैं उतनी ही प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ होती है। इसी कारण कानून को पालन करने का प्रचार वहां अधिक होता है। इब्राहीम लिंकन ने इस के प्रचार के लिये अधिक प्रयत्न किया था। निम्नलिखित कथन इब्राहीम लिंकन का ही है जो कि उसने अमेरिका में प्रचलित किया था और इसका हमारे देश के लिये भी इतना महत्व है जितना की अमेरिका और दूसरे प्रजातन्त्र देशों में है।

Let reverence for the law be breathed by every mother to the lisping babe that prattles on her lap; let it be taught in Schools, in Seminaries and in colleges; let it be written in primers, spelling books and almances; let it be preached from the pulpit, proclaimed in legislative bodies and enforced in Courts of Justice. And in short let it become the political religion of the nation.

इसका अर्थ यह है कि हर एक परिवार में मातायें और बहिनें बचपन से ही बच्चे को कानून पालन करने का पाठ पढ़ायें। हर एक प्राइमरी, सकेन्डरी स्कूल और विश्व विद्यालय में लगातार यह पाठ दोहराया जाय। प्रत्येक मन्दिर, और मस्जिद, में सत्संग के द्वारा कानून पालन करने पर जोर दिया जाय और न्यायालय द्वारा ये कार्य रूप में लाया जाय। हमको कानून पालन करना राजनीतिक धर्म समझ लेना चाहिये और इससे ही हमारे राजनीतिक धर्म अर्थात् प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ होगी और फिर देश की उन्नति शीघ्रता से होगी।

कानून और स्वतन्त्रता:—हम पहिले लिख चुके हैं कि स्वतन्त्रता राज्य में ही स्थापित हो सकती है। राज्य नागरिक स्वतन्त्रता की सीमा नियुक्त करता है। ये नियुक्ति कानून द्वारा होती है। कानून के चार दीवारी में हम पूर्ण स्वतन्त्र हैं परन्तु जब कि हम कानून का उलंघन

करते हैं और दूसरे के अधिकारों में हस्तक्षेप करते हैं तो राज्य हमको ऐसा करने से रोकता है। इस प्रकार कानून द्वारा स्वतन्त्रता स्थापित होती है।

प्राचीनकाल की स्थितिः—राज्य के हाथ में सर्वोच्चसत्ता होती है और इस सर्वोच्चसत्ता के द्वारा वह कानून दूसरों पर लागू करती है और उनसे स्वीकार कराती है। प्राचीन समय में राज्य की सर्वोच्चसत्ता पर कुछ अंकुश नहीं था। इस कारण सर्वोच्चसत्ता ने अत्याचार का रूप धारण कर लिया था और फिर व्यक्ति की किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं थी। व्यक्ति एक प्रकार से राज्य का सेवक था। दूसरे जब कि इसके विपरित स्थिति हुई और व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं रहा तो फिर मनुष्य की खराब प्रकृतियों को याने ध्वंसकारी शक्तियों के विकास को पूरा अवसर मिला जिससे बजाय राज्य को बनाने के राज्य की बरबादी हुई। राज्य की सर्वोच्चसत्ता का अन्त होगया, राज्य छोटे छोटे टुकड़ों में बंट गया और इस प्रकार इसकी उन्नति कम हुई। इन सब बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि समाज की उन्नति जारी रखने के लिये राज्य की सर्वोच्चसत्ता और व्यक्ति की स्वतन्त्रता इन दोनों पर बराबर का अंकुश रखना चाहिये और इन दोनों के प्रभाव से ही राज्य की उन्नति जारी रहती है।

वर्तमान स्थितिः—आज कल उन्नति के मार्ग में समाज ने एक पग आगे रखा है। पहला तो विधान की स्थापना है जिसके द्वारा सरकार की सीमा नियत होती है और इस प्रकार सरकार की सर्वोच्चसत्ता पर अंकुश होता है। दूसरे व्यक्ति को मौलिक अधिकार प्राप्त होते हैं और उसकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर सरकार की सर्वोच्चसत्ता भी हस्तक्षेप नहीं कर सकती। यदि किसी प्रकार का हस्तक्षेप होवे तो विधान में उसके लिये उपाय होता है। तीसरे राज्य की सर्वोच्चसत्ता पर उच्चतम न्यायालय के द्वारा प्रतिबन्ध लगाया जाता है। चौथे न्यायालय पर कार्यकारिणी का दबाव या अंकुश नहीं होता है और इस प्रकार न्याया-

लय, व्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा करती है। पांचवें, एक समय यह समझा जाता था कि अधिकारों का विभाजन व्यक्ति की स्वतन्त्रता के लिये आवश्यक है। परन्तु अब यह गलत सिद्ध हुआ है और अधिकारों का विभाजन न होते हुए भी व्यक्ति स्वतन्त्र होता है। छठे लोक सेवा आयोग (Public Service Commission) और निर्वाचन आयोग (Election Commission) इन दोनों विभागों पर कार्यकारिणी का कुछ भी दबाव नहीं होना चाहिये क्योंकि व्यक्ति की स्वतन्त्रता स्थापित रखने के लिये इन दोनों विभागों की स्वतन्त्रता आवश्यक है। स्वतन्त्रता का अर्थ यह है कि मुझको मेरी योग्यता के अनुसार पद ग्रहण करने का पूरा पूरा अधिकार मिले और इसी प्रकार चुनाव में खड़ा होकर प्रतिनिधि बनने का अधिकार भी प्राप्त हो। यह जभी सम्भव है जब कि यह दोनों विभाग निष्पक्ष होकर बिना किसी दबाव के अपना अपना कार्य करें। सातवाँ, वर्तमान समय में कानून व्यवस्थापिकासभा द्वारा बनाया जाता है जिसमें कि जनता के प्रतिनिधि होते हैं और कानून तुरन्त नहीं बन जाता बल्कि उसका एक लम्बा तरीका (Lengthy Procedure) होता है। हर एक कानून को तीन सिढ़ियों में से गुजरना होता है जो कि तीन रिडिन्गज (Readings) कहलाती हैं। कुछ राज्यों में पहली रिडिन्ग के बाद और कुछ राज्यों में दूसरी रिडिन्ग के बाद बिल कमेटियों में सौंपा जाता है जहाँ कि उनकी पूरी रूप से देख भाल होती है और आखरी सिढ़ी याने (Third Reading) में व्यवस्थापिका फिर उसकी देख-भाल करती है और यदि सदन स्वीकार कर लेता है तो फिर वह दूसरे सदन में भेजा जाता है। और फिर वहाँ भी इसी प्रकार से तीन सीढ़ियों से गुजरना होता है। इसके पश्चात् राजा या राष्ट्रपति के स्वीकार करने पर वह लागू किया जाता है। हर स्थिति पर जन मत का ध्यान रखा जाता है और यदि जनता की स्वीकृति नहीं है तब या तो वह कानून बनता ही नहीं है और यदि बनता भी है तो काफी समय के बाद जब कि जनता

स्वीकृति दे देती है। इस सबका ध्येय यही है कि कानून द्वारा व्यक्ति की स्वतन्त्रता दृढ़ हो, कम नहीं हो। क्योंकि कानून का ध्येय व्यक्ति को स्वतन्त्र करना और उसके उन्नति के मार्ग में जो कठिनाइयाँ आती हैं उनको दूर करना है। जिससे समाज में उन्नति शीघ्रता से हो।

आदर्श राज्यः—वर्तमान समय में किसी भी प्रकार की सरकार क्यों न हो वह तमाम ऊपर लिखे हुए नियमों के आधार पर पाई जाती हैं जिससे राज्य की सर्वोच्चसत्ता भी स्थापित रहे और साथ साथ व्यक्ति की स्वतन्त्रता भी। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह है कि राज्य के बनाये हुए कानूनों में और व्यक्ति की स्वतन्त्रता में कोई भेद भाव नहीं हो। कानून वास्तव में व्यक्ति के लाभ के हों और लोगों को इस बात की शिकायत न हो कि कानून द्वारा उनकी स्वतन्त्रता पर हस्तक्षेप हो रहा है। लोग खुशी खुशी कानून का पालन करें और व्यक्ति की स्वतन्त्रता और राज्य की सर्वोच्चसत्ता में कुछ भेद भाव नहीं हो, वास्तविकता और कानूनी स्थिति या आदर्श दृष्टिकोण इन दोनों में अधिक अन्तर रहता है। जहाँ पर कि लोगों में स्वार्थ की मात्रा अधिक होती है वहां पर प्रतिनिधि जनता की इच्छा के विरुद्ध कार्य करते हैं और यदि लोगों में राजनैतिक जागृति नहीं है और वह अपने राजनैतिक अधिकारों की चौकसी नहीं करते हैं तो फिर स्वेच्छाचारी राज्य होने लगता है और व्यक्ति की स्वतन्त्रता कम हो जाती है। यदि व्यक्ति में राजनैतिक जागृतिन है तो वह प्रतिनिधियों के स्वेच्छाचारी कार्यों का विरोध करता है और फिर इस प्रकार का स्वेच्छाचारी राज्य नहीं हो सकता। इस प्रकार हर एक राज्य में कानून और व्यक्ति की स्वतन्त्रता इन दोनों में झगड़ा होता ही रहता है और जितना कि लोगों में राजनैतिक जागृति अधिक होता है उतना ही कानून समाज के लिये उन्नतिशील होता है और फिर समाज की उन्नति तेजी से होती है।

Ramsay Muir writes, "Law in the western sense cannot exist without some degree of liberty and liberty cannot exist except under the protection and support of law. Law and

liberty, these two, the one the bones and snews and the other the blood and glowing flesh and senses are the body of western civilization. And out of the union and interaction of these two arises the possibility of progress which in a permanent state, is only maintained by the health giving conflict of these two vital principles."

Questions.

1. Define law, what are its various sources ?
2. Discuss the various kinds of law ? Distinguish between permissive lagislation & ordinary law. What are the advantages of permissive lagislation.
3. What are the characteristies of law. Discuss then and distinguish between law and command.
4. Discuss in full the Nature of law.

N. B. इस प्रश्न में पहली बात तो यह बतलानी है कि कानून किसे कहते हैं और कानून और हुक्म एक चीज है या भिन्न भिन्न। कानून और हुक्म का भेद भाव इस अध्याय में बतला चुके है। दूसरी बात ये है कि कानून का तत्व बतलाओ कि वह हमारी इच्छाएँ प्रगट करता है। जिनसे हमें उन्नति करने में सहायता मिलती है। अनुभव से कई बातें हमारी लाभ की सिद्ध हुई है उन सबको हमने कानून का रूप दे दिया है इस प्रकार कानून हमारा सहायक है, बाधा डालने वाला नहीं। तीसरे कानून का ध्येय नागरिकों की सम्पत्ति और स्वतन्त्रता की रक्षा करना है और इस प्रकार कानून हमें दूसरे के अधिकारों में हस्तक्षेप करने से रोकता हैं। इसका अर्थ यह है कि कानून द्वारा ही स्वतन्त्रता स्थापित रहती है क्योंकि यह स्वार्थ की भावनाओं को रोकता है। चौथी बात ये है कि कानून हमारे अधिकार बतलाता है। पांचवीं बात यह है कि कानून हमको ऐसा वातावरण स्थापित करने में सहायता देता है जिससे कि व्यक्ति का पूरा विकास हो सके। जैसे कि शिक्षा का प्रबन्ध। मिलों में मजदूरों के काम करने के समय निश्चित करना इत्यादि, इन सबसे हमारी स्वतन्त्रता अधिक होती है और हमको विकास का अवसर मिलता है।

5. Discuss relation between law and morality. Can the state make man moral ?

यह पहले बतला चुके हैं कि कानून कुछ उच्चकोटि के मनुष्यों का उच्च मात्रा का नैतिक दृष्टिकोण प्रकट नहीं करता, बल्कि साधारण व्यक्ति के जो विचार हैं और जो कि उच्चकोटि के मनुष्यों के विचारों से बहुत पीछे हैं उनको प्रकट करता है। इस दृष्टिकोण से कानून और नैतिकता कुछ हद तक भिन्न भिन्न हैं। दूसरे कानून का सम्बन्ध मनुष्य के बाहरी कार्यों से है उसके अन्दरुनी विचारों से नहीं। परन्तु नैतिकता का सम्बन्ध मनुष्य के अन्दरुनी विचार और भावना से है। तीसरे कानून राज्य के अधिपत्य द्वारा स्थापित रहता है। परन्तु नैतिकता के लिये किसी प्रकार का दबाव नहीं होता और इसका पालन करना मनुष्य के हृदय और उसकी स्वयं की जिम्मेदारी पर है। चोथे, एक बात गैर कानून होते हुए नैतिकता के विरोध नहीं हो सकती है जैसे कि रास्ते का कानून, बायें हाथ पर चलो, इसका उलंघन करना गैर कानूनी अवश्य है परन्तु नैतिकता के विरुद्ध नहीं है। इसी प्रकार यह सम्भव है कि एक चीज नैतिकता के विरोध में हो परन्तु गैर कानूनी नहीं। जैसे हार्सरेसैज़ इत्यादि। कुछ बातें ऐसी हैं जो गैर कानूनी हैं साथ ही नैतिक दृष्टिकोण से भी गिरी हुई हैं जैसे कत्ल करना। क्या राज्य व्यक्ति का नैतिक दृष्टिकोण सुधार सकता है इसके सम्बन्ध में हमें यही कहना है कि एक समय तो लोग इसके पक्ष में नहीं थे कि राज्य स्वयं व्यक्ति का नैतिक दृष्टिकोण सुधारने का प्रयत्न करे। परन्तु आज कल सरकारने यह जिम्मेदारी भी अपने हाथ में लेली है। हर एक राज्य में एस. पी. सी. ए. (Society of Protection of Cruelty to Aninals) का कानून बना हुआ है। शराब पीना रोका जाता है। शिक्षा का प्रचार होता है। परन्तु राज्य इसमें जब ही सफल हो सकता है जब कि वह लोगों के मस्तक में परिवर्तन लाने का प्रयत्न करता रहे।

अध्याय तेरहवां

सरकार के स्वरूप

Forms of government

सरकार के प्राचीन वर्गीकरण

पुराने लेखकों ने सरकार का वर्गीकरण उसकी सर्वोच्चसत्ता के आधार पर किया है। यदि वह एक व्यक्ति के हाथ में है तो उसका नाम एक तन्त्र सरकार दिया है। यदि सर्वोच्चसत्ता किसी समूह के हाथ में है तो उसका नाम कुलीनतन्त्र सरकार दिया है और यदि सर्वोच्चसत्ता तमाम जनता के हाथ में है तो उसका नाम बहुतन्त्र सरकार दिया है

एरिसटोटल का वर्गीकरण निम्नलिखित है

सर्वोच्चसत्ता किसके हाथ में	शुद्ध सरकार	भ्रष्टाचार सरकार
एक व्यक्ति	एक तन्त्र सरकार	अत्याचारी सरकार
व्यक्तियों का समूह	कुलीन तन्त्र सरकार	अल्प जनतन्त्र सरकार
तमाम जनता	बहु तन्त्र सरकार	असंमीत भीड़ की सरकार

सर्वोच्चसत्ता एक व्यक्ति के हाथ में हो या व्यक्तियों के एक समूह के हाथ में हो या तमाम जनता के हाथ में हो, जब तक वह तमाम जनता के लाभ का कार्य कर रही है तो वह अवश्य शुद्ध और अच्छी सरकार है। परन्तु जब कि वह किसी खास समूह या दल के पक्ष में राज्य कर रही हो और लोगों के सुधार का प्रयत्न नहीं कर रही है तो वह भ्रष्टाचार सरकार हैं। एरिसटॉटल का वर्गीकरण वर्तमान स्थिति में लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि वर्तमान समय में सर्वोच्चसत्ता करीब करीब तमाम राज्यों में जनता के हाथ में है और यह होते हुए भी वह आपस में एक दूसरे से भिन्न है।

सरकारों का वर्तमान वर्गीकरणः—प्रजातन्त्र राज्य दो भागों में बांटे गये है; एक तो वह जहां पर एक तन्त्र सरकार हो (Monarchy)

हों, परन्तु राजा के अधिकार विधान के द्वारा सीमित कर दिये जाते हैं उसको वैधानिक एकात्मिक सरकार (Constitutional monarchy) कहते हैं। जैसा कि इंगलैन्ड में हैं। दूसरे वह सरकार जिसमें राज्य का सर्वे सर्वा एक नियत समय के लिये लोगों के द्वारा चुना हुआ व्यक्ति होता है, ऐसी सरकार को जनमत सरकार कहते हैं, जैसा कि अमेरिका फ्रांस और हमारे देश भारतवर्ष में है।

वैधानिक एकतन्त्रिक और प्रजातान्त्रिक जनमत ये दो भागों में बंटा हुआ है, पहला एकात्पिक और संधात्मिक और यह फिर दो भागों में विभाजित है, एक तो अध्यक्षात्मक और केविनैट या पार्लियामेन्टरी सरकार कहते हैं, जैसे कि हमारे देश भारतवर्ष में जनमत, संधात्मिक और पार्लियामेन्टरी सरकार है। इंगलैन्ड में वैधानिक एकतान्त्रिक एकात्मिक और पार्लियामेन्टरी सरकार है। अमेरिका में जनमत, संधा-त्मिक और अध्यक्षात्मिक सरकार हैं इन प्रकार की सरकारों की परिभाषा दूसरे भाग में दी हुई हैं।

प्रजातन्त्र सरकार

व्याख्या:—प्रजातन्त्र अंग्रेजी शब्द डेमोक्रेसी (Democracy) शब्द का अनुवाद है। जिसका विकास लैटिन के दो शब्द (Demos) डीमोस और क्राईटिया (Critia) से निकला है। इसका क्रमश: अर्थ जनता और शक्ति है, अर्थात प्रजातन्त्र में जनता की शक्ति से सरकार चलती है। और इस प्रकार प्रजातन्त्र की परिभाषा यह हो जाती है कि यह उस सरकार का स्वरूप है जिसमें प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अधिक मनुष्य सरकार के कार्य में भाग लें। प्रजातन्त्र के दो रूप हैं। एक प्रत्यक्ष और दूसरा अप्रत्यक्ष

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र:—प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र इस प्रकार की सरकार है जिसमें सब मनुष्य प्रत्यक्ष रूप से सरकारी कार्यों में भाग लें। प्राचीन ग्रीस व रोम में छोटे छोटे नगर राज्य स्थापित थे। वहाँ के राज्यों का

भूमी क्षेत्र और जनसंख्या बहुत कम थी। दास व घर के नौकर चाकरों को छोड़ कर बाकी सब लोगों को एक जगह एकत्रित होकर अपने राजनैतिक मामलों में वाद विवाद करना और उसकी नीति निश्चित करने का अधिकार प्राप्त था। इस प्रकार ग्रीस और रोम की नगर सत्ताओं में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र था, जिसके कुछ लोगों को छोड़ कर सबको राजनैतिक मामलों में भाग लेने का अधिकार था। वर्तमान समय में इस प्रकार का प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र प्रचलित नहीं हो सकता। क्योंकि राज्यों का क्षेत्र फल बहुत बढ़ गया है और जन संख्या अधिक हो गई है। प्रत्यक्ष प्रजा-तन्त्र आजकल भी स्विटज़रलेन्ड की कुछ कैन्टन्स में प्रचलित है क्योंकि इन जगहों की आबादी बहुत कम है, बाकी दूसरे स्थानों पर अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र प्रचलित है।

अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्रः—जनसंख्या अधिक होने के कारण सब लोग राज्य प्रबन्ध में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं ले सकते। इस कारण जनसंख्या निश्चित समूह में बांटी जाती है और हर एक समूह के लोग मत द्वारा अपना अपना प्रतिनिधि चुनते हैं, जो कि सभा में एकत्रित होकर जनता की भलाई के लिये कानून बनाते हैं। जिस प्रकार कि जिसके पैर में जूता है उसको ही यह ज्ञान हो सकता है कि जूते में कील किस स्थान पर और कितनी मात्रा में कष्ट पहुँचा रही है। उसी प्रकार लोगों के प्रतिनिधि को ही यह ज्ञान हो सकता है कि लोगों के दुःख दर्द क्या हैं और किस प्रकार से कार्य किया जाय कि उनके दुःख दर्द दूर हो और समाज की उन्नति हो।

प्रजा तंत्र राज्यः—संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रधान इब्राहीम लिंकन ने प्रजातन्त्र की परिभाषा इन शब्दों में की है।

"प्रजातन्त्र राज्य वह राज्य है जिसमें जनता पर जनता के हित के लिये जनता का शासन हो।"

सर्वोच्चसत्ता जनता के हाथ मेंः—ऐसे राज्य शासन में जनता

ही विधान बनाती है अर्थात् जनता ही इस बात का निर्णय करती है कि ऐसा शासन बनाया जाय जो कि देश में शान्ति स्थापित रखते हुए व्यक्ति को अपने विकास का पूरा २ अवसर दे। जनतन्त्र के सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने सदस्य चुनने का अधिकार होता है। इन सदस्यों के लिये यह आवश्यक है कि वो जनता के बनाये हुए विधान के अनुसार जनता के लाभ को सामने रखते हुए राज्य करें। जनता को भी पूरा पूरा अधिकार है कि वह सभायें करके और पत्रों के द्वारा अपने प्रतिनिधियों के कार्यों की पूरे रूप से जांच पड़ताल करें। जनता के लाभ के कार्यों का समर्थन करके अपने प्रतिनिधियों का हाथ दृढ़ करें जिससे वह लाभ दायक बातें शीघ्र ही कार्य रूप में ला सकें। वह बातें जो कि जनता के लाभ की नहीं हैं और जिनको कि जनता अस्वीकार करती है, उनका विरोध करें। जिससे प्रतिनिधि उनको लागू नहीं करें। ऐसी प्रणाली में यदि प्रजा को अपने अधिकारों की रक्षा करने की भावना हो और उनमें यदि राजनैतिक जागृति हो तो उनके प्रतिनिधि स्वेच्छाचारी नहीं बन सकते हैं। क्योंकि वे एक निश्चित समय के लिये नियुक्त किये जाते हैं। समय के अन्त होने पर उनको जनता के सामने प्रतिनिधि बनने के लिये फिर जाना पड़ता है। यदि इस समय उन्होंने प्रजा के लाभ को कुचल कर अपनी इच्छानुसार स्वेच्छाचारी राज्य किया तो उनकी स्थिति कमजोर हो जाती है और फिर उनका प्रतिनिधि चुना जाना असम्भव हो जाता है। यह भय उनको स्वेच्छाचारी बनने से रोकता है। इस से यह प्रगट हो जाता है कि जनतन्त्र में सर्वोच्चसत्ता पूर्ण रूप से जनता के हाथ में होती है ना कि एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह में।

ब्राइस और मैज़ानी की परिभाषाः—ब्राइस प्रजातन्त्र सरकार की परिभाषा करते हुए लिखते हैं कि प्रजातन्त्र, सरकार का वह स्वरूप है जिसमें शासन शक्ति किसी विशेष जाति या जातियों में नहीं बल्कि राष्ट्र के सब मनुष्यों में हो। इसका तात्पर्य यह है कि

जहां चुनाव द्वारा कार्य होता है वहाँ का शासन बहुमत के आधार पर होता है। (Mazanni) मैज़ानी के शब्दों में प्रजातन्त्र एक ऐसा राज्य है जिसमें योग्य लोगों की अध्यक्षता में सब लोगों के सहयोग से सारे समाज की उन्नति होती है।

हिन्दुस्तान और इंगलिस्तान में प्रजातन्त्र की स्थापना का तुलनात्मक अध्ययन

हिन्दुस्तान में जनतन्त्र की स्थापना में देर का कारण:—

कुछ देशों में जनतन्त्र की स्थापना बहुत पहले से ही होगई थी। जैसे कि इंगलैन्ड में, और कुछ में वर्तमान समय में हुई जैसे कि हमारा देश भारतवर्ष। इससे यह नहीं, समझना चाहिये कि अंग्रेज लोग अधिक योग्य थे और हम अयोग्य थे। हमारे देश में इतने देर से जनतन्त्र की स्थापना हुई, इसका मुख्य कारण भूगोल की कठिनाइयाँ थी। हमारा देश बहुत बड़ा है और जब तक कि विज्ञान की उन्नति नहीं हुई थी और रेल हवाई जहाज आदि चीजों का अविष्कार नहीं हुआ था तब आवागमन के साधन आज कल जैसे नहीं थे। एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचने में अधिक समय लगता था। इस कारण से जनतन्त्र की स्थापना कठिन थी क्योंकि समिति और सभा द्वारा इसमें लोगों का सहयोग अवश्य होता है। जो कि आवागमन के साधन न होने के कारण प्राप्त करना कठिन था। इस प्रकार का सहयोग प्राप्त नहीं हो सकता था यही कारण है कि हमारे यहां जनतन्त्र की स्थापना देर से हुई। इसके विपरीत हमारे यहाँ शक्तिशाली केन्द्रीय शासन की स्थापना हुई क्योंकि हिन्दुस्तान को उत्तर पश्चिमी सीमा से भय लगा रहता था। इस कारण लोगों ने सदा केन्द्रीय शासन की नींव दृढ़ करने की प्रतिज्ञा की जिससे विदेशी आक्रमण-कारियों का देश पूरी प्रकार से सामना कर सके। जब २ लोग अपने ध्येय से गिर गये और केन्द्रीय शासन को कमजोर कर दिया उस समय से ही हिन्दुस्थान कठिनाइयों में पड़ गया।

इंगलैन्ड प्रजातन्त्र की जन्म भूमि क्यों हुई ?:—इंगलैन्ड में इसके विपरीत स्थिति थी। वह एक छोटा सा टापू है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने में अधिक समय नहीं लगता है। टापू होने के कारण जब तक कि दूसरे देश की सामुद्रिक शक्ति अधिक न हो यहां पर आक्रमण असंभव था। अंग्रेजों ने शुरू से ही अपनी सामुद्रिक शक्ति इतनी बढ़ाली थी कि उनको दूसरे राज्य के आक्रमण का भय ही जाता रहा। जब उनको किसी प्रकार का भय नहीं रहा तो उन्होंने देश के सुधार की ओर ध्यान दिया। आपस में मिलने जुलने की सुविधा होने के कारण उनमें राजनैतिक जागृति उत्पन्न हो गई। उन्होंने फिर राजा की शक्ति को कम करदी और प्रजा की शक्ति अधिक होती गई। इस प्रकार उन्होंने अपने यहां जनतन्त्र की नींव डाली। इससे यह प्रकट होता है कि भूगोल की सहायता ही के कारण अंग्रेज जनतन्त्र स्थापित करने में सफल हुये और भूगोल की कठिनाइयों ने जनतन्त्र हमारे देश में नहीं होने दिया।

सरकार की रूप रेखा भूगोल पर निर्भर है:—इससे यह सिद्ध हो जाता है कि सरकार की रूप-रेखा भूगोलिक स्थिति पर निर्भर है। अंग्रेज लोगों को इस बात का गर्व है कि उनका देश पार्लियामेन्टरी सरकार का जन्मदाता है। और इससे उन्होंने असभ्य और अज्ञानी लोगों में यह दृष्टिकोण उत्पन्न किया है कि दूसरे राज्य के लोगों की अपेक्षा और विशेषतः हिन्दुस्तान के नागरिकों से उनमें अधिक प्रभुता है परन्तु हमने इसको गलत सिद्ध कर दिया है। हमारे देश में प्रजातन्त्र की स्थापना देर से होना और उनके यहां इसका कुछ शताब्दियों पहले स्थापित हो जाना यह केवल भौगोलिक स्थिति का ही परिणाम है। आज विज्ञान की उन्नति के कारण उन कठिनाइयों को हमने वश में कर लिया है जो कि हमारे मार्ग में बाधक थी और हम नींव दृढ़ करके तेजी से उन्नति के मैदान में आगे बढ़ते चले जा रहे हैं।

भारत सरकार की प्रशंसा:—हमारे देश के लोगों को जो

उन्नति देश में हो रही है, उसका ज्ञान तक नहीं है परन्तु विदेशी लोग जो यहाँ आते हैं उनको बहुत आश्चर्य होता है और वह अपने समाचार पत्रों में हमारे देश की प्रशंसा करते हैं। मैंचस्टर गार्डियन जो कि इंगलैन्ड का प्रसिद्ध समाचार पत्र है उसके संवाददाता ने हिन्दुस्तान की उन्नति का वर्णन करते हुए ७ जून सन् १९५४ के समाचार पत्र में लिखा है कि Pericles के अनुसार ऐथिन्स युनान की पाठशाला थी और इसी प्रकार यदि श्री नेहरू कहें कि एशिया की पाठशाला देहली है तो यह कोई गलत बात नहीं है। इन दिनों एशिया में पार्लियामेन्टरी सरकार असफल हो रही है। पाकिस्तान के भाग पूर्वी बंगाल में पार्लियामेन्टरी सरकार का अन्त करके गवर्नर का राज्य स्थापित कर दिया गया है। जापान में सोशिलिस्ट दल के लोगों ने सभापति और उपसभापति को कमरे में बन्द करके संसद के अधिवेशन में भाग लेने से रोक दिया। इंडोनेशिया की संसद भी कोई सफलता पूर्वक कार्य नहीं कर रही है। एशिया में हिन्दुस्तान ही एक ऐसा देश है जहां पर कि प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ हो गई है और यहाँ की संसद अत्यन्त ही योग्यता के साथ अपना कार्य सफलता पूर्वक कर रही है।

विद्यार्थियों को चाहिये कि इस अयोग्यता के विचार को दूर करें। हम किसी प्रकार से भी अंग्रेज और दूसरी जातियों से कम नहीं हैं। यदि हम अपने में गुणों का विकास करके अपनी संस्कृति की अच्छाइयां ग्रहण करते हुए आगे बढ़ते चलेंगे तो हमारी उन्नति दिन दूनी और रात चौगुनी होगी। प्राचीन समय के समान फिर हमारा नाम सारे संसार में चमक जायेगा।

Delhi is the School of Asia

"Pericles said that Athens was the School of Hellas; Shree Nehru, without boasting, may say that Delhi is the School of Asia. Parliamentary Government have not had a very good time in Asia. Parliamentary Government has been suspended in East Bengal. The Socialist

party in Japan had locked the President and the Vice President in their rooms to prevent them from presiding over the session of their Parliament. The Indonesian Parliament is not edifying. All that is happening in Asia throws a spotlight on the Indian Parliament as the one institution of its kind which is functioning in an exemplary way (Manchester Guardian).

प्रजातन्त्र के भिन्न भिन्न दृष्टिकोण:—प्रजातन्त्र के चार दृष्टि-कोण हैं (१) प्रजातन्त्र राज्य (२) प्रजातन्त्र समाज (३) व्यक्तिका प्रजातन्त्र के आधार का दृष्टिकोण (४) प्रजातन्त्र सरकार

१. प्रजातन्त्र राज्य (Democratic State):-प्रजातन्त्र राज्य वह राज्य है जिसमें कि सर्वोच्चसत्ता लोगों के हाथ में हो। लोग इस बात का निर्णय करें कि किस समय किस प्रकार की सरकार होनी चाहिये। यह सम्भव है कि यदि कोई आपत्ति आजायें या ध्वंसकारी शक्तियों का जोर हो जायें तो राज्य के सर्वे-सर्वा को अधिक शक्ति देकर तानाशाही रूप से कार्य करने का अधिकार दे दें, परन्तु इस पर भी ऐसा राज्य प्रजातन्त्र राज्य कहलायेगा, यद्यपि लोगों को सरकार के नियत करने या उसके अन्त करने का अधिकार है।

२. प्रजातन्त्र समाज:—(Democratic Society):—प्रजातन्त्र समाज वह समाज है जिसमें सबको बराबर के अधिकार हों और ऐसा कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह नहीं हो जिसके कि अधिकार दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह की अपेक्षा अधिक हों। पैदाइश, धन, धर्म, और जात-पांत के आधार पर कोई छोटा बड़ा न हो। बल्कि हर साधारण मनुष्य का वही आदर हो जो दूसरों का है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रजातन्त्र समाज वह समाज है जिसमें कि सामाजिक एकता (Social harmony) हो। यह वह समाज है जिसमें एक वर्ग दू सरे वर्ग को निर्धन करके स्वयं धनवान बनने का प्रयत्न नहीं करे।

इसमें राजनीतिक तथा आर्थिक शक्तियाँ सबके हाथों में विकेन्द्रित होती हैं ।

३. व्यक्ति का प्रजातन्त्र आधार का दृष्टिकोण:—(Democratic attitude of mind):—व्यक्ति में दो प्रकार के दृष्टिकोण होते हैं, एक तो तानाशाही और दूसरा प्रजातन्त्र । तानाशाही दृष्टिकोण वह दृष्टिकोण है जिसमें कि व्यक्ति अपना हुक्म दूसरों पर लागू करना चाहता है और ऐसा पुरुष दूसरे लोगों के दृष्टिकोण को समझने का कोई प्रयत्न नहीं करता । प्रजातन्त्र दृष्टिकोण वह दृष्टिकोण है जिसमें कि व्यक्ति दूसरे लोगों का दृष्टिकोण समझने का प्रयत्न करता है और यदि उनके विचारों में कोई तत्व होता है तो वो अपने विचारों को बदल देता है और एक प्रकार का समझौता सा करके अपने कार्य का निर्णय करता है। प्रजातन्त्र समझौते पर निर्भर है क्योंकि उसका ध्येय अधिक से अधिक लोगों के परस्पर का सहयोग प्राप्त करना है और वह हुक्म के विरोध में है। प्रजातन्त्र लोगों को देता भी है और उनसे मांगता भी है। समझौते के आधार पर कार्य होने के कारण प्रजातन्त्र लोगों से यह मांगता और यह आशा करता है कि हर एक व्यक्ति अपना २ कार्य और कर्तव्य पूरे रूप से पालन करे और अपना उत्तरदायित्व समझने का प्रयत्न करें ।

१. वैज्ञानिक सोच विचार:—(Rational Thinking):-इसका प्रजातन्त्र में अधिक महत्व है क्योंकि प्रजातन्त्र समझौते पर निर्भर है और लोग सरकारी नीति पर जब ही प्रभाव डाल सकेंगे जब कि उनमें वैज्ञानिक सोच विचार का माद्दा हो । इसका अर्थ यह है कि राजनैतिक विषय पर सोच विचार करते हुए यह जानना चाहिये कि उससे लाभ अधिक हैं या दोष । यदि लाभ अधिक हैं तो उसका समर्थन करना चाहिये और यदि दोष अधिक है तों उसका विरोध ।

२. राजनैतिक मामलों में भाग लेना:—प्रजातन्त्र समानता

के आधार पर निर्भर है और इसीलिये उसमें समझौते पर अधिक महत्व है। इस कारण से प्रजातन्त्र में यह आशा की जाती है कि लोग सरकार के कार्यों में भाग लेकर सरकार का हाथ बटायेंगे और इस प्रकार सरकार का कार्य तेजी से होगा। लोगों में यदि यह दृष्टिकोण नहीं बदला है और राजनीतिक मामलों में रुचि नहीं है तो ऐसा प्रजातन्त्र हानिकारक सिद्ध होता है।

३. सहन शक्तिः—(Tolerance Power) प्रजातन्त्र का ध्येय अधिक से अधिक मात्रा में लोगों का सहयोग प्राप्त करना है और इस कारण इसमें हर स्थान पर समझौता करके आपस के भेदभाव दूर करने पड़ते हैं। वह जब ही सम्भव है जब कि लोगों में सहनशक्ति अधिक हो।

४. उत्तरदायित्वः—मनुष्य में इतना विकास होना चाहिये कि वह अपने उत्तरदायित्व को समझे और अपने ऊपर स्वयं अंकुश लगाये। ऐसे दृष्टिकोण में ही प्रजातन्त्र सफल हो सकता है।

प्रजातन्त्र सरकारः—(Democratic government) प्रजातन्त्र सरकार वह है जिसमें हर एक व्यक्ति को मत देने का अधिकार हो और उसमें लोगों के प्रतिनिधि व्यवस्थापिका सभा में जाकर कानून बनाते हैं। प्रजातन्त्र सरकार के लिये यह आवश्यक है कि प्रजातन्त्र राज्य हो, प्रजातन्त्र समाज हो और प्रजातन्त्र के आधार पर लोगों का दृष्टिकोण हो। तभी प्रजातन्त्र सरकार सफल हो सकती है।

प्रजातन्त्र की सफलता की आवश्यक बातें

१. चरित्र गठनः—प्रथम बात तो यह है कि प्रजातन्त्र में लोगों का चरित्र उच्च श्रेणी का होना आवश्यक है। यदि समाज का चरित्र गिरा हुआ है तो प्रजातन्त्र में अवश्य दोष उत्पन्न हो जायेंगे। क्योंकि वह व्यक्ति जो कि प्रजा द्वारा चुने जायेंगे और जिनके कि हाथ में राज्य प्रणाली आयेगी, उनका भी चरित्र अवश्य गिरा हुआ होगा।

और वह लोग जनता के हित को कुचल कर अपने हित के लिये राज्य करेंगे। इससे राज्य प्रबन्ध खराब होगा और जनता में अशान्ति उत्पपन्न होगी।

२. नागरिकता की भावनाः—दूसरी बात यह है कि प्रजातन्त्र में राजनैतिक जाग्रति होना आवश्यक है, इसका अर्थ यह है कि लोगों में नागरिकता की भावना हो। त्याग और समाज सेवा की भावना हो और अपनी जिम्मेदारी का ज्ञान हो। यदि लोगों में राजनैतिक कार्यों में भाग लेने की दिलचस्पी नहीं है और वह अपने ही निजी लाभ के कार्यों में फंसे रहते हैं और अपने प्रतिनिधियों को अच्छा कार्य करते हुये न तो उनका समर्थन करके उनका हाथ मजबूत करते हैं और न ही उनके हानिकारक कार्य करते हुये पत्रों और सभाओं द्वारा उनका विरोध करते हैं तो फिर ऐसी स्थिति में सरकार स्वेच्छाचारी बन जाती है। राज्य प्रबन्ध खराब हो जाता है।

३. भले बुरे का ज्ञानः—तीसरी बात यह है कि प्रजातन्त्र में लोगों में राजनैतिक ज्ञान की मात्रा अधिक अंश में होना आवश्यक है। उनमें अच्छे और बुरे आदमी में अन्तर करने और अच्छे आदमी को पहचानने का ज्ञान रखने की योग्यता अधिक होने की आवश्यकता है। यदि उनमें यह योग्यता नहीं है तो पाखण्डी जो कि दिल में कुछ और बाहर कुछ होते हैं वह इस प्रकार का जाल फैलाते हैं कि साधारण व्यक्ति उनके कहने में आ जाता है और फिर उनके वोटों के द्वारा उनके प्रतिनिधि बनकर व्यवस्थापिका सभाओं में मन मानी करते हैं और राज्य प्रबन्ध खराब हो जाता है।

४. एकता की आवश्यकताः—चौथी बात यह है कि प्रजातन्त्र की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि तमाम जनता एकता की लड़ी में पिरोये हुये हों। और उनमें आपस में भेद भाव अधिक मात्रा में नहीं होना चाहिये। वह समाज जहाँ कि लोगों में

धर्म, भाषा, रीति-रिवाज और संस्कृति के कारण आपस में भेद भाव होते हैं, और जनता अलग अलग वर्गों में विभाजित होती है, वहाँ पर प्रजातन्त्र सफल होना कठिन हो जाता है। क्योंकि वहाँ हर विषय पर लोग यह नहीं सोचते हैं कि इससे देश को लाभ है या नुकसान बल्कि इसको वह उस दृष्टिकोण से हर विषय को देखते हैं कि उनकी जाति, धर्म और वर्ग के लोगों को इससे लाभ है या नुकसान है और इस प्रकार वह देश को भूल जाते हैं।

५. प्रेस और प्लेटफार्म की स्वतन्त्रता:—पाँचवें प्रजातन्त्र की सफलता के लिये प्रेस और प्लेट फार्म की स्वतन्त्रता आवश्यक है। प्रजातन्त्र में लोगों को सभा में एकत्रित करके और समाचार पत्रों द्वारा प्रचार करके अपने विचारों को प्रगट करने का पूरा पूरा अवसर मिलना चाहिये। इससे सरकार को यह पता लग जाता है कि लोगों का दिमाग किस ओर जा रहा हैं और वह क्या २ सुधार चाहते हैं। यदि सरकार गलत रास्ते पर हो तो वह अपने को सुधार सकती है, और जनमत के अनुसार राज्य प्रबन्ध चलाने में उनको सहायता मिलती है।

६. आर्थिक समानता:—प्रजातन्त्र की सफलता के लिये सबसे अधिक यह आवश्यक है कि समाज में धन का बंटवारा ठीक तौर पर हो। ऐसी समाज जहाँ पर कि चन्द मुट्ठी भर व्यक्तियों के हाथ में सम्पत्ति हो और अधिक संख्या में लोग निर्धन हों वहाँ पर प्रजातन्त्र का सफल होना असम्भव हो जाता है क्योंकि पूंजीपति लोग निर्धन लोगों पर अपना प्रभाव डाल कर उन को अपने आदमियों को वोट देने पर विवश करते हैं और इस प्रकार यह प्रतिनिधि पूंजीपति लोगों के पक्ष में नियम बनाते हैं और साधारण जनता की स्थिति ऐसे राज्य में रोज ब रोज गिरती जाती है।

परन्तु जैसा कि हम पहले ऊपर लिख चुके हैं कि प्रजातन्त्र खुद एक बड़ी शिक्षा है। यह लोगों को पाठ पढ़ाती है। प्रारम्भ में अवश्य कुछ

प्रबन्ध खराब होता है, परन्तु धीरे २ लोगों में अपने आप ही विकास होने लगता है, ज्ञान प्राप्त होता है। अनुभव होता है, जिम्मेदारियों का ज्ञान होने लगता है, और सरकार अपने आप फिर सुधर जाती है। हमें प्रजातन्त्र रूपी समुद्र में कूद पड़ना चाहिये और फिर यदि हम हाथ पाँव मारेंगे तो हमें खुद ब खुद तैरना आ जायेगा।

प्रजातन्त्र और हिन्दुस्तान की स्थिति

Social harmony की कमी

१. जातिपांति का बन्धनः—प्रजातन्त्र स्वतन्त्रता समानता और समाजिक न्याय पर निर्भर है और इस प्रकार वर्तमान जाति की प्रथा प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के विरुद्ध है। जाति में छोटे बड़े का भेद भाव है। इसलिये मनुष्य एक दूसरे से बराबरी के दावे से मेल जोल नहीं कर सकता है।

२. हरिजन लोगों की स्थितिः—हमारी समाज में हरिजन लोगों की बहुत गिरी हुई हालत है। उनकी दूसरी जातियों से मिलने जुलने और आपस में दूसरों के साथ परस्पर का सहयोग स्थापित करने का बहुत कम अवसर मिलता है। प्रजातन्त्र की सफलता के लिये यह आवश्यक कि इस भेद भाव को दूर किया जाय।

३. परिवार का असमानता के आधार पर होनाः—वर्तमान परिवार में पुरुष की प्रभुता है और नारी की स्थिति गिरी हुई है उसको सम्पत्ति में कोई हक नहीं है और वह अशिक्षित है। औरतें राजनीतिक और संस्कृति सम्बन्धी बातों में विशेष भाग नहीं ले सकती हैं, और यह सब बातें प्रजातन्त्र के लिये हानिकारक हैं।

४. गाँववालों की स्थितिः—शहर वालों की अपेक्षा गांव वालों की स्थिति बहुत गिरी हुई है उनमें अज्ञानता और मूर्खता अधिक मात्रा में है। इसी प्रकार सीमा पर जो पहाड़ी इलाके हैं वहाँ के लोग भी सभ्यता और संस्कृति में दूसरे लोगों से बहुत पीछे हैं।

५. आर्थिक असमानता:—हमारे देश में भूख, बेकारी और निर्धनता अधिक मात्रा में है और इस गिरी हुई स्थिति में वास्तविक प्रजातन्त्रा को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

६. भाषा सम्बन्ध भेद भाव:—हमारा देश बहुत बड़ा है और भिन्न भिन्न स्थान पर भिन्न २ प्ररकार की भाषाएँ बोली जाती हैं जिससे परस्पर का सहयोग बहुत कम होता है। भाषा के आधार पर मेल जोल प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के विरुद्ध है। प्रजातन्त्र का आधार स्वतन्त्रता, न्याय, समानता, भाईचारा तथा सहन शक्ति के आधार पर है, जिनके द्वारा प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ होती है। भाषा के आधार पर मेल-जोल यह सिद्ध करता है कि हममें दूसरे समूह जिनकी कि भाषा भिन्न हैं (उंचे मेल जोल और परस्पर के सहयोग की सहनशक्ति नहीं है और इस प्रकार यह वास्तविक प्रजातन्त्रा के महत्व को कम करता है)।

७. लोगों का सन्तुष्ट दृष्टिकोण:—हमारे यहाँ भूख, बेकसी, निर्धन और बिमारी अधिक होते हुये भी लोगों में एक प्रकार की शान्ति है, यहाँ तक कि हमको इस गिरी हुई स्थिति का ज्ञान तक नहीं है और वह इसको सुधारने का प्रयत्न करने तक को तैयार नहीं हैं और यह दृष्टिकोण प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के विरुद्ध में हैं क्योंकि प्रजातन्त्रा की सफलता लोगों पर ही निर्भर है।

(Social harmony) **स्थापित करने का प्रयत्न:**—समाचार पत्र लगातार जाति का खण्डन कर रहे हैं और विधान छूत-छात को बिल्कुल मिटा दिया। औरतों की कानूनी रुकावटें दूर करने के लिये कानून बन रहे हैं। गाँव की स्थिति सुधारने के लिये लगातार प्रयत्न हो रहे हैं। सामाजिक शिक्षा के द्वारा उनकी अज्ञानता दूर करने का प्रयत्न किया जा रहा है और समाज के प्रति उनके कर्तव्य और अधिकारों का ध्यान दिलवाया जा रहा है। जमींदारी और जागीरदारी की प्रथा का अन्त करके किसान को ही जमीन का मालिक बना दिया। जिससे

की उसकी रुचि अधिक हो और वह पृथ्वी माता से ज्यादा अन्न पैदा करे और अपनी निर्धनता को मिटाये। आर्थिक स्थिति सुधारने के लिये नयी २ योजनायें तैयार हो रही हैं, जिससे की देश की पैदावार अधिक होगी। भाषा के आधार पर प्रान्तों के बटवारे के विरोध में प्रचार हो रहा है और इस प्रकार इस भावना को जो कि देश के लिये हानिकारक है मिटाया जा रहा है।

कानूनी स्थिती और वास्तविकता:—इसमें सन्देह नहीं कि हमारी समाज में अधिक भेद भाव है और वह प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के विरोध में है, परन्तु हमने प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ डाली है और इतने कम समय में काफी सफलता प्राप्त करली है। कभी २ जाति-पांति की झलक समाजिक और राजनैतिक कार्यों में दिखाई पड़ती है औरतें अभी तक समाजिक, राजनैतिक और संस्कृति सम्बन्धी बातों में इतना अधिक भाग नहीं ले रहीं हैं जितना की उनको लेना चाहिये। छूत-छात की भावना हमारे हृदयों से अभी नहीं मिटी ये सब बातें हमको चेतावनी दे रही हैं कि कई शताब्दियों से आई हुई बुराइयां इतनी जल्दी कानून के द्वारा दूर नहीं हो सकती हैं और इसी कारण वर्तमान कानूनी स्थिति और वास्तविकता में अधिक अन्तर है। हमारी सफलता इसी पर है कि हम कम से कम समय में एक ऐसी समाज बिना जाति और बिना वर्ग की स्थापित करें जो कि सामाजिक न्याय और समानता पर निर्भर हो। इसके लिये शिक्षा के प्रचार की आवश्यकता है और इसमें समय लगेगा। यह जल्दी भी हो सकती है यदि हमारे आचार्य लोग सिलेबस और परीक्षा पर इतना जोर न दें और विद्यार्थियों के चरित्र सुधारने और उनमें अच्छी भावना लाने का प्रयत्न करें। हमारे नेता लोग इन बातों पर काफी जोर दे रहे हैं।

जवाहरलाल नेहरू का (Social harmony) स्थापित करने पर जोर

३१ दिसम्बर कौम के नाम संदेशाः—भारत में सबसे पहली जरूरत देश की एकता को स्थापित रखना है। यह एकता सिर्फ राजनीतिक ही नहीं होनी चाहिये, परन्तु हृदय मस्तिष्क की भी ऐसी एकता होनी चाहिये जो अनेकता पैदा करने वाली संकीर्ण प्रेरणाओं को और धर्म के नाम पर खड़ी होने वाली दीवारों को या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच की दीवारों को या किसी भी प्रकार की बाँटने वाली दीवारों को ढहादे। हमारी अर्थ व्यवस्था और हमारा सामाजिक ढाँचा अपने दिन गुजार चुका है और यह अधिक आवश्यक है कि हम इसको फिर से ऐसा रूप दें जिससे कि हमारे देश की जनता के जीवन में भौतिक और आत्मिक प्रसन्नता बढ़े। हमको समझ बूझ कर एक ऐसे समाज–दर्शन की प्राप्ति का लक्ष बनाना है जिसके द्वारा वर्तमान सामाजिक ढाँचे में बुनियादी परिवर्तन किया जा सके; एक ऐसा समाज जिसमें नीजि लाभ और लालच का बोलबाला न हो और जिसमें राजनैतिक तथा आर्थिक शक्ति विकेन्द्रित हो। हमें एक ऐसे वर्ग हीन समाज का लक्ष्य अपने सामने रखना है जिसका आधार सहकारी प्रयत्न हो और जिसमें सबके लिये समान अवसर हों। ऐसे समाज के निर्माण के लिये हमको लोकतन्त्र के ढंग पर शान्तिपूर्ण तरीकों को अपनाना होगा।

स्वतन्त्र भारत की नींवः—विज्ञान और इतिहास की कसौटी में सफलता प्राप्त किये हुए सिद्धान्त के आधार पर हमने नये भारत की नींव प्रजातन्त्र के आधार पर डाली है। हमारे राज्य का ध्येय वैलफेयर स्टेट स्थापित करना है जिसमें सब लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ती हो जाये और जिसमें निर्धनता भूख और बेकारी जो कि प्रजातन्त्र और हर एक की सफलता में बाधा डालती है उनका अन्त हो जाये।

विज्ञान की उन्नति कराकर हम पैदावार अधिक कराने का प्रयत्न कर रहे हैं इसमें काफी सफलता प्राप्त हो गई है। परन्तु साधारण

मनुष्य का दृष्टिकोण छोटा होने के कारण उसको इसका कुछ पता ही नहीं है, जिस प्रकार कि फुटबाल मैच में वो खिलाड़ी जो कि स्वयं उस खेल में भाग ले रहे हैं वे उस खेल का इतना लुत्फ या मजा नहीं उठा रहे हैं जितना कि उस खेल के तमाशबीन उस खेल से आनन्द ले रहे हैं और उनको खेल की विशेषता का पूरा पूरा ज्ञान होता है। इसी प्रकार हमारे राज्य के नागरिकों को अपने राज्य की तेजी से उन्नति का ज्ञान तक नहीं है, परन्तु विदेशी लोग जो कि हमारे देश में आते हैं उनको इस उन्नति से बहुत आश्चर्य होता है और वे हमारे देश की उन्नति की विदेशी समाचार पत्रों में बहुत प्रशंसा कर रहे हैं। इंगलैण्ड के प्रसिद्ध समाचार पत्र मेन्चैस्टर-गार्डियन के संवाददाता ने तीस मई १९५४ के पत्र में हिन्दुस्तान की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि यह दिन हिन्दुस्तान के इतिहास में सुनहरी शब्दों में लिखा जायगा। क्योंकि इस दिन से बम्बई नगर में जिसमें कि पैंतीस लाख आदमी रहते हैं वहां पर राशनिंग को खतम कर देना हिन्दुस्तान की सरकार का एक बहुत ही महत्वपूर्ण और सबसे अधिक रचनात्मक कार्य है। १९४२ के बाद यही पहला दिन है जब कि हिन्दुस्तान की पैदावार इतनी अधिक हो गई है कि वह अपनी आवश्यकताएँ खुद पूरी कर सकता है। जब कि तीन साल पहले हिन्दुस्तान के बहुत बड़े हिस्से पर राशनिंग प्रचलित था, अब मालाबार के छोटे से इलाके को छोड़कर बाकी भागों में अनाज पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं है। पांच वर्षीय योजना की सफलता का सबसे बड़ा सबूत यही है कि उससे इतने कम समय में इतनी अधिक पैदावार कर ली।

The week-end will go down in Indian History as the best administrative achievement of the government of India because of the announcement that food rationing is to end in Bombay. The end of rationing for Bombay's 3,500,000 people is a measure of India's new self-sufficiency in food. New India has enough food for the first time since 1942, and while only three years ago, there

were perhaps 128 million people under statutory rationing from tomorrow their number will be restricted to the district of Malabar alone. This is the positive proof of the Success of India's Five Year Plan [Manchester Guardian]

George Allen जो कि हिन्दुस्तान में अमेरिका के राजदूत हैं उन्होंने गाँव वालों की स्थिती का वर्णन करते हुए कहा था कि वर्तमान समय में गाँव वाले अपने गांव में जो अपनी स्थिति सुधारने का प्रयत्न कर रहे हैं उसका उदाहरण हिन्दुस्तान के पांच सौ वर्ष पुराने इतिहास तक में नहीं मिलता, उनको विश्वास हो गया है कि हिन्दुस्तान उनका ही है वह अंग्रेजों का या किसी राजा महाराजा या किसी जागीरदार या जमीदार का नहीं है। गांव के मालिक गाँव के लोग ही हैं। गाँव की उन्नति गाँव के लोगों पर ही निर्भर है और वह लोग अपने प्रयत्न से उसको सुधार सकते हैं और इस प्रकार उनमें सुधार की एक लगन लगी हुई है। इन सब बातों से सिद्ध हो जाता है कि हमारे यहाँ प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ता से स्थापित हुई है। कठिनाईयां अवश्य हैं परन्तु हम को प्रजातन्त्र पर भरोसा है और दुनियां भरोसे पर ही चलती है।

Referring to the changes that are taking place in India, the American Ambassador, George Allen Said "Something that is happening in the villages in this country could not be noticed during the past 500 years. It is the idea of the people to improve themselves. It is thrilling to see the people beginning to do something which they had not done before. The peopl϶ of India are feeling that India is their own country and it no longer belonged to the British, or the Maharajah's or the Zaminders or the Jagirdars and it is they who can cange her in any way they like. It is this impression that thrilled me most during my last 12 months stay in this country."

जनतन्त्र और निरंकुश शासन में अन्तर

१. मनमानी करने का पूरा अधिकारः—निरंकुश शासन में राजा पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं होता है उसको मनमानी कार्य

करने से कोई व्यक्ति रोक नहीं सकता। इसमें शक नहीं कि वह लोगों के रीति रिवाज के विरुद्ध जाय तथा प्रबन्ध खराब हो जाने पर उसको विद्रोह होने का भय रहता है जो कि उसको अच्छा शासन करने पर मजबूर करता है। परन्तु इस शासन में व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करने के लिये कोई प्रबन्ध नहीं होता है। पर इस प्रकार निरंकुश शासन में व्यक्ति को अपने भविष्य का भरोसा नहीं रहता और इस कारण वह अपनी अच्छाइयों का विकास करने में असफल रहता है।

२. कानून राजा पर निर्भर रहता है:—निरंकुश शासन की मुख्य खराबी यह है कि इसमें कानून की नींव दृढ़ नहीं रहती। कानून राजा पर निर्भर रहता है। राजा ही कानून बनाता है और राजा ही उसको रद्द कर सकता है। यदि राजा योग्य है तो वह अपने बनाये हुये कानून के विरुद्ध कार्य करने से हिचकचाता है। परन्तु अयोग्य राजा के होने पर मनमानी कार्यवाही होने लगती है और फिर राज्य की उन्नति रुक जाती है।

३. लोगों के चरित्र का विकास नहीं होना:—निरंकुश शासन में यदि अकबर व अशोक जैसा योग्य राजा है तो वह अवश्य अच्छा प्रबन्ध करता है परन्तु इसमें अच्छा प्रबन्ध राजा द्वारा ऊपर से लागू किया जाता है और लोगों का परस्पर सहयोग प्राप्त करने का कोई प्रबन्ध नहीं होता जिसका परिणाम यह होता है कि लोगों के चरित्र का विकास नहीं होने पाता।

४. पुत्र के अयोग्य होने पर उन्नतियाँ रुक जाती है:—चौथे राजा की मृत्यु के बाद उसका उत्तराधिकारी ही गद्दी पर बैठता है और यदि वह अयोग्य पुरुष हुआ तो वह बाप के अच्छे कार्यों का अन्त कर देता है और इस प्रकार निरंकुश शासन में उन्नति का सिलसिला लगातार जारी नहीं रहता।

प्रजातन्त्र

विधान का महत्व:—प्रजातन्त्र समाज को उन्नति के मैदान में एक कदम आगे ले जाता है। विधान के द्वारा प्रजातन्त्र में सरकार के हाथ पैर बंध जाते हैं और निरंकुश शासन की तरह मनमानी कार्यवाही नहीं हो सकती।

कानून की नींव दृढ़ होना:—दूसरे प्रजातन्त्र कानूनी राज्य होता है उसमें लोगों के मूल सिद्धान्त का वर्णन होता है और इसमें कानून प्रजा और सरकार दोनों को ही बराबर की हैसियत से लागू होता है। यदि सरकार कानून के विरुद्ध कोई कार्य करे तो उसको न्यायालय द्वारा रोका जा सकता है।

चरित्र का विकास:—प्रजातन्त्र का ध्येय लोगों का परस्पर का सहयोग प्राप्त करना है। इसमें लोगों पर ऊपर से कोई बात लागू नहीं की जा सकती। इसमें अधिकारों का विभाजन होता है और हर स्थान पर लोगों के सहयोग प्राप्त करने का पूरा पूरा प्रयत्न किया जाता है। लोगों के सहयोग द्वारा देर अवश्य लगती है, परन्तु ठोस सुधार की नींव डल जाती है और इससे लोगों का चरित्र सुधरता है। यह बात निरंकुश शासन में प्राप्त नहीं हो सकती।

चुनाव द्वारा नेता चुनना:—जब कि योग्य पुरुष की मृत्यु हो जाती है तो जनता उसकी जगह दूसरा पुरुष चुन लेती हैं और इस प्रकार राज्य प्रबन्ध खराब होने की सम्भावना कम रहती है। उन्नति का सिल सिला लगातार जारी रहता है। निरंकुश शासन में यह बात नहीं होती है क्योंकि राजा की मृत्यु पर उसका बेटा ही गद्दी पर बैठता है और यदि वह अयोग्य पुरुष हुआ तो बाप के कार्यों पर पानी फेर देता है और फिर उन्नति रुक जाती है। इन सब बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि प्रजातन्त्र हर दृष्टिकोण से निरंकुश शासन से अधिक विशेष हैं।

योग्य मतदाता और अयोग्य मतदाता का प्रजातन्त्र में भेदभाव

Difference between Educated and Uneducated Democracy

१. अयोग्य प्रतिनिधियों का चुनना:—प्रजातन्त्र सब प्रकार की सरकारों में सबसे अधिक श्रेष्ठ है, परन्तु ऐसा प्रजातन्त्र जिसमें की मतदाता मूर्ख और अज्ञानी हों, वह अवश्य सबसे खराब सरकार सिद्ध हुई है। प्रजातन्त्र की सफलता लोगों पर निर्भर है। इसमें लोग ही अपने मत के द्वारा अपने प्रतिनिधि चुन कर व्यवस्थापिकासभा में भेजते हैं यदि लोग मूर्ख और अज्ञान हैं तो वह अपने उत्तरदायित्व को नहीं समझ पाते हैं और उनमें अच्छे बुरे का ज्ञान न होने के कारण वह लोगों के भड़काये में आकर स्वार्थी लोगों को अपना प्रतिनिधि चुनते हैं, जो कि बाहर कुछ और अन्दर कुछ, और होते हैं। ऐसे लोग खराब राज्य प्रबन्ध करते हैं।

२. राजनैतिक जागृति की कमी:—प्रजातन्त्र में मत देने पर ही व्यक्ति के उत्तरदायित्व का अन्त नहीं हो जाता बल्कि उसको लगातार अपने प्रतिनिधि के कार्यों में दिलचस्पी लेनी चाहिये। यदि वह खराब कार्य कर रहे हैं तो सभायें एकत्रित करके उन बातों का खण्डन करना चाहिये और प्रस्ताव स्वीकार करा कर उन प्रस्तावों को समाचार पत्रों में भेजना चाहिये जिससे प्रतिनिधि चौकन्ने हो जायें और फिर वह हानिकारक कार्य करने से हिचकिचायेंगे। इसी प्रकार से अच्छे कार्यों में उनके हाथ मजबूत करने चाहिये, परन्तु जहाँ पर मतदाता अनपढ़ होते हैं और उनको ज्ञान नहीं होता है, वहाँ पर वह लोग अपने प्रतिनिधि के कार्यों में कोई भाग नहीं लेते और फिर वहाँ पर स्वेच्छाचारी राज्य होने लगता है।

३. Eternal vigilance is the price of liberty:—तीसरे व्यक्ति को अपने अधिकारों की चौकसी करनी चाहिये, और उनको सुरक्षित

रखने के लिये प्रबन्ध करना चाहिये यदि वह ऐसा नहीं करता है तो वह अपने अधिकार खो बैठता है। इन सब बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि मतदाताओं के ज्ञान और योग्यता पर ही प्रजातन्त्र की सफलता निर्भर है। शिक्षा, ज्ञान, उत्तरदायित्व यह सब बातें प्रजातन्त्र की सफलता के लिये आवश्यक हैं।

४. प्रजातन्त्र की सफलता के लिये गुणों का होना आवश्यकः—प्रजातन्त्र लोगों को स्वतन्त्रता और समानता देता है परन्तु साथ साथ उनसे यह भी आशा करता है कि वह लोग इसके बदले में ईमानदारी, समाज सेवा और परस्पर के सहयोग द्वारा कार्य करेंगे। यदि उनमें ज्ञान नहीं है, अपने स्वार्थ को आगे रखते हैं और देश के लाभ को भूल जाते हैं तो ऐसी स्थिति में प्रजातन्त्र के असफल होने की बहुत सम्भावना है क्योंकि प्रजातन्त्र इस दृष्टिकोण से बहुत ही कठिन सरकार का रूप है जिसमें कि अधिक से अधिक मात्रा में लोगों में होशियारी, फुर्ती, ईमानदारी, समाज सेवा और उन सब बातों की जिनसे कि समाज में एकता उत्पन्न हो, आवश्यकता है।

Democracy is the most difficult of all forms of governments as it makes heaviest demands on the intelligence, alertness, discernment, integrity and public spirit of the average man and woman and on the forces which make for solidarity and steadiness in society. While democracy gives much, it also demands much from the people.

Democracy gives to the people liberty and equality and enables the people to actively participate in the affairs of the government, but it expects from citizens integrity, self-sacrifice, public spirit and readiness to fall in with the view of others [Beni Prashad].

जनतन्त्र, स्वयं एक बड़ी शिक्षा हैः—हमने पहले लिखा है कि जनता में अपने अधिकारों की रक्षा करने की भावना हो और उनमें

राजनैतिक जागृति हो तो वह प्रतिनिधियों को स्वेच्छाचारी बनने से रोकते हैं। परन्तु यदि प्रजा में यह जागृति नहीं है तो प्रतिनिधि लोगों के लाभ को कुचल कर अपने एक समूह के लाभ के लिये प्रबन्ध करने लगते हैं। और फिर राज्य का प्रबन्ध खराब हो जाता है। इस कारण लोगों का विचार है कि जब तक राजनैतिक जागृति लोगों में उत्पन्न नहीं हो तब तक जनतन्त्र राज्य असफल रहता है परन्तु यह गलत विचार है। जिस प्रकार से कि एक मनुष्य यदि वह तैरना सीखना चाहता है तो उसको कुछ ज्ञान प्राप्त करके पानी में कूद जाना चाहिये, जब कि वह पानी में हाथ पैर मारेगा तो उसका भय निकल जायेगा और उसको फिर तैरना अपने आप आ जावेगा। यदि वह तालाब के किनारे पाठ ही लिया करेगा और वह पानी में नहीं कूदेगा तो वह तमाम जीवन पाठ लेने में ही बिता दे उसको तैरना कभी नहीं आयेगा। इसी प्रकार जनतन्त्र स्वयं बड़ी शिक्षा है। वह खुद लोगों को पाठ सिखाती है। प्रारम्भ में अवश्य कुछ प्रबन्ध खराब होता है परन्तु धीरे धीरे उनमें अपने आप ही विकास होने लगता है। ज्ञान प्राप्त होता है, अनुभव होता है, जिम्मेदारी आने लगती है और फिर सरकार अपने आप सुधरने लगती है। (Nehru Report By Motilal Nehru)

प्रजातन्त्र के लाभ

१. प्रजातन्त्र द्वारा सहयोग और चरित्र का विकास:-

प्रजातन्त्र एक प्रकार की पाठशाला होती है जिसमें कि व्यक्ति भिन्न २ प्रकार की बातें सीखता है। इसमें सन्देह नहीं कि व्यक्तिगत राज्य या तानाशाही राज्य में भी अच्छी सरकार स्थापित हो सकती है, परन्तु इस प्रकार की सरकार में व्यक्ति का चरित्र नहीं सुधर सकता क्योंकि उसको सहयोग का कोई अवसर नहीं मिलता है और सब कार्य उस पर ऊपर से लागू किये जाते हैं। इससे उसका चरित्र नहीं सुधर सकता और वही सरकार अच्छी कहलाती है जो कि व्यक्ति को अच्छा नागरिक बनाये और उसके चरित्र में अच्छे गुण उत्पन्न करे। इस दृष्टिकोण से

यदि देखा जाय तो प्रजातन्त्र सब राज्यों से बढ़ चढ़ कर है। वह अधिकारों का बंटवारा करके, प्रत्येक व्यक्ति को राज्य में भाग लेने का अवसर प्रदान करता है। इससे इसमें 'उत्तरदायित्व' उत्पन्न होता है। अच्छी व बुरी सरकार उसी पर निर्भर होती है और इस प्रकार उसके चरित्र के विकास का पूरा पूरा अवसर मिलता है।

२. नैतिक उत्तरदायित्व की उत्पत्तिः—प्रजातन्त्र में नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न होता है। स्वावलम्बन, नई योजना का निर्माण करना, उत्तदायित्व और अपने कार्यों पर स्वयं अंकुश लगाना यह सब गुण प्रजातन्त्र द्वारा लोगों से उत्पन्न होते हैं और इससे देश का चरित्र सुधरता है जिससे उन्नति तीव्रता से होती है।

३. जनता में राजनीति का प्रचारः—प्रजातन्त्र हर समय पर और विशेषतः चुनाव के समय पर व्यक्तियों को राजनैतिक विषय समझने का पूरा पूरा अवसर प्रदान करता है। चुनाव के समय पर तमाम राजनैतिक दल अपने अपने दल की नीति और कार्यक्रम लोगों के सामने रखते हैं, सभाएँ एकत्रित करते हैं, समाचार पत्रों में प्रचार करते हैं, भाषण देते हैं और इस प्रकार से लोगों में राजनैतिक जाग्रति उत्पन्न करते हैं और जनता को राजनैतिक मामलों में निपुण कर देते हैं।

४. प्रजातन्त्र द्वारा जनता का राजनीति में प्रवेशः—प्रजातन्त्र, इस बात को स्वीकार नहीं करता है कि सरकार एक प्रकार की कला है और वही लोग अच्छी तरह से राज्य प्रबन्ध कर सकते हैं जो कि इस कला में निपुण हों। बल्कि वह हर एक व्यक्ति को राज्य में भाग लेने का अवसर देती है। इस प्रकार प्रजातन्त्र में निपुण और साधारण लोग दोनों का मिला जुला राज्य होता है। निपुण लोग उसमें अच्छाईयाँ उत्पन्न करते हैं और साधारण व्यक्ति उसमें जनता के दृष्टिकोण को अपने सामने रखता है और इस प्रकार वह एक तरह से दूसरी सरकार से बढ़ चढ़ कर हैं।

५. देश प्रेम की उत्पत्तिः—प्रजातन्त्र, लोगों में देश-प्रेम की भावना उत्पन्न करता है क्योंकि उसमें छोटे से छोटे व्यक्ति को भी मत देने का अधिकार होता है जिससे उसको राजनीतिक मामलों में रुची उत्पन्न होती है और फिर वह अपने को राज्य का एक अंग समझने लगता है।

६. क्रान्ति का भय कमः—देश-प्रेम उत्पन्न हो जाने से प्रजातन्त्र में क्रान्ति का भय कम हो जाता है। यदि वर्तमान सरकार अच्छी तरह से कार्य नहीं कर रही है तो व्यक्ति को अधिकार है कि नये चुनाव पर उस दल को मत न देकर उसे पद से हटा दे और नई प्रकार की सरकार स्थापित करे जो कि जनता के लाभ का कार्य करे, और इस प्रकार क्रान्ति की सम्भावना कम हो जाती हैं।

७. प्रजातन्त्र शक्ति अथवा दबाव पर निर्भर नहींः—प्रजातन्त्र के अतिरिक्त प्रत्येक सरकार कम या अधिक सीमा तक शक्ति और दबाव पर निर्भर करती हैं, परन्तु प्रजातन्त्र में यह बात लागू नहीं है। प्रजातन्त्र में लोगों को भाषण देने, सभाएं एकत्रित करने और मिल जुल कर कार्य करने की पूरी पूरी स्वतन्त्रता होती है। प्रजातन्त्र लोगों का सहयोग प्राप्त करने की पूरी पूरी कोशिश करता है। प्रजातन्त्र का ध्येय समझौता स्थापित करना है। वह बात चीत और विचारों के परिवर्तन के द्वारा लोगों को पक्ष में करके, तब कार्य को प्रारम्भ करता है और इस प्रकार से उन पर किसी दबाव या शक्ति के द्वारा कार्य नहीं होता।

८. शान्ति और उन्नति साथ साथः—प्रजातन्त्र ही एक ऐसी सरकार है जिसमें शान्ति और उन्नति दोनों साथ साथ चलती है। तानाशाही सरकार में ठोस उन्नति नहीं होती क्योंकि वहाँ कार्य दबाव और शक्ति के कारण होता है। प्रजातन्त्र में देश में उन्नति कराने में समय जरूर लगता है परन्तु यह उन्नति ठोस होती है क्योंकि इसमें लोगों का सहयोग होता है।

६. **सामाजिक अशान्ति का भय न रहना**:—प्रजातन्त्र सरकार पर निर्भर है और इस कारण सामाजिक असमानता इसमें नहीं होती जिसके कारण सामाजिक अशान्ति उत्पन्न नहीं होती जो कि दूसरी सरकारों में क्रान्ति उत्पन्न करती हैं।

प्रजातन्त्र के दोष

१. **संख्या पर महत्व, योग्यता पर नहीं**:—सबसे पहला दोष प्रजातन्त्र में यह है कि इसमें संख्या पर महत्त्व दिया जाता है, योग्यता पर नहीं। मत गिने जाते हैं परन्तु उनकी योग्यता का अन्दाजा नहीं किया जाता। अच्छी शिक्षा, वैज्ञानिक रूप से एक विषय पर निर्णय करना और राज्य प्रबन्ध में निपुण होना इन सब बातों पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। इसमें बहुमत दल सर्वे सर्वा होता है, चाहे अल्प संख्या वाले दल से उसका अन्तर बहुत कम क्यों न हों। अल्प संख्या के दल में योग्य पुरुष क्यों न हो परन्तु उनकी योग्यता पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है।

२. **चुनाव, सच्चा नहीं होता**:—दूसरा दोष इसमें यह होता है कि इसमें वास्तव में योग्य और ईमानदार पुरुष चुनाव में सफल नहीं होते हैं क्योंकि वह अपनी ईमानदारी के कारण अपने उच्चकोटि के सिद्धान्तों के द्वारा जनता को अपने पक्ष में करने के लिये बलिदान कर देने के लिये तैयार नहीं होते। और साधारण व्यक्ति जिनका कि कोई विशेष सिद्धान्त नहीं होता है और जनता ही के अनुसार चलने को तैयार रहते हैं और हर बात पर समझौता करने को तैयार हो जाते हैं ऐसे लोग जनता में बहुत प्रसिद्ध हो जाते हैं और इन्हें ही जनता चुनाव में चुनती है।

३. **साधारण मत-दाताओं का राजनीति में कम दिलचस्पी**:—साधारण मत-दाता राज्य के मामलों में कोई दिलचस्पी नहीं लेते और कई विषयों पर तो उनका कोई विचार ही नहीं होता चुनाव

के समय वह मत देने के पक्ष में भी नहीं होते हैं और उनको दबाव डाल कर मत डालने को बुलवाया जाता है। परिणाम यह होता है कि शक्ति कुछ ऐसे व्यक्तियों के हाथ में आ जाती है जिनका कोई सिद्धान्त नहीं होता है और वह लोगों की अज्ञानता का लाभ उठा कर, स्वेच्छाचारी राज्य करने लगते हैं।

४. अयोग्य लोगों का खेलः—प्रजातन्त्र, एक प्रकार से अयोग्य लोगों का खेल बन जाता है। सदस्य जो चुने जाते हैं राज्य प्रबन्ध में वह कोई विशेष योग्यता नहीं रखते। वे केवल लोगों को झूठे वायदे से अपने पक्ष में कर लेते हैं और फिर वह प्रतिनिधि चुन लिये जाते हैं। साधारण व्यक्ति को कुछ ज्ञान नहीं होता, न उसके कोई सिद्धान्त ही होते हैं। किसी समय तो वह एक व्यक्ति को आकाश पर चढ़ा देते हैं और दूसरे समय उसी व्यक्ति के विरुद्ध प्रचार करने लगते हैं। साधारण जनता का दृष्टिकोण बहुत सीमित होता है और वह भविष्य में होने वाली बातों का पता नहीं लगा सकता। इस कारण उन पर सरकार का भार छोड़ देना, जैसा कि प्रजातन्त्र में होता है, कुछ व्यक्तियों के मत के अनुसार उचित नहीं है।

५. प्रजातन्त्र में दलबन्दी से हानियाँः—प्रजातन्त्र की सफलता के लिये दलबन्दी आवश्यक है परन्तु जिस प्रकार से कि दलबन्दी की प्रथा प्रजातन्त्र में प्रचलित है उससे हानि अधिक है और लाभ कम। इससे बगुलाभगत पन (hollowness) और अविश्वाश उत्पन्न होता है। यह राष्ट्र में भेद-भाव उत्पन्न करती है और नैतिक स्तर को गिरती है। इसके विरोधी यह भी कहते हैं कि चुनाव के समय अधिक संख्या में मत एकत्रित करने के लिये जो प्रोपेगन्डा होता है उसमें लोग अपनी नैतिक उत्तरदायित्व को भूल जाते हैं। मतदात को एक मत डालने के लिये दो या दो से अधिक सदस्यों में से एक ही व्यक्ति चुनना होता है जो सब एक जैसे अज्ञानी होते हैं और उनमें से किसी एक को भी वह योग्य नहीं समझता। परन्तु उनको कोई और उपाय नहीं

होता है सिवाय इसके कि उन्हीं में से एक को मत दें। प्रजातन्त्र लोगों के सहयोग पर निर्भर है। परन्तु दलबन्दी के कारण यह सब पाखंड बन जाता है और इसका कुछ महत्व नहीं रहता है।

६. छोटे बड़े का भेद-भाव उत्पन्न कराना:—वह लोग जो प्रतिनिधि बनने के लिये खड़े होते हैं, विशेष रूप में पूंजीपति होते हैं क्योंकि वही चुनाव का खर्चा सहन कर सकते हैं और यही लोग राजनैतिक दलों को आर्थिक सहायता देते हैं। पूंजीपति लोग और उनके सहायक जो कि चुनाव में सफल होते हैं वह जाकर ऐसे कानून बनाते हैं जो कि उनके स्वयं के लाभ के होते हैं और वह लोग जनता का लाभ भूल जाते हैं, इस प्रकार से प्रजातन्त्र में पूंजीपति के समूह का बोलबाला होता है और जनता के लाभ को भुला दिया जाता हैं। संक्षेप में कुछ लोग तो ऊंचे उठे रहते हैं और अन्य का जीवन स्तर उंचा नहीं उठता।

७. धन का अधिक व्यय:—प्रजातन्त्र में बहुत सा रुपया व्यर्थ नष्ट होता है। इस सरकार की बनावट बहुत जटिल होती है और इसमें कई स्थान पर दोहरा प्रबन्ध होता है। जिस प्रकार कि प्रत्येक स्थान पर एक सदन होते हुए भी दूसरे सदन का होना आवश्यक है जिसका अर्थ व्यर्थ का रुपया खर्च करना है। चुनाव, जो कि प्रजातन्त्र में बहुत होते हैं इनमें भी बहुत धन नष्ट होता है। प्रजातन्त्र में काम की गति बहुत धीमी हाती है। जो काम एक आदमी एक दिन में कर सकता है, प्रजातन्त्र में उस काम की पूर्ती में सात दिन लग जाते हैं क्योंकि प्रजातन्त्र समझौते पर निर्भर है। इस प्रकार जहाँ तक रुपये और समय का सम्बन्ध है प्रजातन्त्र में दोनों बहुत नष्ट होते हैं।

८. नैतिक दृष्टिकोण से हानि:—प्रजातन्त्र बजाय सचाई के झूठ और पाखण्ड सिखलाता है। विशेष रूप से चुनाव के समय पर भिन्न भिन्न राजनैतिक दलों के सदस्य एक दूसरे को झूठा बतलाते हैं और उनमें

दोष हों या नहीं परन्तु वे उनमें दोष का प्रचार करते हैं जिससे कि मतदाता उनके पक्ष में वोट न दें। रिश्वत, और भ्रष्टाचार और इस प्रकार की अन्य बुराईयां भी इसमें उत्पन्न होती हैं।

प्रजातन्त्र सरकार की कमजोरियों का मूल्यांकन:—"डनिंग साहब का कथन है कि प्रजातन्त्र ने पुरानी कुछ बुराईयों को तो दूर कर दिया है परन्तु साथ साथ नई बुराईयों के लिये रास्ता खोल दिया है, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उसने पुरानी बुराईयों की अपेक्षा अन्य अधिक बुराईयाँ उत्पन्न कर दी हैं।"

प्रजातन्त्र पर यह विशेष दोष लगाया जाता है कि प्रजातन्त्र निर्धनता और समाजिक अशान्ति अभी तक दूर नहीं कर सकी है, परन्तु संसार की वर्तमान स्थिति में जो अशान्ति है वह प्रजातन्त्र के कारण ही नहीं, इसके कई और कारण भी हैं और मुख्य कारण यह है कि सब संसार में स्थायी स्थिति अभी तक स्थापित नहीं हुई है। इस कारण सरकारों को हर स्थान पर कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है चाहे वह प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों पर हों, या न हों। जहाँ तक कि दूसरे महा युद्ध का सम्बन्ध है इसमें प्रजातन्त्र तानाशाही के विरुद्ध अधिक सफल रही और उसमें तानाशाही को समाप्त करके प्रजातन्त्र सरकार की स्थापना की। तानाशाही सरकार में अधिक उन्नति कम समय में हुई थी, परन्तु वह ठोस नहीं थी और प्रजातन्त्र सरकार का सामना न कर सकी। इससे यह सिद्ध होता है कि प्रजातन्त्र सरकार उन सरकारों से अधिक अच्छी है, और जो कुछ इसमें दोष हैं वह समय के परिवर्तन से दूर हो जायेंगे। मनुष्य का चरित्र सुधरेगा, और प्रजातन्त्र की नींव दृढ़ हो जावेगी।

एकात्मिक और संघात्मिक सरकार

एकात्मिक सरकार की परिभाषा:—एकात्मिक संविधान: हम

पहले यह सिद्ध कर चुके हैं कि भूगोल का राज्य प्रणाली पर अधिक प्रभाव होता है। जो देश छोटे होते हैं तथा जहां की जनता में भाषा धर्म और संस्कृति के कारण भेद भाव नहीं होते हैं वहां पर राज्य प्रबन्ध की सारी जिम्मेदारियां एक केन्द्रीय शासन को सौंप दी जाती हैं। क्योंकि एक व्यक्ति, या व्यक्तियों का समूह एक स्थान से राज्य प्रबन्ध के सारे कार्यों का प्रबन्ध नहीं कर सकता है। इस कारण केन्द्रीय शासन इनमें से कुछ अधिकारों को प्रान्तीय सरकार तथा अन्य स्थाई संस्थाओं को सौंप देता है। यह संस्थायें केन्द्रीय शासन के अधीन होती हैं और केन्द्रीय सरकार इन दिये हुये अधिकारों को वापिस ले सकती है। इस प्रकार की राज्य प्रणाली को एकात्मिक संविधान कहते हैं। इंगलैन्ड और फ्रांस में एकात्मिक संविधान है। यहां पर केन्द्र में एक केन्द्रीय सरकार, एक केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और एक केन्द्रीय संसद और एक केन्द्रीय न्यायालय को अधिकार प्राप्त होते हैं और इन्हीं की आधिनता में दूसरे कर्मचारी अपना २ कार्य करते हैं।

संघात्मिक सरकारः—वह देश जो कि क्षेत्रफल व संख्या में अधिक हैं तथा जहां पर लोगों में धर्म, भाषा तथा संस्कृति में अधिक भेद भाव हैं। ऐसे देशों में जनता देश की रक्षा के कारण एकत्रित होकर रहना तो चाहती हैं, परन्तु साथ साथ ये भी चाहती हैं कि उनकी भाषा तथा संस्कृति पर किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं हो, और प्रान्त के घरेलू कार्यों में वह स्वतन्त्र रहे। ऐसी स्थिति में राज्य प्रबन्ध एक नई प्रकार की राज्य प्रणाली द्वारा होता है जो कि संघात्मिक संविधान कहलाता है।

संघात्मिक संविधान में देश के राज्य शासन के अधिकार केन्द्र तथा प्रान्तों में विभाजित होते हैं। जिन विभागों का सम्बन्ध सारे देश से होता है वह केन्द्र को सौंप दिये जाते हैं और केन्द्र ही उनका प्रबन्ध करता है जैसे मुद्रा, नोट, बैन्कस, रक्षा, विदेशी नीति, रेल, तार, आवागमन के साधन आदि भागों का सारे देश से सम्बन्ध होता है और

इस कारण इनके प्रबन्ध की ज़िम्मेदारी केन्द्रीय सरकार के कंधों पर होती है। दूसरे विभाग जिसका कि सम्बन्ध प्रान्त से होता है जैसे शिक्षा, पुलिस, शिल्प कला, व्यापार, जन सेवा, स्थाई संस्थाओं का प्रबन्ध ये सब प्रान्तों को सौंप दिया जाता है। इन सबका प्रबन्ध प्रान्तीय सरकार करती है और केन्द्रिय सरकार इनके प्रबन्ध में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करती हैं। यह बटवारा विधान द्वारा होता है। केन्द्रीय और प्रान्तों से सम्बन्ध रखने वाले विभागों का वर्णन विधान में होता है। केन्द्रिय और प्रान्तों की सरकार इन्हीं विभागों का प्रबन्ध करती हैं। लिखी हुई बातों के कई अर्थ निकल सकते हैं और यदि केन्द्रीय सरकार विधान में लिखी हुई किसी धारा का अर्थ फैला करके प्रान्त के अधिकार पर हस्तक्षेप करना चाहे तो ऐसी स्थिति में बिना पक्षपात के निश्चिय करने के लिये हर एक संघात्मिक संविधान में एक उच्चतम न्यायालय होती है जो कि इस बात का निश्चय करती है कि विधान की धारा का असली अर्थ क्या है और वह विभाग जिसके सम्बन्ध में भेद भाव है, उसका प्रबन्ध किसको सौंपा जाय। उच्चतम न्यायालय का न्याय केन्द्रीय सरकार तथा प्रान्तीय सरकार को पालन करना आवश्यक होता है।

एकात्मिक और संघात्मिक सरकार का तुलनात्मिक अध्ययन

भूगोलिक स्थिति का प्रभावः—यह दोनों प्रजातन्त्र की रूप रेखा हैं और भूगोलिक स्थिति पर यह निर्भर हैं। यदि राज्य का क्षेत्रफल अधिक नहीं है और उसमें धर्म, रहन सहन और संस्कृति के कारण अधिक भेद भाव नहीं है; तो ऐसी स्थिति में सरकार की राज्य प्रणाली एकात्मिक सरकार के सिद्धान्त पर होती है। यदि राज्य का क्षेत्र अधिक है और वहाँ पर धर्म, रीति रिवाज, भाषा और संस्कृति के कारण लोगों में अधिक भेद भाव हैं और वह एक राज्य में रहते हुए शासन

प्रणाली की एकता नहीं चाहते, बल्कि अपने घरेलू सम्बन्धी बातों में स्वतन्त्र रहना चाहते हैं तो ऐसी स्थिति में सरकार की राज्य प्रणाली संघात्मिक सरकार के सिद्धान्त पर निर्भर होती है।

विधान का महत्वः—एकात्मिक सरकार में लिखित विधान का होना आवश्यक नहीं है। इंगलिस्तान में एकात्मिक सरकार है, और वहां का संविधान अलिखित है, परन्तु संघात्मिक सरकार में लिखित विधान का होना आवश्यक है।

विधान के स्वरूपः—एकात्मिक सरकार का विधान किसी प्रकार का हो, उसका कोई विशेष महत्व नहीं, इंगलैन्ड का विधान लचीला है और उसमें विधान सम्बन्धी परिवर्तन ठीक उसी प्रकार से किये जाते हैं जिस प्रकार से कि कानून बनाया जाता है, परन्तु संघात्मिक सरकार में कठोर विधान (Rigid Constitution) का होना आवश्यक है।

अधिकारों का एकत्रित या विभाजित होना तथा इकाई की स्थितिः—एकात्मिक सरकार में सारे अधिकार केन्द्रीय सरकार को सौंप दिये जाते हैं। जहाँ तक विधान का सम्बन्ध है सब अधिकारों की जिम्मेदारी केन्द्रीय शासन पर ही निर्भर है, परन्तु केन्द्रीय सरकार सब कार्य स्वयं नहीं कर सकती है। इस कारण वह कुछ अधिकार प्रान्तिय सरकार तथा स्थाई संस्थाओं को सौंप देता है। प्रान्त और स्थाई संस्थाओं की अलग विधानिक स्थिति नहीं होती है बल्कि वह पूरे रूप से केन्द्रीय सरकार के आधीन होती है। संघात्मिक सरकार जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है आपस के भेद भाव पर निर्भर होती है। इसमें लोग एक राज्य स्थापित करना स्वीकार कर लेते है, परन्तु वह यह चाहते हैं कि शिक्षा, भाषा, संस्कृति और अन्य दूसरे विषयों में इकाईयों का ही बोलबाला हो और केन्द्रीय सरकार उसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करे। इस कारण संघात्मिक सरकार में प्रबन्ध करने के अधिकार इकाई राज्य तथा केन्द्र में विभाजित होते हैं।

अधिकारों के विभाजन का वर्णन विधान में होता है। कुछ अधिकार विधान द्वारा केन्द्र को सौंप दिये जाते हैं और कुछ अधिकार इकाई राज्यों को सौंप दिये जाते हैं। संघ सरकार और इकाई सरकार कार्य करने में एक दूसरे से स्वतन्त्र होती हैं। दोनों को विधान द्वारा पूरे अधिकार प्राप्त होते हैं और दोनों की समान स्थिति होती है। यह पहले लिखा जा चुका है कि संघात्मिक सरकार के लिये कठोर विधान होना आवश्यक है। इसका अर्थ यह है कि जो अधिकार इकाईयों को प्राप्त हैं, उन अधिकारों को केन्द्रीय सरकार बिना राज्य की स्वीकृति के अपने हाथ में नहीं ले सकती है, इसी कारण संघात्मिक सरकार में लचीला विधान से काम नहीं चल सकता। इसके लिये कम या अधिक मात्रा में कठोर विधान होना आवश्यक है।

सरकार के अंगों का वर्णन:—एकात्मिक सरकार में एक ही व्यवस्थापिकासभा, एक ही प्रबन्ध विभाग और एक ही न्याय विभाग होता है। परन्तु संघ राज्य में इकाईयाँ और केन्द्रीय अपना अलग २ व्यवस्थापिका प्रबन्ध और न्याय विभाग तथा कार्यकारिणीसभा रखते हैं।

उच्चतम न्यायालय का महत्व:—एकात्मिक सरकार में उच्चतम न्यायालय का इतना महत्व नहीं होता है जितना कि संघात्मिक सरकार में जहां पर कि इसका होना अनिवार्य होता है। संघ राज्य में अधिकारों का विभाजन होता है और यदि केन्दीय सरकार या इकाई सरकार विधान में लिखे हुए किसी धारा का अर्थ फैला कर अपना अधिकार अधिक और दूसरे का कम बनाना चाहे तो ऐसी स्थिति में उच्चतम न्यायालय के द्वारा ही ऐसे भेद भाव का निर्णय होता है और उसका निर्णय केन्द्र और इकाई राज्य दोनों को स्वीकार करना होता है।

एकात्मिक सरकार के गुण तथा संघात्मिक सरकार के दोष

१. प्रभावशाली सरकार:—एकात्मिक सरकार प्रभावशाली

सरकार होती है। क्योंकि इसमें सब अधिकार एक ही स्थान पर एकत्रित होते हैं। इस कारण एक सा ही कानून तथा एक सा ही शासन प्रबन्ध सारे राज्य में लागू होता है। केन्द्रीय शासन और इकाई राज्य में किसी प्रकार के भेद भाव होने की सम्भावना नहीं। क्योंकि इकाई, केन्द्र के आधीन होता है। देश में शान्ति स्थापित रखने के लिये या देश की रचा के लिये केन्द्रिय सरकार इकाई राज्यों को वो सारी आज्ञा दे सकती है जिनको कि वो आवश्यक समझें और इन कारणों से एकात्मिक सरकार प्रभावशाली होती है। परन्तु संघ राज्य में इसके विपरीत है। इस राज्य प्रणाली में शासन प्रणाली की एकता नहीं होती। इसमें वांछनीय या आवश्यक विषयों में एकसा कानून और एकसी नीति होती है। परन्तु उन विषयों में जहाँ भिन्न भिन्न आवश्यकतायें होती हैं, वहां पर भिन्नता तथा स्वतन्त्रा प्रधान होती है। इस प्रकार इन अधिकारों के विभाजन के कारण इकाई और केन्द्रिय शासन में भेद भाव हो जाते हैं जिससे राज्य कमजोर हो जाता है और विदेशी आक्रमण के समय पर इस प्रकार की कमजोरी देश के लिये बहुत हानिकारक होती है इस लिये संघात्मिक सरकार अप्रभावशाली सिद्ध हुई है।

राष्ट्रीय भावना का उत्पन्न होनाः—एकात्मिक सरकार में राष्ट्रीय भावना का जन्म होता है। क्योंकि इसमें शासन प्रणाली की एकता होती है जो कि इस भावना को उत्पन्न करने में सहायक होती है परन्तु संघ राज्य में स्थानीय रुचि और राष्ट्रीय रुचि का प्रतिद्वन्द चलता रहता है। एक को दूसरे के लिये अपनी रुचि का त्याग करना पड़ता है। इस प्रकार राष्ट्रीय एकता इसमें पूर्ण रूप से विकास नहीं कर पाती है और यह संघात्मिक सरकार का कमजोर होने का दूसरा कारण है।

व्यय का कम होनाः—एकात्मिक सरकार में एक ही व्यवस्थापिक प्रबंध और न्यायालय सारे राज्य के लिये होती है और इस प्रकार

सरकार का व्यय कम होता है। परन्तू संघात्मिक सरकार में इन दो संस्थाओं के अलग अलग होने के कारण अधिक व्यय बढ़ जाता है।

एकात्मिक सरकार के दोष और संघात्मिक सरकार के गुण

प्रान्तीय प्रेरणा और प्रान्तीय गौरव का अन्तः—एकात्मिक सरकार में सारे कार्य एक नीति के आधार पर केन्द्रीय सरकार द्वारा होते हैं। केन्द्रीय सरकार को प्रान्तों की आवश्यकताओं की जानकारी और ज्ञान न होने के कारण वह इन कार्यों को इतनी उत्तमता और सरलता से नहीं कर सकते हैं जितना कि प्रान्त के लोग इन कार्यों को कर सकते हैं। परन्तु प्रान्तीय सरकार केन्द्रीय सरकार के आधीन होने के कारण अपनी सम्पूर्ण स्वतन्त्रता, और अपने प्रान्तीय गौरव को बिलकुल खो देती हैं जो कि एकात्मिक सरकार का बड़ा दोष है। जब कि संघात्मिक सरकार में अधिकारों का विभाजन होता है, केन्द्रीय सरकार के पास केवल वही अधिकार होते हैं जिनका कि सम्बन्ध सारी ईकाईयों से होता है। प्रान्तों से सम्बन्ध रखने वाले कार्य ईकाईयों के हाथ में होते हैं जिनको कि अपने अनुभव और ज्ञान के अनुसार कार्य करने का पूरा २ अवसर प्राप्त होता है। इस प्रकार प्रान्तीय स्वतन्त्रता के उपभोग से ईकाइयों में प्रान्तीय गौरव और प्रान्तीय हितों में तत्परता बढ़ती है जिससे समस्त प्रान्त के नागरिक अपनी समस्त शान्ति अपने प्रान्त की समस्याओं के हल करने में लगा देते हैं। जिससे कार्य करने के प्रभाव को उत्साह मिलता है।

कार्य में देरीः—एकात्मिक सरकार में, केन्द्रीय सरकार पर अधिक भार होता है जिससे कार्य में देरी होती है परन्तु संघ सरकार अपना भार थोड़ा ईकाई राज्यों के साथ बाँट लेती हैं। इस प्रकार दोनों सहयोग और कुशलता से कार्य कर सकते हैं और कार्य में भी इतनी देरी नहीं होती।

निंकुरंश होने की भावना:—एकात्मिक राज्य में इकाईयों का महत्व कम होता है और सारे कार्य एक ही नीति के आधार पर किये जाते हैं। केन्द्रीय शासन के कर्मचारियों को प्रान्त के कर्मचारियों की दशा का पूरा २ ज्ञान नहीं होता है। वह प्रान्तीय समस्याओं को अपने अनुभव और दृष्टिकोण द्वारा करने का प्रयत्न करते हैं। इस कारण एकात्मिक राज्य को निरंकुश होने की अधिक सम्भावना रहती है। संघ में यह बात नहीं आपाती। वह स्थानीय सरकार और ईकाई राज्य द्वारा लोगों को संचालन की शिक्षा देता हैं। इस प्रकार संक्षेप में यह छोटे २ राज्यों के लिये अत्यन्त लाभदायक हैं।

एकात्मिक राज्य का प्रो० गार्नर का मूल्यांकन:—समालोचना के रूप में एकात्मिक सरकार के लिये यही कहा जा सकता है कि वह प्रान्तीय प्रेरणा को नष्ट कर देती है। जनता के कार्यों में प्रान्तीय जनता को उत्साहित करने की अपेक्षा अनुत्साहित ही करती हैं। प्रान्तीय एकता को नष्ट करती है तथा कर्मचारियों की सरकार जो केन्द्रीय होती है विकसित करती हैं। यह छोटे देश के लिये लाभदायक है जहां एक प्रकार की प्रजा रहती है और विशेषतया उस प्रजा के लिये जिसके विचार स्थानीय स्वराज्य के लिये उन्नतिशील न हो, बड़े क्षेत्र के देश के लिये यह हानिकारक है जिसमें स्थानीय दशा भिन्न २ प्रकार की हों और मनुष्य के विचार आदि भिन्न २ हों। इन मनुष्यों में जो प्रान्तीय स्वतन्त्रता और स्थानीय स्वराज्य के समर्थक हैं, इसका अधिक दिन रहना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव हैं।

ब्राइस के शब्दों में संघात्मिक सरकार की कमजोरियोंका मूल्यांकन

(१) पर-राष्ट्र विषयों में दुर्बलता:—(१) भीतरी विषयों में दुर्बलता अर्थात छोटे २ राज्यों और नागरिकों पर पूर्णतः शान्ति का प्रयोग नहीं हो सकता (२) राज्यों के विद्रोह तथा सम्बन्ध छोड़ देने से

संघ राज्य का अन्त हो जाता है (४) प्रथक प्रथक समुदाय बनने की सम्भावना अर्थात् भिन्न २ इकाई मिलकर अलग समुदाय बना लेना, (५) छोटे राज्यों के कानून व शासन प्रबन्ध में भिन्नता। (६) कठिनाई, व्यर्थ व्यय तथा देरी होना:-दो प्रकार के कानून तथा शासन प्रबन्ध होना ही इसका कारण है, जहां संघात्मिक राज्य होते हैं वहां संघ कानून अलग होते हैं प्रान्तीय कानून अलग। इनके विचार के लिये न्यायालय भी प्रथक प्रथक होते हैं। अतः देरी होना तथा व्यय अधिक होना स्वाभाविक हैं।

पार्लियामेंटरी तथा नौन पार्लियामेंटरी सरकार

पार्लियामेंटरी सरकार उस राज्य प्रणाली का नाम है जिसमें कि निम्नलिखित बातें हो:-

दो सर्वेसर्वा का होना, एक राज्य का दूसरे सरकार का:- राज्य का सर्वेसर्वा या तो एक राजा या राष्ट्रपति होता है। राष्ट्रपति या तो जनता चुनती है या वह संसद द्वारा एक स्थायी समय के लिये चुना जाता है। राजा या राष्ट्रपति को कोई विशेष अधिकार नहीं होते हैं। वह तो एक वैधानिक सर्वेसर्वा होता है। जिसका कि कार्य हस्ताक्षर करना होता है। इसके हस्ताक्षर बिना कोई कानून या हुक्म लागू नहीं हो सकता। परन्तु इस पर किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं होती है। वह राज्य का सर्वेसर्वा होता है, परन्तु सरकार का नहीं। सरकार की जिम्मेदारी प्रधान मन्त्री के हाथ में होती है जो कि सरकार का सर्वेसर्वा होता है।

२. संसद में बहुमत दल का नेता प्रधान मन्त्री के पद पर नियुक्त होना:- इसमें एक संसद होती है, जिसके कि सदस्य जनता द्वारा चुने जाते हैं। जिस दल के सदस्यों का संसद में बहुमत होता हैं उस दल के नेता को राजा या राष्ट्रपति प्रधान मन्त्री

के पद पर नियुक्त करके उसको अपनी इच्छानुसार दूसरे मन्त्री चुनने और सरकार स्थापित करने को कहता है।

३. प्रधान मन्त्री की इच्छा के आधार पर अन्य मन्त्रियों की नियुक्तिः—प्रधान मन्त्री अपने दल में से कुछ व्यक्तियों को मन्त्री के पद पर नियुक्त करने के लिये चुनता है। प्रधान मंत्री की सिफारिश पर राजा या राष्ट्रपति इन व्यक्तियों को मंत्रियों के पद पर नियुक्त करता है। मंत्रियों और प्रधान मंत्री को मिला कर जो सभा बनती है उसका नाम मंत्रीमंडल होता है।

४. मन्त्री मन्डल का संसद के प्रति उत्तरदायी होना

मन्त्री मन्डल कार्यकारिणी सभा का नाम है। देश के राज्य प्रबन्ध और समाज की उन्नति के लिये कानून बनाने की जिम्मेदारी मन्त्री मण्डल के कंधों पर होती है। मन्त्रीमण्डल अपने सब कार्यों के लिये संसद की जिम्मेदार है। जब तक कि संसद मन्त्रीमण्डल के कार्यों का समर्थन करती है तब तक राज्य प्रणाली मन्त्रीमण्डल के हाथ में रहती है। परन्तु जब कि मन्त्री मण्डल और संसद में भेदभाव उत्पन्न हो जाते हैं और यदि संसद मन्त्रीमण्डल की नीती को अस्वीकार करती है या मन्त्रीमण्डल के विरुद्ध प्रस्ताव स्वीकार करके उसकी नीति का खंडन करती है तो ऐसी स्थिति में मन्त्रीमण्डल को पद छोड़ना पड़ता है। और फिर पहले ही के प्रकार से एक नया मन्त्रीमण्डल नियुक्त होता है जिसकी कि नीती संसद के सदस्यों के बहुमत के अनुमार होती है।

५. मन्त्री मण्डल का निश्चित समय न होना:—मन्त्री मण्डल का कोई नियमित समय नहीं होता है। वह जब तक राज्य प्रबन्ध करती है जब तक कि संसद उसकी नीती को स्वीकार करती है और उसके विरुद्ध प्रस्ताव स्वीकार होने पर उसको अपना पद छोड़ना होता है।

६. मन्त्रीमन्डल की एकता और मिलीजुली जिम्मेदारीः— प्रधान मन्त्री सरकार का सर्वेसर्वा होता है। और मन्त्रियों से मिल-जुल कर कार्य करता है। और नीति अस्वीकार होने पर प्रधान मन्त्री और तमाम मन्त्रियों को एक साथ पद छोड़ना पड़ता है। तमाम जिम्मेदारी प्रधान मन्त्री पर होती है और वह ही सरकार का सर्वेसर्वा होता है। राजा या राष्टपति राज्य का सर्वेसर्वा होता है। उसके हस्ताक्षर बिना कोई हुक्म या कानून लागू नहीं हो सकता परन्तु उस पर किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं होती है।

७. मन्त्रीमन्डल का जनमत पर निर्भर रहनाः— हम पहले लिख चुके हैं कि प्रजातन्त्र राज्य वह राज्य है जो कि जनता की सर्वोच्य शक्ति के आधार पर स्थापित होता है। संसद के सदस्य प्रजा द्वारा चुने जाते हैं और जब कि मन्त्री मण्डल ऐसी नीति ग्रहण करता है जोकि जनता के हित की नहीं होती है, तो जनता सभाएं करके तथा पत्रों द्वारा उस नीति का विरोध करती है, और जब मंत्रीमण्डल अपनी नीति में परिवर्तन नहीं लाता है तो जनता का विरोध अधिक हो जाता है और फिर संसद मन्त्रीमन्डल को अपना पद छोड़ने पर विवश करता है। यदि वह ऐसा न करे तो उन सदस्यों की स्थिति कमजोर हो जाती है। नये चुनाव में उनका सदस्य चुना जाना असम्भव हो जाता है। यह भय उनको जनता के अनुसार कार्य करने को विवश करता है और इस प्रकार सारी शक्ति जनता ही के हाथ में होती है।

नौन पार्लियामेंटः— वह सरकार है जिसमें राज्य निम्मलिखित रूप से किया जाय।

१. राज्य तथा सरकार दोनों का सर्वेसर्वा एक व्यक्ति होता हैः- इसका सर्वेसर्वा एक जनता द्वारा चुना हुआ राष्ट्रपति होता है। जो कि नियमित समय के लिये चुना जाता है। यह राज्य का सर्वेसर्वा होता

है और राज्य प्रबन्ध की सारी जिम्मेदारी भी उसके कंधों पर होती है। यह अपनी सहायता के लिये दूसरे व्यक्ति नियुक्त करता है। जो कि सेक्रेट्री कहलाते हैं और ये सेक्रेट्री राष्ट्रपति के आधीन होते हैं। उसकी आज्ञा पालन करना उनके लिये आवश्यक होता है।

२. राष्ट्रपति का संसद का सदस्य न होना:— राष्ट्रपति तथा सेक्रेट्री का संसद से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता है। न उनको संसद के अधिवेशन में सम्मिलित हो कर भाग लेने का अधिकार होता है। यदि संसद राष्ट्रपति की नीति को अस्वीकार करें तब भी संसद राष्ट्रपति को पद छोड़ने के लिये विवश नहीं कर सकती।

३. राष्ट्रपति का संसद पर अंकुश:— संसद के सदस्य जनता द्वारा एक विशेष समय के लिये चुने जाते हैं। इनका ध्येय देश के सुधार के लिये कानून बनाने का है। जब कि एक कानून संसद स्वीकार कर लेती है तो वह राष्ट्रपति के पास भेजती है और जब तक उनको राष्ट्रपति स्वीकार नहीं कर लेवे वह कार्यरूप में लागू नहीं किये जा सकते। यदि राष्ट्रपति किसी कानून को देश के हित का नहीं समझता है तो उसको अस्वीकार करता है। तथा उसको संसद के पास वापिस सोच विचार के लिये भेज दिया जाता है और जो परिवर्तन चाहता है या जिन कारणों से वह उस कानून का विरोध करता है इन सबका वर्णन वह अपने पत्र के द्वारा कर देता है। संसद उस कानून पर फिर सोच विचार करती है और यदि वह उसे $\frac{2}{3}$ बहुमत से स्वीकार कर लेती है तो राष्ट्रपति के लिये ऐसे कानून का स्वीकार करना आवश्यक होता है। इस प्रकार से संसद पर राष्ट्रपति का अंकुश रहता है।

४. कांग्रेस दो सभाओं से मिल कर बनी है:— संसद दो सभाओं से मिल कर बनता है। एक का नाम तो सीनेट है जिसमें कि हर एक रियासत से दो सदस्य भेजे जाते हैं दूसरी सभा का नाम हाउस ओफ रिप्रेजेन्टेटिव है जिसमें कि हर एक रियासत आबादी के अनुसार

सदस्य चुन कर भेजती है। इन दोनों सभाओं का मिला हुआ नाम कांग्रेस है परन्तु यहाँ पर संसद शब्द उनके लिये प्रयोग किया है। असली शब्द कांग्रेस है।

५. सीनेटका राष्ट्रपति पर अंकुशः—राष्ट्रपति को दूसरे देशों से सन्धि करने तथा राज्यदूत इत्यादि इस प्रकार के अन्य कर्मचारी नियुक्त करने का अधिकार होता है। परन्तु उस पर यह अंकुश है कि उसको इन सब कार्यों को सीनेट से स्वीकार कराना होता है। इस प्रकार सीनेट राष्ट्रपति के कार्यों की देख भाल करती है और उसको स्वेच्छा-चारी बनने से रोकती है इस प्रकार की प्रणाली को नौन पार्लियामेन्टरी सरकार कहते हैं।

दोनों सरकारों का तुलनात्मक अध्ययन

१. जनतन्त्र के रूपः—पार्लियामेन्टरी और नौन पार्लियामेन्टरी सरकार का दोनों राज्य प्रणालियां जनतन्त्र के भिन्न रूप हैं।

२. विधान की आवश्यकताः—इन दोनों राज्य प्रणालियों में विधान का होना आवश्यक है जो कि लिखित हो या अलिखित हो।

३. पार्लियामेन्टरी में दो और नौन पार्लियामेन्टरी में एक सर्वेसर्वा होनाः—पार्लियामेन्टरी सरकार में राज्य का सर्वे सर्वा या तो जनता द्वारा चुना हुआ राष्ट्रपति हो तब इस प्रकार की राज्य प्रणाली रिपब्लिक कहलाती है या राजा हो जैसा कि इंगलैण्ड में है जब कि वह वैधानिक राज्य कहलाता है। राष्ट्रपति हो या वैधानिक राजा हो इसमें कोई अन्तर नहीं होता है। क्योंकि वह राज्य का सर्वेसर्वा होता है सरकार का नहीं। सरकार की जिम्मेदारी उस पर बिलकुल नहीं होती है। सरकार का उत्तरदायित्व प्रधानमन्त्री पर होता है जो कि सरकार का सर्वेसर्वा होता है।

नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में जो राज्य का सर्वे सर्वा होता है वह

ही सरकार का सर्वेसर्वा होता है और उसी के कंधों पर सरकार की सारी जिम्मेदारी होती है। इस दोनों प्रकार की राज्य प्रणाली में पहला अन्तर यही है कि पार्लियामेन्टरी सरकार में राजा या राष्ट्रपति राज्य का सर्वेसर्वा होता है सरकार का नहीं और सरकार का उत्तर-दायित्व प्रधानमंत्री पर होता है जो कि सरकार का सर्वेसर्वा होता है। नौन पार्लियामेन्टरी में राष्ट्रपति राज्य और सरकार दोनों का ही सर्वे सर्वा होता है और उस पर ही सारी सरकार की जिम्मेदारी होती है।

४. पार्लियामेन्टरी सरकार में मंत्रीमण्डल का संसद पर निर्भर होना जब कि नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में राष्ट्रपति की निश्चित अवधि होती है:—पार्लियामेन्टरी राज्य प्रणाली में मन्त्री मंडल जो कि कार्यकारिणी सभा है वह संसद पर निर्भर होता है और इसका निश्चित अवधि नहीं होती। मन्त्री लोग संसद के सदस्य होते हैं। संसद में पूरा पूरा भाग लेते हैं और संसद पर ही वह निर्भर होते है। जब कि संसद उनकी नीति का विरोध करके प्रस्ताव अस्वीकार कर देती है तो उनको पद छोड़ना पड़ता है परन्तु नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में यह बात नहीं। वहां पर राष्ट्रपति और उसके सेक्रेट्री एक नियमित समय के लिये नियुक्त होते हैं। उनके लिये यह आवश्यक है कि वह कांग्रेस के किसी भी सभा के सदस्य न हो। न तो वह कांग्रेस के अधिवेशन में बैठ सकते हैं और न भाग ले सकते हैं और यदि कांग्रेस उनकी नीति का विरोध भी करे तब भी वह उनको पद छोड़ने के लिये विवश नहीं कर सकती।

पार्लियामेन्टरी सरकार के गुण और अध्यात्मिक सरकार (Non Parliamentary) के दोष

पार्लियामेन्टरी सरकार का आधार कार्य को शीघ्र निर्णय करके दृढ़ता से लागू करना:—पार्लियामेन्री सरकार परस्पर के

सहयोग पर निर्भर है। व्यवस्थापिकासभा में जिस राजनैतिक दल का बहुमत होता है, उसका नेता प्रधान मन्त्री नियुक्त होता है और दल के लोगों में से प्रभावशाली व्यक्तियों को चुन कर वह मन्त्रि मण्डल का सदस्य बनाता है और इस प्रकार मन्त्री परिषद और व्यवस्थापिकासभा में गहरा सम्बन्ध होता है। वास्तव में मन्त्री परिषद व्यवस्थापिकासभा का एक छोटा रूप है। मन्त्रियों के दो कार्य होते है, एक तो प्रबन्धात्मक कार्य और दूसरे व्यवस्थापिका सम्बन्धी कानून बनाने के कार्य। वास्तव में प्रमुख २ योजनाएं मन्त्रियों के ही द्वारा व्यवस्थापिकासभा के सामने आती हैं। और कोई भी योजना स्वीकार नहीं हो सकती है जब कि मन्त्रि परिषद उसका समर्थन न करे। जिस समय तक मन्त्रि परिषद को व्यवस्थापिका सभा का विश्वास प्राप्त है तब तक उनके योजनाओं के स्वीकार होने में तथा अपनी आवश्यकतानुसार रुपये स्वीकार कराने में कोई अड़चन नहीं होती। जो कुछ प्रस्ताव वह रखते हैं वह तुरन्त ही स्वीकार कर लिया जाता है और चूंकि वह प्रबन्धात्मक कार्य के भी जिम्मेदार हैं इसलिये वह कार्य तुरन्त ही दृढ़ता के साथ कार्य रूप में आ जाता है और यही इस सरकार की अच्छाई है जो कि अध्यात्मिक सरकार में नहीं पाई जाती, जिसका की आधार शक्ति के विभाजन पर निर्भर है। इसमें यह सम्भव है कि प्रेसीडेन्ट एक पार्टी का हो और व्यवस्थापिकासभा में बहुमत दूसरे दल का हो, जब ऐसी दशा हो जाती है तो आपस में झगड़ा होने लगता है और कार्य रुक से जाते हैं और शासन प्रबन्ध में उस समय तक बड़ी गड़बड़ हो जाती है, जब तक कि दोनों में से एक दूसरे की बात स्वीकार न करलें अथवा दोनों में समझौता न हो जाय।

पार्लियामेन्टरी सरकार, अध्यात्मिक सरकार की अपेक्षा प्रजातन्त्र के आधार पर अधिक निर्भर है:— पार्लियामेन्टरी सरकार की दूसरी विशेषता यह है कि उसमें शासक शासित वर्ग के प्रति पूर्णतया उत्तरदायीत्व होता है। मन्त्री मण्डल प्रथम तो व्यवस्था-

पिकासभा के समक्ष उत्तरदायीत्व होता है और अप्रत्यक्ष रूप से मत-दाताओं के प्रति उत्तरदायीत्व होता है क्योंकि वह ही व्यवस्थापिकासभा का निर्वाचन करते हैं यदि उनकी रीति और उनके कार्य प्रजा के निर्वाचित सदस्यों के मत के अनुसार नहीं होते तो उनको पद त्यागना पड़ता है और यदि मन्त्रीमण्डल को यह बहम हो जाये कि निर्वाचित सदस्य प्रजा कि इच्छाओं का विरोध करते हैं और प्रजा उनके पक्ष में होते हुए भी वह लोग मन्त्रीपरिषद् के कार्यों का समर्थन नहीं कर रहे हैं तो ऐसी स्थिति में वह व्यवस्थापिकासभा को भंग कर सकते हैं और प्रजा से दूसरे निर्वाचन के लिये प्रार्थना कर सकते हैं। जिससे वह अपने इच्छानुसार सदस्य चुने जो मतदाताओं की इच्छानुसार कार्य करे। दोनों दशाओं में इस बात पर जोर दिया जाता है कि प्रजा की इच्छा ही सर्वशक्तिमान तथा मान्य है और इस प्रकार पार्लियामेन्टरी सरकार प्रजातन्त्र के आधार पर निर्भर है। अध्यात्मिक सरकार में व्यवस्थापिकासभा निश्चित समय के लिये नियुक्त होती है और अपनी अवधि से पहले वह भंग नहीं की जा सकती है। इसी प्रकार राष्ट्रपति भी एक निश्चित समय के लिये नियुक्त होता है और अपनी निश्चित अवधि से पहले उसको पद त्याग करने पर विवश नहीं किया जा सकता है। यदि इस समय वह स्वेच्छाचारी राज्य करे तो ऐसा कोई वैधानिक उपाय नहीं है कि वह अपने पद से वापिस बुला लिया जाय। इसके द्वितीय बार निर्वाचित न होने का भय उनको अपने काल में स्वेच्छाचारी होने से नहीं रोक सकता, क्योंकि यह संभव है कि वह दूसरी बार खड़ा होने का विचार ही न करे इस प्रकार पार्लियामेन्टरी सरकार अध्यात्मिक सरकार की अपेक्षा में प्रजातन्त्र के आधार पर निर्भर है।

मन्त्रीमण्डल की सरकार, अध्यात्मिक सरकार की अपेक्षा में अधिक लचीली सरकार है:—बैगहार्ट ने मन्त्रीमंडल की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि यह बहुत लचीली सरकार है और इस सरकार में आपत्ति के समय में इस प्रकार का परिवर्तन लाया जा

सकता है जिसके द्वारा लोग आपत्ति का सफलता पूर्वक सामना कर सकें। साधारण रूप से तो मन्त्रीपरिषद् में उन राजनैतिक दल के सदस्य होते हैं जिसका कि व्यवस्थापिकासभा में बहुमत हो, परन्तु आपत्ति के समय में इस प्रकार की सरकार हानिकारक होती है। इसलिये सब भेद भाव दूर करके एक मिली जुली सरकार स्थापित कर लेते हैं जिसमें कि सब राजनैतिक दलों के सदस्य नियुक्त होते हैं और व्यवस्थापिकासभा की बैठक भी बिना चुनाव किये आपत्ति के समय तक वैसी की वैसी चालू रहती है। इस प्रकार आपत्ति का सफलता से सामना हो सकता है परन्तु अध्यात्मिक सरकार में कार्यकारिणी व व्यवस्थापिका सभा की अवधि निश्चित है और यदि कोई आपत्ति आ जाय और इनमें से कोई भाग भी, समय के अनुसार काम न कर पाये तब भी मनुष्य के पास कोई ऐसा वैधानिक उपाय नहीं होता है जिससे सरकार को बदल सकें।

अध्यात्मिक सरकार के गुण और मन्त्रीमण्डल सरकार के दोषः—इसका आधार दृढ़ता व पायेदारी पर निर्भर है न कि तुरन्त कार्य करने पर, अध्यात्मिक सरकार शक्तियों के विभाजन पर निर्भर है। व्यवस्थापिकासभा कार्यकारिणीसभा को इसकी अवधि के पहले पद छोड़ने पर विवश नहीं कर सकती। इससे सरकार में दृढ़ता रहती है परन्तु कार्य में फुर्ती नहीं पाई जाती। ब्राइस साहब लिखते हैं कि इस सरकार में देरी होना बहुत कुछ सम्भव है और एक अंग दूसरे अंग के विरुद्ध कार्य करता है। कभी २ व्यवस्थापिकासभा धन सम्बन्धी विषयों में किसी शक्तिशाली वर्ग का सहयोग प्राप्त करने के लालच के कारण कार्यकारिणी के लिये स्वीकृति देने से इन्कार कर देती है और इस कारण सरकार के कार्यों में ढील पड़ जाती है।

पार्लियामेन्टरी सरकार इतनी अधिक मात्रा में अवसर पर निर्भर नहीं है जितनी कि नौन पार्लियामेन्टरी सरकारः—

मन्त्रीमण्डल में प्रधानमन्त्री दूसरे मन्त्रियों की अपेक्षा बराबर की हैसियत रखता है। यदि प्रधानमन्त्री उच्चकोटि का पुरुष नहीं है तब भी राज्य प्रबन्ध ठीक रहेगा क्योंकि दूसरे मन्त्री उसकी कमियों को पूरा कर सकते हैं और इस प्रकार पार्लियामेन्टरी सरकार में राज्य प्रबन्ध एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं है। परन्तु नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में सारा राज्य प्रबन्ध राष्ट्रपति पर निर्भर है उसके सेक्रेट्री उसके आधीन होते हैं। मन्त्रीमण्डल के अन्य मन्त्रियों के समान वह समानता का दावा नहीं कर सकते और इस कारण यदि राष्ट्रपति योग्य पुरुष हुआ तो प्रबन्ध अवश्य उच्चकोटि का होगा। परन्तु यदि वह अयोग्य हुआ तो इस सरकार में राज्य प्रबन्ध खराब होने की अधिक सम्भावना है क्योंकि सेक्रेटरी उसके अधीन होते हैं और इस कारण वह उस पर कोई दबाव नहीं डाल सकते।

अवधि में स्थिरता और निश्चयात्मकता का होना:—इस सरकार में राष्ट्रपति एक निश्चित समय के लिये नियत होता है और उसको व्यवस्थापिकासभा का किसी प्रकार का भी भय नहीं रहता वह अपने नीति व कार्यों को पूरी स्वतन्त्रता के साथ कर सकता है और इसमें किसी दूसरे अंग का दखल नहीं होता है, परन्तु पार्लियामेन्टरी सरकार में यह बात सम्भव नहीं है क्योंकि इसमें मन्त्रि परिषद व्यवस्थापिका सभा पर निर्भर होती है और इस कारण इसका भविष्य सदा डाँवा डोल रहता है और विशेषतया उस समय जब कि धारा सभा राजनैतिक दलों में बहुत मत भेद हों और कोई भी दल इन सब के ऊपर बहुमत न रखता हो, इस अवस्था में सरकार बहुत जल्दी ही बदल जाती है जैसा कि फ्रांस में होता है।

अध्यात्मिक सरकार में वाद विवाद, समस्या की अच्छाई बुराई पर ही सीमित रहता है:—नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में कार्य कारिणी स्थिरता और निश्चियात्मकता के आधार पर होती है। व्यव-

स्थापिकासभा में किसी विषय पर जब वाद विवाद होते हैं वह उस विषय की अच्छाई बुराई पर ही सीमित रहते हैं और उनका ध्येय कार्य कारिणी को बदनाम करना नहीं होता, परन्तु पार्लियामेन्टरी सरकार में वाद विवाद का विस्तार अधिक होता है और विषय की अच्छाई बुराई बतलाते समय सदस्य लोग सरकार को बदनाम करना चाहते हैं जिससे सभा में से या तो उनका बहुमत कम हो जाय या मतदाताओं में से भरोसा कम हो जाय और फिर वह उस जगह अपने दल की सरकार स्थापित करें।

राज्य प्रबन्ध का कार्य करने में राष्ट्रपति की अकेली जिम्मेदारी:—अध्यात्मिक सरकार में प्रबन्धात्मक कार्य की जिम्मेदारी राष्ट्रपति के हाथ में होती है। सेक्रेटरी जो कि सहायता के लिये नियुक्त होते हैं वह उसके आधीन होते हैं वह बराबर की स्थिति नहीं रखते। राष्ट्रपति का शासन प्रबन्ध में पूरा हाथ होता है और योग्य शासक के समय में काफी अच्छा शासन होता है। परन्तु मन्त्रीमण्डल में मतभेद रहता है। प्रधान मन्त्री और मन्त्रियों में बराबरी का दावा रहता है, यदि प्रधान मन्त्री योग्य पुरुष है तो अवश्य उसका प्रभाव अधिक रहता है, परन्तु जब कि वह अयोग्य होता है तो मन्त्रीपरिषद् में भेद भाव के कारण राज्य प्रबन्ध में कमजोरी आ जाती है।

राजनैतिक दलबन्दी के आधार पर वादविवाद का नहीं होना:—अमेरीका में व्यवस्थापिक सभा में जितने वाद विवाद होते हैं वे इतनी अधिक मात्रा में दलबन्दी के आधार पर नहीं होते हैं जितने कि फ्राँस और इंगलैंड में। इंगलैंड और फ्राँस में अधिकतर कार्य मन्त्रीमंडल के द्वारा ही संसद में उपस्थित किये जाते हैं और जिस दल के कि मन्त्री लोग सदस्य हैं उस दल के सब सदस्यों के लिये यह आवश्यक है कि वह मन्त्रीमन्डल के कार्यों को पूरे रूप से स्वीकार करे नहीं तो मन्त्रीमण्डल बदनाम हो जायेगा और उसे अपना पद छोड़ना पड़ेगा इस प्रकार की अवस्था अमेरिका में कभी

नहीं हो सकती क्योंकि व्यवस्थापिका सभा एक निश्चित अवधि के लिये नियत होती है। इस लिये वहाँ के तमाम कार्य दलबन्दी के आधार पर नहीं होते।

अमेरिका में विरोधी दल का महत्व नहीं होना:— अध्यक्षात्मक सरकार में व्यवस्थापिका सभा और कार्यकारिणी सभा दोनों निश्चित अवधि के लिये नियत होते हैं और इन दोनों का आपस में विशेष सम्बन्ध नहीं होता है। इस कारण न तो वाद विवाद ही दलबन्दी के आधार पर होते हैं और न विरोधी दलका ही कुछ अधिक महत्व होता है। परन्तु सभात्मक सरकार में विरोधी दल विशेष महत्व रखता है। उसका उद्देश्य सदा उन्नति और विकास की ओर ही नहीं होता। वह अपने को सरकार से शक्तिशाली बनाने और उसे हटा कर अपने को शक्ति में लाने के फेर में रहता है। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है यह बात अध्यक्षात्मक सरकार में नहीं होती।

अमेरीका का राज्य इङ्गलैन्ड के राज्य के समान तानाशाही राज्य नहीं होता:— अमेरीका में कई छोटी छोटी कमेटियाँ हैं जो कि कानून बनाने का कार्य करती हैं और वे इंगलैंड के मन्त्रीमण्डल के समान अपना तानाशाही राज्य नहीं बना सकती। इंगलैन्ड में पार्लियामेंट में बहुमत होने के कारण मन्त्रिमण्डल जो कानून चाहता है उसको पार्लियामेंट से स्वीकार करा लेता है और इस प्रकार मन्त्रीमण्डल ही पार्लियामेन्ट पर शासन करता है, नियन्त्रण करता है, पार्लियामेंट मन्त्रीमन्डल पर नियंत्रण नहीं करती। मन्त्रीमंडल ने पार्लियामेंट को अपनी इच्छाओं को स्वीकार करने का साधन बनालिया है। दलों में अनुशासन और संगठित शक्ति के विकास और कार्य की प्रचुरता ने इस प्रकार की दशा को विकसित करने में बड़ी सहायता दी है। परन्तु यही दोनों बातें इसके लिये उत्तरदायी है। और यह दोनों बातें अमेरिका में नहीं होती।

अध्याय चौदहवां

नागरिकता

जे न मित्र दुःख होहिं दुखारी। तिन्ह हि बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रज कर जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना॥

प्राचीन ग्रीस और रोम में नागरिकता का अर्थः—जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं प्राचीन समय में ग्रीस और रोम में छोटे छोटे नगर राज्य होते थे। यातायात के साधन न होने के कारण इन नगर राज्यों का आपस में कुछ सम्बन्ध नहीं था। उस समय नगर का भूमि क्षेत्र कम होता चला गया, आबादी भी कम थी इस कारण नागरिकों का राज्य के शासन और नियम प्रबन्ध से सीधा सम्बन्ध था। दास और घर के नौकरों को छोड़ कर बाकी सब लोग राज्य प्रबन्ध में भाग लेते थे और वह सब लोग नागरिक कहलाते थे।

वर्तमान समय की स्थितिः—आज कल राष्ट्र राज्यों की उत्पत्ति हुई है जिनका कि क्षेत्र फल बहुत अधिक है। और जिसमें नागरिकों का सीधा भाग लेना असंभव है। यातायात के साधन के कारण एक राज्य के नागरिक भी दूसरे राज्य में आकर रहने लगे। आबादी अब दो विभागों में विभाजित है नागरिक और अनागरिक।

नागरिक और अनागरिकः—दोनों राज्य में रहते हैं, दोनों राज्य को कर देते हैं, दोनों राज्य के नियम का पालन करते हैं परन्तु नागरिक की स्थिति अनागरिक की अपेक्षा अधिक महत्व रख सकती है प्रथम तो नागरिक को राजनैतिक अधिकार प्राप्त होते हैं जिसके कारण वह सरकार के निर्वाचन में भाग लेता है, अपने प्रतिनिधि स्वयं चुनता है परन्तु अनागरिक इन अधिकारों से वंचित है। द्वितीय नागरिक स्थायी रूप से राज्य में रहता है वह राज्य से हटाया नहीं जा सकता और यदि वह अपने देश से बाहर रहे तो अपनी सुरक्षा की मांग अपनी राज्य की

सरकार से कर सकता है। परन्तु अनागरिक को यह अधिकार प्राप्त नहीं। वह जिस देश में रहता है उस देश की सरकार से अपनी सुरक्षा की मांग कर सकता है।

नागरिकता का कानूनी दृष्टिकोण:—कानूनी दृष्टिकोण से नागरिक वह है जिसको कि राज्य में राजनैतिक अधिकार प्राप्त हों और उसको अपना प्रतिनिधि स्वंय चुनने का अधिकार प्राप्त हो। कानूनी दृष्टिकोण से वह नागरिक कहलाता है।

नैतिक दृष्टिकोण:—पुताम्बेकर साहब का कथन है कि नागरिकता कानून पालन करना, राजनैतिक अधिकार प्राप्त होना और सरकार के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार पर ही सीमित नहीं है। इन बातों से ही व्यक्ति नागरिक नहीं बन जाता। नागरिकता के लिये आवश्यक है कि व्यक्ति अपने आपको समाज का एक आवश्यक अंग समझें और हमेशा समाज सुधार के प्रयत्न में लगा रहे।

उदाहरण:—कुटुम्ब में हर एक व्यक्ति अपने आपको कुटुम्ब में किसी को लाभ पहुँचता है तो हर एक को बराबर की खुशी होती है और जब कि किसी को दुख होता है तो सबको बराबर की चिन्ता होती है और हर एक अपने साधन के अनुसार उसका दुख दर्द दूर करने का प्रयत्न करता है। इसी प्रकार वास्तविक में नागरिक वह है जो कि तमाम समाज को कुटुम्ब समझे और यदि किसी समाज में किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह की स्थिती गिरी हुई है तो नागरिक का धर्म है कि उनकी स्थिति सुधारने का प्रयत्न करे। नागरिकता से अर्थ यह है कि भूख, बेकारी, निर्धनता, बीमारी और अज्ञानता को दूर करने के लिये जो कुछ व्यक्ति से बन सके, वह करें और इस प्रकार समाज के प्रति जो हमारा उत्तरदायित्व है उसको पूरा करें।

श्री निवास शास्त्री साहब का कथन:—नैतिक दृष्टिकोण से वास्तविक नागरिकता, समाज की उन्नति के लिये अपने नीजि लाभ को

बलिदान करने की भावना को कहते हैं। दूसरे शब्दों में इससे यह अर्थ है कि जब कभी अपना नीजि लाभ और समाज सुधार में भेदभाव हों, ऐसे समय समाज की उन्नति के लिये अपना नीजि लाभ त्याग कर देने की भावना को नागरिकता कहते हैं। लेकिन इस दृष्टिकोण को उत्पन्न करने के लिये ज्ञान ग्रहण करना आवश्यक है क्योंकि बिना ज्ञान के व्यक्ति इस बात का निर्णय नहीं कर सकता है कि वास्तविक समाज सुधार क्या है और उसके लिये उसको अपना बलिदान करना आवश्यक है, यह जभी सम्भव है जब उसको ज्ञान हो और उसमें वैज्ञानिक रूप से सोच विचार का माद्दा उत्पन्न हो गया हो। नागरिकता के तीन दृष्टिकोण हैं, प्रथम तो बुद्धि सम्बन्धी गुण (Intellectual) द्वितीय भावना उत्पन्न होना (Sentimental) तृतीय कार्य रूप का वस्त्र पहनाना (Practical aspect)

बुद्धि सम्बन्धी गुण:—व्यक्ति में इतनी शिक्षा होनी चाहिये कि वह सरलता पूर्वक सब विषयों को समझ ले और उन पर अपना मत बना सके। उसको हर विषय में निष्पक्ष होकर विचार करना चाहिये और इस प्रकार कार्य करे कि किसी को हानि न पहुँचे और संघठन में जो झगड़ा उत्पन्न हो गया हो उनको आसानी से दूर कर सकें। उन बातों का निर्णय कर सकें जो समय २ पर उसके सामने आती हैं।

भावना उत्पन्न होना:—(Sentimental) जब कि बुद्धि द्वारा हम एक चीज समझ लेते है तो हमारे मस्तिष्क में एक प्रकार की भावना उत्पन्न होती है और फिर हमें कार्य करने का जोश पैदा होता है।

कार्य रूप का वस्त्र पहनाना:—प्राय: देखा गया है कि व्यक्ति शिक्षा के द्वारा बुद्धि सम्बन्धी कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेता है और उसमें कुछ भावना भी उत्पन्न हो जाती है, परन्तु उसके हृदय और मस्तिष्क पर उनका अधिक प्रभाव नहीं होता और फिर वह इन बातों को कार्य

रूप का वस्त्र पहनाने का प्रयत्न नहीं करता। यह नागरिकता की बहुत बड़ी कमी है। नागरिकता बुद्धि द्वारा एक चीज समझ लेने और इम्तहान पास कर लेने पर सीमित नहीं है बल्कि इसका महत्व यह है कि हम अपने विचारों को कार्य रूप का वस्त्र दें और इस प्रकार समाज की उन्नति में साझेदार बनें। जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में प्रसन्नता याने भावना और कार्य इन दोनों का आपस में गठ बन्धन है और जब तक कि हम यह महसूस नहीं करते कि हम कोई करने योग्य काम कर रहे हैं तब तक हमें असली खुशी प्राप्त नहीं हो सकती। आगे चल कर उन्होंने कहा कि इससे अधिक महत्वपूर्ण काम क्या हो सकता है कि हर एक व्यक्ति इस प्राचीन और चिर-नवीन देश के नव निर्माण में भाग लें।

नागरिकता के दो दृष्टिकोणः—नागरिकता विज्ञान और कला दोनों ही है। विज्ञान होने के कारण हमको इसका अध्ययन करना, बुद्धि का विकास करना और अच्छी २ भावना उत्पन्न करना आवश्यक है, परन्तु इसका महत्व यहीं अन्त नहीं हो जाता, यह कला भी है और कला के दृष्टिकोण से जो कुछ हम अध्ययन करें उसको कार्य रूप में लाने ही से हम अच्छे नागरिक बन सकते हैं।

नागरिकता और देश भक्ति में अन्तरः—जहां तक देश-भक्ति का सम्बन्ध है वह व्यक्ति का दृष्टिकोण अपने राज्य की आपत्ति के समय में अपनी जान बलिदान करने या कोई और वीरता का कार्य करने पर सीमित कर देती है। संसार के इतिहास में और विशेष कर हमारे देश के इतिहास में ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे जहाँ पर कि व्यक्तियों ने अपने देश के लिये तन, मन, धन, और हर प्रकार के बलिदान किये, परन्तु वही लोग अपने जीवन में अच्छे नागरिक सिद्ध नहीं हुए। अंग्रेजी में एक कथन है कि शान्ति के समय भी ऐसी विजय प्राप्त करनी है जैसी कि युद्ध के समय में! शान्ति के समय जो विजय प्राप्त होती है वह एक प्रकार से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि वह लोगों की निगाहों में न आने के कारण उसकी इतनी प्रशंसा नहीं हो सकती है जितनी कि युद्ध में

वीरता के द्वारा विजय प्राप्त करने पर होती है। एक व्यक्ति जो कि अपने पड़ोसी की स्थिति सुधारे, समाज की भूख, बेकारी, निर्धनता, बीमारी और अज्ञानता दूर करने के लिये प्रयत्न करे, उसका कार्य भी उतना ही महत्वपूर्ण और रचनात्मक है जितना कि दूसरे व्यक्ति का जो कि अपनी वीरता के द्वारा विजय प्राप्त कराता है। नागरिकता का अर्थ यह है कि तुम बिना अपने कार्य की प्रशंसा की भावना रखते हुए लगातार दृढ़ता, लगन और बुद्धि के द्वारा अपने पड़ोसी, अपने राज्य और सम्पूर्ण मनुष्य जाति की सेवा करो। इस प्रकार देश भक्ति एक राज्य को दूसरे राज्य से अलग कराती है। नागरिकता एक राज्य को दूसरे राज्य से जोड़ती है और तमाम मनुष्य जाति को एकता की लड़ में पिरोती है और इस कारण नागरिकता न कि देश-भक्ति हमारा ध्येय है।

Citizenship is not patriotism because it demands a particular way of living at every moment of one's life. It demands a steady, continuous, devoted, intelligent, and often unnoticed and unrecognized service in both small things and big to one's neighbour, one's country and eventually to humanity itself.

अच्छी नागरिकता के लिये आवश्यक गुण:—आचार्य ब्राइसने अच्छे नागरिक के तीन गुण बतलाते हैं, पहला तो ज्ञान (Intelligence) दूसरा आत्म नियन्त्रण (Self Control) तथा तीसरा आत्म विश्वास (Self reliance) वाइट (white) का यह कथन है कि ये गुण साधारण बुद्धि (Common Sense) तथा ज्ञान (Knowledge) और सच्ची लगन (Devotion) हैं।

ज्ञान या साधारण बुद्धि का अर्थ:—प्रजातन्त्र में ज्ञान या साधारण बुद्धि का होना आवश्यक है, क्योंकि इसमें हर एक व्यक्ति को मत देने का अधिकार प्राप्त होता है और चुनाव के समय इसमें कई पाखण्डी प्रतिनिधि बनने के लिये खड़े हो जाते हैं और अपनी चिकनी

चुपड़ी बातों से लोगों को अपने पक्ष में करने का प्रयत्न करते हैं, जब कि मतदाता योग्य होते हैं तो वह ऐसे पाखण्डियों के जाल में नहीं फंसते, और इनके पक्ष में वोट नहीं देते। ज्ञान होने पर ही व्यक्ति बुरे भले में भेदभाव कर सकता है और इस प्रकार साधारण बुद्धि या ज्ञान का होना आवश्यक है।

आत्म नियन्त्रणः—अच्छे नागरिक के लिये आत्म नियन्त्रण का होना आवश्यक है। राज्य प्रबन्ध का हर एक विषय किसी न किसी वर्ग के लिये हानिकारक सिद्ध होता है, परन्तु हम को यह देखना है कि उससे सम्पूर्ण राष्ट्र की उन्नति होती है या नहीं। यदि उससे राज्य की उन्नति होती है तो व्यक्ति या व्यक्ति के समूह को अपने स्वयं की उन्नति को राज्य के आगे बलिदान कर देना चाहिये। प्रजातन्त्र में सारी बातें बहुमत के आधार पर निर्णय होती है। अल्प संख्या के लोगों के विरोध में होते हुए भी बहुमत दल की नीति को स्वीकार करना चाहिये इसी को आत्म नियन्त्रण कहते है। इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति को स्वयं अपने ऊपर अंकुश लगाना चाहिये। समाचार पत्रों, और भाषण देते समय हमको अपने उत्तरदायित्व को नहीं भूल जाना चाहिये। जो कुछ हम लिखें और जो कुछ हम कहें वह सब रचनात्मक होना चाहिये, यह तभी सम्भव है जब कि हम अपने ऊपर अंकुश रखें।

आत्म विश्वास और सच्ची लगन का अर्थः—हर एक नागरिक को इस बात का विश्वास होना चाहिये कि वह स्वयं अपने ही पैरों पर खड़ा होगा। दूसरों के सहारे पर खड़ा होने से आदमी कमजोर बनता है और जब यह भावना अधिक संख्या में प्रचलित हो जाती है तो राज्य फिर कमजोर हो जाता है। हर एक व्यक्ति को कुछ न कुछ कार्य अवश्य करना चाहिये और जो कुछ भी कार्य करे उसमें समाज सेवा की लगन होनी चाहिये उसको केवल अपना पेट भरने के लिये ही कार्य नहीं करना चाहिये, बल्कि उसको यह समझना चाहिये कि वह अपने कार्य से समाज को उन्नति के मार्ग में एक पद आगे ले जायेगा। जब कि

इस प्रकार की भावना से नागरिक कार्य करता है तो समाज में एक नया वातावरण उत्पन्न हो जाता है।

गरीब और दुखी की सहायता करनाः—नागरिकता का अर्थ यह है कि व्यक्ति सारे समाज को एक कुटुम्ब समझे और यदि कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह दुःख में है तो उसका दुःख दूर करना नागरिक का धर्म है। हमको इनके सुधार के लिये संस्थायें स्थापित करनी चाहिये, और इस प्रकार वैज्ञानिक रूप से समाज सुधार का प्रयत्न करना चाहिये। अच्छा नागरिक वही है जिसमें समाज सेवा की लगन लगी हुई है।

आदर्श नागरिक बनने में बाधायें:-ब्राइस के शब्दों में अज्ञानता, स्वार्थ और दलबन्दी यह तीन चीजें नागरिकता के लिये बाधक सिद्ध होती हैं।

अज्ञानता तथा मूर्खता का होनाः—अच्छे नागरिक के लिये ज्ञान होना आवश्यक है। यदि उसमें ज्ञान नहीं है तो अच्छे बुरे में भेद भाव नहीं कर सकेगा, अपने उत्तरदायित्व को नहीं समझ सकेगा, राज्य प्रबन्ध के विषय में उसकी कोई रुची नहीं होगी। इन सब बातों से समाज की उन्नति रुकेगी, यही कारण है कि नागरिकों की शिक्षा का प्रबन्ध करना। और उनका दृष्टिकोण अधिक करना समाज की उन्नति के लिये आवश्यक है।

स्वार्थ की मात्रा का अधिक होनाः—जब कि लोगों में स्वार्थ की मात्रा अधिक होती है तो अच्छी नागरिकता की भावना का अन्त हो जाता है। व्यक्ति अपने स्वयं के लाभ के लिये समाज की उन्नति को ठुकरा देते हैं। अपने स्वार्थ के कारण प्रतिनिधि लोग चुनाव के समय मतदाताओं को रिश्वत देके मत अपने पक्ष में कर लेते हैं और इस प्रकार राज्य प्रबन्ध खराब हो जाता है।

दल बन्दीः—राजनैतिक दल जनतन्त्र में आवश्यक है, परन्तु जब

कि इन दलों में स्वार्थ की मात्रा अधिक हो जाती है तो यह हानि कारक हो जाता है। अच्छे नागरिक के लिये आवश्यक है कि वह इस बात से होशियार रहे कि उसका दल अपनी उन्नति के आगे समाज को नहीं भूल जाये।

उदासीनता:—उदासीनता भी नागरिकता का एक बहुत बड़ा अवगुण है, ऐसे व्यक्ति यह विचारते हैं कि यदि हम राज्य प्रबन्ध में भाग नहीं लेंगे तो कोई हानि नहीं होगी, क्योंकि दूसरे लोग तो अवश्य भाग लेवेंगे, परन्तु यह गलत विचार है और यदि समाज में इस प्रकार के लोग अधिक संख्या में हो जायें तो फिर राज्य प्रबन्ध खराब हो जाता है। हर एक व्यक्ति को अपना अपना कार्य करना आवश्यक है।

नेहरूजी की महत्वाकांक्षा:—मेरी अभी भी एक महत्वाकांक्षा है। अब जो कुछ भी मेरा जीवन शेष है, उसमें अपनी पूरी ताकत और पूरी क्षमता के साथ भारत के पुनर्निर्माण में लगा रहूँ। जब तक मैं खत्म नहीं हो जाता और खत्म हो जाने वाली चीजों के ढेर में नहीं फेंक दिया जाता तब तक मैं पूरे जोर से इस काम को करता रहना चाहता हूं। मुझे इसकी कतई फिक्र नहीं है कि आप या दूसरे लोग मेरे बारे में मेरी मृत्यु के बाद क्या सोचेंगे? मेरे लिये तो बस इतना ही काफी है कि मैंने अपने को, अपनी ताकत और क्षमता को भारत सेवा में खपा दिया। मुझे इसकी भी परवाह नहीं है कि मेरे बाद मेरी प्रतिष्ठा क्या होगी पर मेरे बाद यदि कुछ लोग मेरे बारे में सोचें तो मैं चाहूँगा कि वे कहें—"यह एक ऐसा आदमी था जो अपने पूरे दिल और दिमाग से हिन्दुस्तान से और हिन्दुस्तानियों से मोहब्बत करता था और हिन्दुस्तानी लोग भी उसकी खामियों को हमेशा भुला कर उससे बेहद मोहब्बत करते थे।" यदि इसी प्रकार की भावना हर एक व्यक्ति में उत्पन्न हो जाये और फिर हर एक व्यक्ति अपनी शक्ति और ताकत को अपने सीमित दायरे में भारत की सेवा में लगा दे तो फिर राज्य में उन्नति तेजी से होगी और यही नागरिकता है।

अध्याय पन्द्रहवाँ

अधिकार तथा कर्तव्य

Rights without duties create chaos; duties without rights make a slave. Rights with duties make a free citizen.

अधिकार की परिभाषाः—राज्य का ध्येय व्यक्ति का सुधार और उसकी उन्नति कराना है। व्यक्ति की उन्नति के लिये राज्य इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न करता है जिससे व्यक्ति को अपने मानसिक तथा नैतिक विकास के लिये पूरा पूरा सुभीता मिले। वह शक्तियाँ जो कि राज्य, व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को उनके स्वयं के लाभ के लिये प्रदान कर देता है और कानून द्वारा उनकी स्वीकृति करता है उनको अधिकार कहते हैं। अधिकार जीवन की उन परिस्थितियों का नाम है जिनके द्वारा मनुष्य समाज में शान्ति पूर्वक रहते हुए अपने व्यक्तित्व का विकास कर पाता है और इनके बिना कोई भी व्यक्ति अपना श्रेष्ठ स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सकता।

अधिकार के तत्व

१. अभिलाषायें और आवश्यकताओं का होनाः—हर एक व्यक्ति की कुछ अभिलाषायें और आवश्यकतायें होती है जिनकी पूर्ती पर ही वह सुखी जीवन व्यतीत कर सकता है और समाज में ही वह इनकी पूर्ती कर पाता है। इन्हीं परिस्थितियों की मांग का नाम स्वत्व है जो कानूनी रूप में अधिकार बन जाते है।

२. विज्ञान और नैतिकता पर निर्भर होनाः—अधिकार का आदर्श व्यक्ति के जीवन को सुखी बनाना है और इस प्रकार समाज को उन्नति के मार्ग में आगे ले जाना है इस कारण व्यक्ति को ऐसे अधिकार नहीं मिल सकते हैं, जिससे कि समाज की उन्नति के उदाहरण

के रूप में आत्म हत्या करना, नशा सेवन करना, भाषण द्वारा दूसरे को अनुचित बुरा भला कहना इत्यादि, इन बातों का व्यक्ति को अधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि इन बातों से समाज की उन्नति रुकती है। अधिकार का आदर्श व्यक्ति का विकास और समाज की उन्नति करना है। अधिकार, विज्ञान और नैतिकता पर निर्भर है और यदि कोई व्यक्ति इनके विरुद्ध कार्य करता है तो समाज को व्यक्ति पर अंकुश लगाने का अधिकार है।

समाज की स्वीकृति प्राप्त होना:—यदि कोई अधिकार विज्ञान और नैतिकता पर निर्भर हो परन्तु समाज उसको स्वीकार न करे तो वह अधिकार नहीं बनता है। समाज की स्वीकृति अधिकार के लिये आवश्यक है। समाज द्वारा मान्यता प्राप्त किये हुए अधिकार कानूनी रूप धारण कर लेता है और समाज का हर एक व्यक्ति कानून की मर्यादा के अन्दर उनका उपभोग कर सकता है जो उन कानूनी मर्यादाओं का अति क्रमण करता है वह दण्ड का भागी बन जाता है।

अधिकारों की समानता:—समाज में हर एक व्यक्ति को समान अधिकार मिलने चाहिये। किसी व्यक्ति को चाहे वह कितना ही धनी और उच्च क्यों न हो उसे किसी प्रकार का विशेष अधिकार नहीं मिलना चाहिये।

अधिकारों के साथ कर्तव्य का होना:—समाज का चक्र परस्पर के सहयोग पर निर्भर है। समाज व्यक्ति को देता भी है और उसके बदले में उससे मांगता भी है। सुख और शान्ति, व्यक्ति समाज से लेता है और हर एक व्यक्ति का समाज के प्रति यह अधिकार है कि उसको सुख और शान्ति प्राप्त हो। इसके बदले में समाज व्यक्ति से यह आशा रखती है कि वह उसकी उन्नति के लिये पूरा सहयोग देगा और इस प्रकार परस्पर के सहयोग के द्वारा समाज का चक्र चलता रहेगा। हर एक अधिकार के साथ कुछ न कुछ कर्तव्य अवश्य होते हैं। यह

मेरा अधिकार है कि समाज मेरे जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करे इसके बदले में मेरा यह कर्तव्य हो जाता है कि मैं दूसरे के जीवन और सम्पत्ति में हस्तक्षेप न करूं। समाज की ओर से हर एक व्यक्ति को चुनाव के समय मत देने का अधिकार प्राप्त है। इसके साथ उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि योग्य पुरुष के पक्ष में वोट दे, इत्यादि। अधिकार और कर्तव्य में तीन प्रकार के सम्बन्ध हैं।

अधिकार और कर्तव्य एक हैं परन्तु दृष्टिकोण भिन्न २ हैं:- एक व्यक्ति का जो अधिकार है वह दूसरे के लिये कर्तव्य हो जाता है उदाहरण के रूप में मेरा यह अधिकार है कि कोई व्यक्ति मेरी सम्पत्ति पर हस्तक्षेप न करे। दूसरे व्यक्ति के लिये यह कर्तव्य हो जाता है कि वह बिना मेरी स्वीकृति के मेरी सम्पत्ति में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करे। इस प्रकार कर्तव्य और अधिकार एक ही वस्तु है, परन्तु इनके दृष्टिकोण भिन्न २ हैं। मेरे दृष्टिकोण से जो कुछ कि मेरे अधिकार हैं वह ही दूसरे के दृष्टिकोण से उसके कर्तव्य बन जाते हैं।

अधिकारों का सब पर बराबर से लागू होना:- अधिकार किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्ति के समूह को ही लागू नहीं होते हैं बल्कि सब व्यक्तियों को समान रूप से प्राप्त होते है। इस कारण हर एक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह दूसरे व्यक्तियों को अपने अधिकार प्रयोग में लाने से हस्तक्षेप न करे। पब्लिक रास्ते पर मुझे चलने का अधिकार है, परन्तु और दूसरे व्यक्तियों को भी यह ही अधिकार बराबर से प्राप्त हैं और इस कारण मेरा यह कर्तव्य है कि दूसरों को इस अधिकार के प्रयोग में किसी प्रकार की बाधा न डाले।

अधिकार से अभिप्राय समाज की उन्नति कराना है:- अधिकार से व्यक्ति का विकास और समाज की उन्नति होती है। इस कारण हर एक व्यक्ति के अधिकार के साथ उसका यह कर्तव्य भी हो जाता है कि वह इस प्रकार से अपने अधिकार को प्रयोग में लाये कि उससे समाज

की उन्नति हो। यदि वह अपने अधिकार का प्रयोग अनुचित करता है और बजाय समाज की उन्नति के समाज को हानि पहुँचती है तो वह अपना अधिकार खो बैठता है और समाज उसको दण्ड देती है। उदाहरण के लिये यदि कोई व्यक्ति अपने भाषण देने के अधिकार का गलत प्रयोग करता है और भाषण द्वारा भिन्न भिन्न जातियों में भेद भाव उत्पन्न कराता है या राज्य में अशान्ति उत्पन्न कराने के लिये लोगों को उकसाता है तो वह समाज के लिये हानिकारक सिद्ध होता है और समाज को उस पर अंकुश लगाने का अधिकार प्राप्त है।

अधिकार सामाजिक उपज है:—अधिकार राज्य में ही प्राप्त हो सकते हैं। प्राकृतिक अवस्था में (State of Nature) व्यक्तियों को अधिकार प्राप्त नहीं थे बल्कि शक्तियाँ थी। जिसकी लाठी उसकी भैंस। अधिकार राज्य में कानून द्वारा स्थिर रहते हैं। कानून की चार दीवारी में व्यक्ति पूरे रूप से स्वतन्त्र है और जब कि वह कानून का उल्लंघन करता है तो राज्य उसको रोकता है और उसको दण्ड देता है।

प्राकृतिक अधिकार:—सामाजिक समझौते के लेखकों ने यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि प्रकृतिक अवस्था में व्यक्तियों के प्रकृतिक अधिकार थे। लॉक ने लिखा है कि "व्यक्ति का जीवन स्वतन्त्रता और सम्पत्ति का अधिकार प्राकृतिक अधिकार हैं जो कि प्राकृतिक अवस्था में उसको प्राप्त थे" परन्तु यह गलत विचार है। बिना राज्य के अधिकारों का होना असम्भव है।

प्राकृतिक अधिकारों का नया रूप:—वर्तमान समय में लेखकों ने प्राकृतिक अधिकारों को एक नया रूप दिया है। उनका कहना है कि इसमें कोई संदेह नहीं कि बिना राज्य के अधिकार प्राप्त नहीं होते, परन्तु कुछ ऐसे वास्तविक अधिकार हैं जो कि व्यक्ति के विकास के लिये आवश्यक हैं। इनसे अर्थ उन आदर्श अधिकारों का है जो कि हर एक उन्नति शील राज्य को, हर एक व्यक्ति को प्रदान करने चाहिये। वर्तमान

समय में इन अधिकारों को मौलिक अधिकार (Fundamental Rights) का नाम दिया गया है। वर्तमान समय में बनाये गये सब विधानों में मौलिक अधिकार व्यक्ति को प्रदान किये गये हैं। इन अधिकारों को न तो व्यवस्थापिकासभा रद्द कर सकती है और न कार्यकारिणीसभा किसी प्रकार का हस्तक्षेप कर सकती है। यदि कोई हस्तक्षेप करे भी तो उच्चतम न्यायालय द्वारा वह अधिकार फिर से प्राप्त हो सकते हैं।

अधिकारों का वर्गीकरण:—अधिकार दो भागों में विभाजित है। पहला नैतिक अधिकार और दूसरा कानूनी अधिकार। कानूनी अधिकार फिर दो भागों में विभाजित किये गये हैं पहला तो सामाजिक अधिकार (Civil Rights) और दूसरा राजनैतिक अधिकार (Political Rights) इन सब की परिभाषा निम्न लिखित है:—

कानूनी अधिकार की परिभाषा:—कानूनी अधिकार वे अधिकार हैं जिनको राज्य स्वीकार कर ले और उसके विरुद्ध कार्य करने वाले को दण्ड दे। कानूनी अधिकार कानून से उत्पन्न होते हैं और राज्य की इच्छा पर निर्भर रहते हैं। कानूनी अधिकारों की कसौटी यही है कि वे न्यायालयों द्वारा कार्यान्वित किये जाते हैं।

नैतिक अधिकार की परिभाषा:—वे अधिकार जिनको समाज स्वीकार करले परन्तु कानून से उनका सम्बन्ध कुछ न हो उन्हें नैतिक अधिकार कहते हैं। जैसे मैं किसी के लिये भोजन का निमंत्रण दूं और यदि वह स्वीकार करले तो नैतिक दृष्टिकोण से उसका भोजन करने के लिये मेरे यहाँ आना आवश्यक है। यदि वह स्वीकार करने पर भी नहीं आवे तो समाज की दृष्टि में वह अवश्य पारित गिना जायगा परन्तु न्यायालय द्वारा यह अधिकार कार्यान्वित नहीं किया जाता।

सामाजिक अधिकारों की परिभाषा:—सामाजिक अधिकार वह अधिकार है जो कि व्यक्ति के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा के लिये आवश्यक है और इनके द्वारा व्यक्ति को अपने विकास का पूरा पूरा

अवसर प्राप्त हो। उदाहरण के रूप में निम्नलिखित अधिकार सामाजिक अधिकार है। (१) जीवन रक्षा का अधिकार (२) स्वतन्त्रता का अधिकार (३) सम्पत्ति का अधिकार (४) नौकरी और उचित वेतन प्राप्त करने का अधिकार (४) शिक्षा का अधिकार (६) विचार और भाषा की स्वतन्त्रता का अधिकार (७) प्रेम की स्वतन्त्रता का अधिकार (८) संघठन और सभा करने का अधिकार (६) उपासना का अधिकार। जैसा कि हमने स्वतन्त्रता के अध्याय में लिखा है इन सामाजिक अधिकारों के प्राप्त होने से ही व्यक्ति को नागरिक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है।

राजनैतिक अधिकार की परिभाषा:—राजनैतिक अधिकार वह अधिकार हैं जिनके द्वारा व्यक्ति को राजनैतिक कार्यों में भाग लेने का अवसर प्राप्त होता है। यह अधिकार नागरिक को ही प्राप्त होते हैं। अनागरिक को यह अधिकार प्राप्त नहीं होते। (१) मतदान का अधिकार (२) निर्वाचित होने का अधिकार (३) सरकारी पद ग्रहण करने का अधिकार यह सब राजनैतिक अधिकार कहलाते है। राजनैतिक अधिकार प्राप्त होने पर ही व्यक्ति को राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है। राजनैतिक अधिकार वैधानिक सरकार की नींव है और वैधानिक सरकार स्थापित होने पर ही व्यक्ति के सामाजिक अधिकारों की नींव दृढ़ होती है।

वर्तमान राज्यों में नागरिक के सामाजिक और राजनैतिक अधिकारों का संक्षेप में वर्णन

जीवन रक्षा और सम्पत्ति का अधिकार:—इसका अर्थ यह है कि मनुष्य को जीवन तथा स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त हो। इस अधिकार का तथ्य यह है कि किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता मनमानी रूप से हड़प न की जाय। यदि उसने कोई अनुचित कार्य किया है तो कानून द्वारा (मनमानी नहीं) उस पर कार्यवाही की जाय। वह अपराधी नहीं है इस बात को सिद्ध करने का पूरा २ अधिकार मिले, और फिर यदि वह

दोषी सिद्ध हो जाय तो उसको उतनी ही सजा दी जाय जितनी कि उस दोष के लिये कानून (law) में लिखी है और एक ही दोष पर दो बार सजा न दी जाय। इसी प्रकार सम्पति के अधिकार का अर्थ है कि मनुष्य ने जो कुछ भी सम्पति कानून के अनुसार प्राप्त की है उसकी रक्षा राज्य को करनी चाहिये और यदि राज्य कुछ सम्पत्ति लेना चाहे तो वह कानून द्वारा मुआवजा देकर सम्पत्ति ले सकती है। मनमानी रूप से सरकार किसी की सम्पत्ति में हस्तक्षेप नहीं कर सकती है।

नौकरी और उचित वेतन प्राप्त करने का अधिकारः— वर्तमान समय में ऐसी प्रवृत्ति हो चली है कि राज्य हरेक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार कार्य देवें और उचित वेतन देवें जिससे कि वह अपनी जीवन यात्रा सुगमता पूर्वक बिता सके। यह एक आदर्श है जिसे हर एक राज्य अपनाने की कोशिश करता है, परन्तु इस आदर्श को अभी तक बहुत कम राज्य ग्रहण कर सके हैं। भिन्न २ योजनाएं बना कर राज्य देश की उन्नति कर रहे हैं। जिससे बेरोजगारी दूर हो और अधिक से अधिक संख्या में लोगों को काम मिलें।

उपासना व धर्मावलम्बन की स्वतन्त्रता का अधिकारः— इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। वह अपनी इच्छानुसार धर्म को ग्रहण कर सकता है और जिस रीति से वह चाहे, ईश्वर की प्रार्थना कर सकता है।

स्वतन्त्र विचार, भाषण तथा समिति निर्माण का अधिकारः- हर मनुष्य को जनता की समस्याओं के प्रश्न पर अपने विचार प्रकट करने का अधिकार है, उचित उद्देश्य की पूर्ति के लिये दूसरों से मिलने का अधिकार प्राप्त है। भाषण देने की स्वतन्त्रता, छापने और लिखने की स्वतन्त्रता तथा सभाएँ एकत्रित करने की स्वतन्त्रता आदि, विचार प्रगट करने के अधिकार के अन्तर्गत है। इन अधिकारों के बिना न तो नागरिक जनता की समस्याओं पर विचार प्रगट करके दूसरों पर प्रभाव डाल

सकता है और न दूसरों के विचारों से स्वयं प्रभावित हो सकता है और इस प्रकार उसको उन्नति के पथ में आगे बढ़ने में बाधा पड़ती है।

कानूनी समानता:—कानून की सब लोगों पर एकसी दृष्टि होनी चाहिये। छोटे तथा बड़े का भेद भाव नहीं होना चाहिये। छोटे और बड़े सबकी कानून द्वारा एकसी रक्षा होनी आवश्यक है। और यदि कोई भी व्यक्ति कानून के विरुद्ध कार्य करे तो उसको वही दण्ड देना आवश्यक है जो कि कानून में लिखा हो। यदि ऐसा न हो और किसी के साथ सुविधा तथा किसी के साथ असुविधा हो तो लोगों में भेद भाव पैदा हो जाता है और इस प्रकार देश में अशान्ति हो जाती है।

शिक्षा का अधिकार:—नागरिकता के लिये शिक्षा आवश्यक है बिना शिक्षा के नागरिकों को ज्ञान नहीं प्राप्त होता है और फिर वह जिम्मेवारी नहीं पहचान सकता। इस कारण से हर एक राज्य का यह कर्तव्य है कि वह पूर्ण रूप से सुविधाजनक शिक्षा देने का प्रबन्ध करें।

मतदान, निर्वाचित होने, और सरकारी पद ग्रहण करने के अधिकार:—प्रजातन्त्र में सर्वोच्चसत्ता जनता के हाथ में होती है। हर एक व्यक्ति को मत देने का अधिकार प्राप्त होता है। मतदान द्वारा जनता अपने प्रतिनिधियों को चुनकर विधान सभाओं में भेजती हैं जहां वह सरकार बनाते हैं और कानून की रचना करते हैं। दूसरे राज्य में हर नागरिक को चुनाव में खड़ा होकर और निर्वाचित होकर विधान सभाओं में जाने का अधिकार प्राप्त होता है जिससे वह जनता के प्रतिनिधि बन कर जनता की भलाई के लिये उचित कानून पास करा सकें। तीसरे हर नागरिक को अवसर प्राप्त होता है कि वह सार्वजनिक सेवाओं में सरकारी पद प्राप्त कर सके और अपनी शक्ति और ज्ञान को समाज की सेवामें लगा सके।

कर्तव्य:—जैसा हम पहले लिख चुके हैं समाज का चक्र परस्पर के सहयोग पर ही चलता है। समाज व्यक्ति को अधिकार देता है तो व्यक्ति

से इस बात की भी आशा रखता है कि व्यक्ति समाजोन्नति के प्रति अपने कर्तव्यों की पूर्ती करेगा। नागरिक शास्त्र में अधिकार और कर्तव्य दोनों को बराबर का महत्व दिया जाता है। अच्छा नागरिक वही है जो कि कर्तव्य पालन करके समाज की सेवा में लगा रहता है। ऐसा राज्य जहां पर कि व्यक्ति अपने अधिकार को अधिक महत्व देता है परन्तु वह समाज की सेवा नहीं करते. राज्य की आज्ञा पालन करना अपना कर्तव्य नहीं समझते, ऐसे राज्य में अशान्ति रहती है, और राज्य की उन्नति नहीं हो सकती। कुछ राज्य ऐसे हैं जहां पर कर्तव्य पालन पर तो जोर दिया जाता है परन्तु उनको अधिकार नहीं सौंपे जाते और इस प्रकार व्यक्ति एक प्रकार का दास बन जाता है। अंग्रेजी राज्य के समय में अंग्रेज़ी सरकार हम लोगों को कानून पालन करने पर जोर देते थे, परन्तु वह हमको अधिकार नहीं सौंपते थे। मत देने का अधिकार लोगों को प्राप्त नहीं था। उस कानून को बनाने में हमारा कोई हाथ न था और इस प्रकार वह दास बना कर हमको रखना चाहते थे। असली नागरिक वही ही है जो कि अधिकार और कर्तव्य दोनों को बराबर का महत्व देता है। समाज के प्रति व्यक्ति की जिम्मेदारी का नाम कर्तव्य है। कर्तव्य दो प्रकार के हैं, एक तो कानूनी कर्तव्य जिसका अर्थ यह है कि कानून हमको उन जिम्मेदारियों को पूरा करने पर जोर देता है और यदि हम उनका उल्लंघन करें तो कानूनों द्वारा उन पर अंकुश लगाया जाता है। दूसरा नैतिक उत्तरदायित्व (Moral duties) है जिनका कि पालन करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।

कानून पालन करने का कर्तव्यः—हर एक व्यक्ति का पहला कर्तव्य यह है कि अपने राज्य के कानून का पालन करे और कानून का पालन करने से ही समाज की उन्नति तेजी से हो सकती है। यदि कोई व्यक्ति किसी कानून को स्वीकार नहीं करता है उस पर भी उसका कर्तव्य यही है कि वह कानून का पालन करे, परन्तु उसको उस कानून के विरुद्ध प्रचार करने का पूरा अधिकार है और जब कि बहुमत उसके पक्ष

में हो जाये तो उसको कानून में परिवर्तन लाने का अधिकार है, परन्तु जब तक कि कानून बदल न जाय उसको उस कानून का पालन करना चाहिये।

सच्ची भक्तिः—प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह अपने राज्य के प्रति सच्ची भक्ति रक्खे। शान्ति और युद्ध दोनों अवसर पर समाज सेवा में लगा रहे। आपत्ति के समय में उसको खुशी २ फौज में भर्ती होकर देश की रक्षा के लिये अपनी जान तक बलिदान करने पर तैयार रहना चाहिये।

कर देनाः—राज्य के प्रबन्ध करने में सरकार का खर्चा होता है इसके लिये जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि कुछ कर जनता पर लगाते हैं इस धन को सरकार व्यक्तियों की भलाई में उपयोग करती है। इस कारण नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह करों को प्रसन्नता से दे।

सरकारी कर्मचारियों को सहायता देनाः—एक नागरिक का यह भी कर्तव्य है कि वह सरकारी कर्मचारियों को शान्ति व्यवस्था स्थापित करने में सहयोग दे। जो व्यक्ति उसकी दृष्टि में कानून भंग करता है उनका वह साथ न दे और उनके बारे में जो कुछ उसको मालूम है उसका पता पुलिस को दे ताकि वह जल्दी से गिरफ्तार हो जाये।

नैतिक जिम्मेदारीः—(Moral duties) हर एक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह शारीरिक रूप से स्वस्थ हो, दूसरे अपने अधिकारों का अध्ययन करना और कर्तव्यों का पूर्ण रूप से पालन उसका नैतिक धर्म है। अपने मकान और आस पड़ौस की सफाई अपने परिवार पड़ौसी तथा नगर के प्रति कर्तव्य, सत्यता से मत प्रदान करना, अपने स्वार्थ को न विचारना और समाज की उन्नति को आगे रखना, गरीब और दुखी आदमियों की सेवा करना यह सब व्यक्ति की नैतिक जिम्मेदारी है।

भारत सेवक समाज का महत्व:—कई शताब्दियों की दासता ने स्वार्थ की मात्रा हम में अधिक कर दी है और समाज सेवा की भावना हम में बहुत कम है। प्रजातन्त्र की सफलता के लिये लोगों में समाज सेवा की भावना होना आवश्यक है। लोगों के परस्पर के सहयोग से ही बुराइयाँ दूर हो सकती हैं। किसी भी प्रकार की सरकार हो, यदि लोगों का सहयोग नहीं है तो समाज तेजी से उन्नति नहीं कर पायेगा। लोगों का सहयोग प्राप्त करने और नागरिकता की भावना उत्पन्न करने के लिये पांच वर्षीय योजना ने भारत सेवक समाज के नाम से एक संस्था स्थापित की है। सरकारी कर्मचारी भी इसके सदस्य बन सकते हैं। विद्यार्थियों को चाहिये कि इसके सदस्य बन कर अपनी रुची के अनुसार समाज सेवा में भाग लें। आज कल इसका बहुत महत्व है इससे उनको भी लाभ पहुंचेगा और समाज सेवा के लिये अवसर प्राप्त होगा।

आर्थिक विकास:-इमारतों, सड़कों, कुओं, तथा बन्धों का निर्माण, ग्रामोदय योजना के लिये मकानों का निर्माण, सहकारी संस्थाओं और पंचायतों के विकास में सहायता करना, कुटीर तथा ग्राम उद्योगों के विकास में सहायता, मितव्ययिता और बचत का आन्दोलन, फसल की रक्षा तथा पशुओं की स्थिति में सुधार।

सामाजिक स्वस्थता:—(क) भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन, जिसमें रिश्वत न देने और रिश्वत न लेने की प्रतिज्ञा की जायगी। इस प्रतिज्ञा के कारण प्रभावित होने वालों की सहायता।

(ख) खाद्य और दवाओं में मिश्रण विरोधी आन्दोलन, जिसमें प्रतिज्ञा की जायगी कि किसी खाद्य या दवाई में मिश्रण नहीं किया जायेगा और मिश्रित खाद्य या दवाइयाँ न बेची जायेंगी। मिश्रण को रोकने के लिए जनता की सहायता की जायगी।

अध्याय सोलहवां

स्थानीय स्वराज्य

स्थानीय स्वराज्य की परिभाषाः—स्थानीय स्वराज्य का अर्थ उस स्थानीय सरकार से है, जिसका शासन प्रबन्ध जनता के प्रतिनिधियों द्वारा होता है। इसमें जहां स्थानीय संस्थाओं को अधिकार प्राप्त होते हैं, वहां जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को शासन सम्बन्धी कुछ अधिकार मिल जाते हैं। सीमित क्षेत्र में जनता स्वयं अपने कार्यों का प्रबन्ध करती है। इसको स्थानीय स्वराज्य कहते हैं।

स्थानीय स्वराज्य का महत्व

लोगों का चरित्र सुधारना तथा उत्तरदायित्व उत्पन्न करना:—हमने प्रजातन्त्र सरकार और एकतन्त्र सरकार का भेद-भाव बतलाते हुए लिखा है कि एकतन्त्र सरकार में सारी बातें केन्द्रिय सरकार द्वारा लोगों पर लागू होती हैं। इससे लोगों का चरित्र नहीं सुधर पाता है और वह अपने को एक प्रकार का दास समझने लगते हैं। सरकार में अपने को बराबर का साझेदार नहीं समझते। प्रजातन्त्र का ध्येय लोगों का चरित्र सुधारना तथा उनमें उत्तरदायित्व उत्पन्न करना है जिससे वह अपने को सरकार का एक वास्तविक अंग और साझेदार समझें। प्रजातन्त्र में अधिकारों का विभाजन होता है, कुछ अधिकार केन्द्र के हाथ में होते हैं जिनका कि सारे राज्य से सम्बन्ध होता है, कुछ अधिकार प्रान्तिय सरकारों के हाथ में सौंपे जाते हैं और कुछ स्थानीय संस्थाओं को सौंपे जाते हैं। इस प्रकार के विभाजन से अधिक से अधिक मात्रा में लोगों को राज्य प्रबन्ध में भाग लेने का अवसर प्राप्त होता है जिससे उनका चरित्र सुधरता है और उत्तरदायित्व उत्पन्न होता है।

प्रतिनिधियों को राज्य प्रबन्ध का अनुभव प्राप्त होना:— स्थानीय सरकार से राज्य प्रबन्ध का लोगों को अनुभव प्राप्त होता है। स्थानीय संस्थाओं में जो प्रतिनिधि चुने जाते हैं उनको राज्य प्रबन्ध में भाग लेने से यह ज्ञान प्राप्त होता है कि राज्य के काम में कितनी कठिनाइयां और उलझनें पैदा होती हैं और इनको सुलझाने के लिये कितनी अधिक मात्रा में योग्यता और दूरदर्शिता की आवश्यकता है। यह लोग जब प्रान्तिय सरकार तथा केन्द्रिय सरकार में प्रतिनिधि चुने जाते हैं तो यह अनुभव उनके लिये बहुत लाभदायक होता है और फिर वह इन संस्थाओं में भी सफलता पूर्वक कार्य कर सकते हैं।

मतदाताओं को मतदेने के अधिकार का ज्ञान होना:— केन्द्रिय सभा सारे राज्य के विषयों से सम्बन्ध रखती है और प्रान्तिय सभा का सम्बन्ध प्रान्त सम्बन्धी बातों से होता है। साधारण व्यक्ति जब तक कि वह पढ़ा लिखा न हो उसको पूरे रूप से ज्ञान नहीं हो सकता है कि इन सभाओं में उसके चुने हुए प्रतिनिधि ठीक प्रकार से अपवा अपना कार्य कर रहे हैं या नहीं। परन्तु स्थानीय बातों का प्रभाव उसके जीवन पर तुरन्त ही पड़ता है। पढ़ा लिखा न होने पर भी उसको यह ज्ञान हो जाता है कि स्थानीय संस्थाओं में ठीक प्रकार से कार्य हो रहा है या नहीं। यदि प्रबन्ध ठीक प्रकार से नहीं हो रहा है तो उसको यह ज्ञान होता है कि मत देते समय उसने योग्य पुरुष के पक्ष में वोट नहीं दिया और इस प्रकार उसको मत देने के अधिकार का महत्व मालूम होता है। भविष्य में जब कभी इस प्रकार का अवसर प्राप्त होता है तो वह सोच विचार कर और पूरे रूप से देख भाल कर वोट देता है। इस प्रकार स्थानीय स्वराज्य व्यक्ति को नागरिकता का पाठ पढ़ाती है।

लोगों में सन्तोष की भावना उत्पन्न होना:— स्थानीय संस्थाओं का प्रबन्ध केन्द्रिय सरकार द्वारा भी हो सकता है, परन्तु केन्द्रिय

शासन को स्थानीय क्षेत्र के लोगों की आवश्यकताओं का इतना अधिक ज्ञान नहीं होता है जितना कि वहां के लोगों को अपनी आवश्यकताओं का ज्ञान हो सकता है। इस कारण लोगों में अशान्ति उत्पन्न होती है। वहाँ के लोगों के हाथ में ही कार्य छोड़ देने से केन्द्रिय शासन का भार कम हो जाता है और वहां के लोगों में असन्तोष की मात्रा कम हो जाती है।

व्यय कम होना और अपने पैरों पर खड़ा होने की शिक्षा देना:—स्थानीय सरकार होने के कारण व्यय में भी कमी की जा सकती है। जिन कार्यों के लिये केन्द्रिय शासन को रुपया खर्च करना पड़ता है और कई कर्मचारी नियुक्त करने पड़ते हैं उन्हीं कार्यों को वहां के लोग अपनी इच्छा से बिना वेतन लिये कार्य करने के लिये तैयार हो जाते हैं। मौहल्लों में सफाई रखना सरकार के लिये इतना ही आवश्यक है जितना कि वहां के नागरिकों के लिये। यदि लोग इसका महत्व समझ जायें तो वह स्वयं गन्दगी नहीं करेंगे और सफाई के दरोगा की आवश्यकता ही नहीं रहेगी, परन्तु यदि लोगों को इसके महत्व का ज्ञान ही नहीं है तो सफाई के दरोगा भी गलियां साफ नहीं रख सकते। स्थानीय सरकार लोगों को अपने पैरों पर खड़ा होने की शिक्षा देती है। सब लोग अपने राजनैतिक जीवन की आवश्यकतायें जानते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि लोगों में इतनी जिम्मेदारी आजाय कि वह स्वयं बिना किसी भय के उन्हें पूरा करने का प्रयत्न करें। इस प्रकार के विचार तभी उत्पन्न होते हैं जब कि स्थानीय मामलों की जिम्मेदारी धीरे धीरे स्थानीय लोगों के हाथ में सौंप दी जाती है।

सफल स्थानीय स्वराज्य बनाने के साधन

लोगों में नागरिकता की भावना होना:—व्यक्ति का नैतिक चरित्र का स्तर ऊंचा होना चाहिये। वहां के लोगों में अधिकार और कर्तव्यों का ज्ञान होना चाहिये। इसके बिना संस्था के निर्माण में सफलता नहीं मिल सकती।

लोगों में अपने से सम्बन्धित कार्यों में रुची रखनाः— स्थानीय स्वराज्य की सफलता सत्य और प्रबल लोक मत पर ही निर्भर रहती है। जनता की स्थानीय स्वराज्य की संस्थाओं की नीति की आलोचना स्वतन्त्रता से होनी चाहिये। जनता को भी अपने से सम्बन्धित कार्यों में भी रुची रखनी चाहिये।

मतदाताओं में योग्यता होनाः—सदस्यों का निर्वाचन करते समय मतदाताओं का उच्च दृष्टिकोण होना चाहिये, उनको मत देते समय किसी प्रकार का पक्षपात नहीं करना चाहिये। योग्य व्यक्तियों को ही सदस्य निर्वाचित करना चाहिये।

केन्द्रिय सरकार का हस्तक्षेप न होनाः—जहां तक हो सके स्थानीय स्वराज्य को पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये जिससे उसमें उत्तरदायित्व उत्पन्न हो। केन्द्रिय सरकार के अधिक हस्तक्षेप से उत्तरदायित्व कम होता है और फिर प्रबन्ध खराब होने लगता है। केन्द्र को उसी समय हस्तक्षेप करना चाहिये जब कि स्थानीय संस्थायें गलत मार्ग पर जा रही हों और सार्वजनिक हित के स्थान पर जनता पर अत्याचार कर रही हों।

भारतवर्ष में स्थानीय स्वराज्य संस्थाएंः—भारत में स्थानीय स्वराज्य संस्थाएं निम्नलिखित हैं। हर एक राज्य में २० हजार से अधिक जन संख्या वाले नगरों में म्युनिसिपल कमेटियां, १० हजार से २० हजार तक जन संख्या वाले कस्बों में टाउन एरिया कमेटी (Town area Committee) और ५ हजार से १० हजार तक जन संख्या वाले छोटे कस्बों में नोटीफाइड एरिया कमेटी (Notified area Committee) स्थापित है। ये संस्थाएं अपनी अपनी सीमाओं के अन्दर शिक्षा, पानी, प्रकाश, सड़कों, मराडियों, आदि का प्रबन्ध जनता द्वारा करती है।

डिस्ट्रिक्ट बोर्डः—(District Board) जो काम नगरों में म्यु-

निसिपल कमेटियां कर रही हैं लगभग वह ही काम जिले भर की सुविधा के लिये डिस्ट्रिक्ट बोर्ड कर रही है।

ग्राम पंचायतः—हिन्दुस्तान में ८० फी सदी लोग गाँव में रहते हैं और खेती करते हैं। हर एक गाँव का प्रबन्ध वहाँ की पंचायत द्वारा होता था। प्राचीन समय से अंग्रेजी राज्य के आरम्भ तक गाँव का प्रबन्ध पंचायत द्वारा काफी सफलतापूर्वक होता था। अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान का आर्थिक ढाँचा बदल दिया, उनका सारा ध्यान शहरों की उन्नति पर था। गाँव की आर्थिक स्थिति गिर गई, पंचायत का महत्व जाता रहा। शहर और गाँव के बीच में दीवारें खड़ी कर दी गई थीं।

पिछले ३० वर्ष की योजनायेंः—अंग्रेजी राज्य में पिछले तीस वर्षों में गाँव के विकास के लिये भिन्न भिन्न उपाय किये, परन्तु उनसे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। ग्राम जीवन सरकारी कार्यों के समान विभिन्न विभागों में विभाजित नहीं थे। अंग्रेजी राज्य में जब सरकार में कितने ही विभागों के लोग अपने अपने काम के लिये गाँव में पहुँचते थे तो उसका मानसिक प्रभाव गाँवमें गड़बड़ी उत्पन्न करता था! दूसरे यह सारे सुधार केन्द्र या प्रान्त के द्वारा उन पर लागू किये जाते थे। इस कारण वह यह नहीं समझते थे कि यह कार्यक्रम उनके अपने भले के लिये हैं और उनमें इसके प्रति रुची उत्पन्न नहीं होती थी। वर्तमान समय में हर गाँव में पंचायत स्थापित करने की योजनायें बनाई जा रही हैं जिससे कि वहाँ का प्रबन्ध सुधरे और "अपनी सहायता आप करो" इस नीति के आधार पर उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने का प्रयत्न हो रहा है।

श्रेष्ठतर जीवन की इच्छा उत्पन्न करने का उपायः—गाँव में स्थायी सुधार करने के लिये जा रहे हैं वह उनके अपने भले के लिये हैं उनकी जिम्मेवारी स्वंय उन्हीं को सौंपनी चाहिये जिससे वह यह

समझें कि ये उनके अपने काम हैं। इसी प्रकार जिन कार्यक्रमों में गाँव का धन न लग कर पूरी तरह सरकारी रुपया लगेगा, वे कार्यक्रम भी कम समय तक चलने वाले सिद्ध होंगे। इन सब का उद्देश्य यह है कि हम ग्रामवासियों में श्रेष्ठतर जीवन की इच्छा उत्पन्न कर दें।

अपनी सहायता आपः—अपनी सहायता आप की भावना को प्रोत्साहन देने के लिये पंचवर्षीय योजना में १५ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। यह सहायता स्वयं सेवी संस्थाओं ग्राम पंचायत आदि की मार्फत ऐसे कार्यों के लिये दी जाती हैं जिसमें गाँव वालों का सामूहिक कल्याण होता है, जैसे पीने के पानी की व्यवस्था, कृषि सम्बन्धी सुधार का स्थायी कार्य, गाँव की सफाई सम्बन्धी स्थायी योजनायें, गाँव की सड़कें जिसमें पुल और पानी की नालियां भी सम्मिलित हैं, जहां स्कूल और चिकित्सालय हों और उनके भवन अच्छे न हों तो उनके भवनों का सुधार, सामान रखने के गोदामों का निर्माण यदि वह सार्वजनिक उपयोग में आ सकते हों और सामूहिक विकास योजनाओं में विद्यार्थियों का सहयोग प्राप्त करने की योजना, इस सम्बन्ध में जनता का सहयोग, श्रम, धन, अथवा सामग्री के रूप में हो सकता है और इस प्रकार गांववालों को यह वहम नहीं होगा कि यह सुधार उनके गले मढ़ दिये गये हैं। उनके सहयोग के कारण उनमें श्रेष्ठतर जीवन की इच्छा उत्पन्न होगी।

सामूहिक विकास योजना का उद्देश्यः—इसका उद्देश्य स्थानीय जन-शक्ति को संगठित कर ग्राम जीवन को सभी विषयों में उन्नति करने के लिये जनता या क्रियात्मक सहयोग प्राप्त करना है। खेती बाड़ी सम्बन्धी के मामले, यातायात, शिक्षा, स्वार्थ, पूरक रोजगारी, मकान बनाने के काम तथा समाज सेवा इस कार्यक्रम में आ जाते हैं।

कार्यकर्ता की नियुक्तिः—इस कार्यक्रम की देखभाल के लिये प्रति पाँच गांव के पीछे एक कार्यकर्ता रक्खा जायगा, अन्य कार्यों के

अतिरिक्त वह इस बात का भी प्रयत्न करेगा कि गांवों में स्वास्थ सहकारिता आन्दोलन को बल मिले। यह भी उद्देश्य होगा कि प्रत्येक गाँव अथवा ग्राम समूह में कम से कम एक बहुमुखी कार्य करने वाली एक सहकारी समिति अवश्य स्थापित हो जाये।

सामुहिक विकास का विस्तारः—अधिक साधन न होने के कारण वर्तमान समय में पचपन सामुहिक विकास योजनाएं जारी है। इनमें से प्रत्येक लगभग ३०० गाँवों में फैली हैं जिनका क्षेत्रफल लगभग ४५० से ५०० वर्ग मील तक, खेतीवाली जमीन लगभग १५०००० एकड़ और आबादी लगभग २,००,००० है। प्रत्येक योजना क्षेत्र ३ विकास मंडलों में बाँटा गया है। प्रत्येक विकास मंडल में लगभग सौ गांव हैं और साठ हजार से ७० हजार तक आबादी है। प्रत्येक विकास मन्डल को पुनः ५-५ गांवों के समूहों में बांटा गया है और इनमें से प्रत्येक ग्राम एक-एक कार्यकर्ता की देख रेख में रहेगा जो कि विलेज लेवर वरकर कहलाता है। दूसरी पाँच साला योजना में यह सामाजिक विकास कार्यक्रम तमाम भारत में लागू कर दिया जायगा और इस प्रकार जड़ से एक नये भारत का निर्माण होगा।

राष्ट्रिय विस्तार सेवायेंः—अधिक अन्न उपजाओ पड़ताल कमेटी ने प्रस्ताव किया था कि एक ऐसे राष्ट्रिय विस्तार संघठन का निर्माण होना चाहिये, जो कि प्रत्येक किसान के पास पहुँच सके और देहाती जीवन के सम्पूर्ण विकास में सहायक हो सके। उस कमेटी ने जो कार्यक्रम सुझाया था। उसके अनुसार केन्द्रिय सरकार इस तरह की विस्तार सेवायें व्याप्त हो जायेंगी। हमारी योजना में इसे जगह दी गई है। योजना के कार्यकाल के पांच वर्षों में १,२०,००० गांवों को ये सेवायें प्राप्त हो सकेंगी। अर्थात् देश के लगभग एक चौथाई गांव इससे लाभ उठा सकेंगे। केन्द्रिय तथा राज्यों की सरकारें वर्तमान सेवाओं का पुनः संघठन तथा सुधार करने और उन्हें समुचित शिक्षा देने के लिये एक विस्तृत कार्यक्रम बनायेंगी। इस तरह के विस्तार संघठन से ग्रामों में

होने वाले कार्य को विशेषत कृषि उत्पादन बढ़ाने के कार्य को बहुत बड़ी प्रेरणा मिलेगी।

विद्यार्थियों का कर्तव्यः—नये भारत के निर्माण के लिये हमें केवल देहात की समस्याओं को समझना ही नहीं है बल्कि देहातियों के मनोविज्ञान को समझ कर उन्हें उनकी कठिनाइयों में ठीक सलाह देनी है और गाँव वालों में विश्वास प्राप्त कराना है। यह जभी सम्भव है जब कि हम स्वयं साधारण दर्जे का काम करें और इस प्रकार अपनी सहायता आप की भावना को प्रोत्साहन दें। हमको गाँव में जाकर ऐसे साधारण कार्य करने चाहियें जो गांव वालों के लिये लाभदायक सिद्ध हों और इसी नीति से समाज की स्थिति सुधरेगी और एक नये भारत का निर्माण होगा।

Free India on the march. Let us pledge ourselves to mobilize all our resources for the mighty adventure of building up new India. Let us work and build together, bringing reward to working hands, food to the hungry, shelter to the homeless. Let us change the face of our country, make its fields sway under golden corn, harness the life-giving waters of its many rivers to the service of man and turn the wheels of industry in town and country to provide plenty for all. Let us lend force and drive to the great development schemes by our combined work and savings and strengthen our freedom, and ensure the prosperity of our motherland for ourselves and those that come after us. Put your savings to work for your and nations welfare.

अध्याय सतरहवां

जनमत (Public Opinion)

You can fool one man, you can fool some men,
but you cannot fool all men for all time to come.

आचार्य ब्राईस ने अपनी पुस्तक आधुनिक प्रजातन्त्र में जनमत की परिभाषा करते हुए लिखा है कि समाज तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

उच्चकोटि के मनुष्यों का महत्वः—प्रथम तो उच्चकोटि के मनुष्य हैं जो कि बड़े २ विश्व विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करके लेखक, सम्पादक, संसद के सदस्य और इस प्रकार के दूसरे पदों पर कार्य करते हुए समाज सेवा कर रहे हैं। इन लोगों में दो बातें पाई जाती हैं। पहली तो विद्या तथा दूसरी नई नीति निर्माण करने की शक्ति (Initiative) और अपनी बुद्धि के द्वारा वे ऐसे सुझाव जनता के आगे रखते हैं जिनसे कि समाज की उन्नति हो।

मध्यम श्रेणी के लोगों का महत्वः—दूसरे प्रकार के लोग मध्यम श्रेणी के मनुष्य हैं जिनमें विद्या तो अवश्य है परन्तु नीति निर्माण की योग्यता नहीं होती है। वे राजनैतिक क्षेत्र में भाग नहीं लेते हैं किन्तु राजनैतिक विषयों में रुची अवश्य रखते हैं। ये लोग सभाओं में सम्मिलित होते हैं और पत्रों द्वारा देशोन्नति से सम्बन्धित नई बातों का जो प्रचार होता है उन पर विचार विमर्श करते हैं। और जिन २ कारणों से उन सुझावों का निर्माण होता है उन पर सोच विचार करके अपने अनुभव तथा बुद्धि के द्वारा उस नीति में न्यूनाधिक परिवर्तन करते हैं। नीति का निर्माण तो नेता लोग करते हैं, परन्तु मध्यम श्रेणी के लोग उस नीति को अपने अनुभव की कसौटी पर कस कर उसे एक नवीन रूप प्रदान कर देते हैं। ये लोग विशेषरूप से किसी न किसी दल के सदस्य होते हैं परन्तु वे दलबन्दी के झगड़ों

में इतने अधिक नहीं पड़ते कि उनके आगे सत्य को भूल जाय, वे नीति के गुण और अवगुण दोनों पर विचार करके अपनी अनुमति प्रगट करते हैं। ब्राईस साहब (Bryce) लिखते हैं कि "जो वे सोचते और महसूस करते हैं वह ही राष्ट्र की अनुमति है, उसी को जनमत (Public Opinion) कहते हैं।

साधारण जनता की स्थिति:—तीसरी श्रेणी के क्षेत्र में वे साधारण मनुष्य हैं जो कि पढ़े लिखे न होने के कारण न तो उनमें बुद्धि होती है और न नीति निर्माण की योग्यता। न तो वे सभाओं में जाकर भाषण सुनते हैं और न समाचार पत्र ही पढ़ते हैं। और वे राजनैतिक विषयों में भी रुची नहीं रखते। उनकी स्वयं की कोई राय नहीं होती। जहां वे रहते उनके आस पड़ौस के लोगों की या जिस जगह वे काम करते हैं वहां की राय को अपना लेते हैं, वे न तो किसी राय का निर्माण करते हैं और न उस पर किसी प्रकार का प्रभाव ही डालते हैं, किन्तु उन लोगों की संख्या अधिक होने के कारण राजनीतिक दल उन्हें अपने सदस्य बना लेते हैं जिससे दल की शक्ति बढ़ जाती है और ये लोग दल की नीति को ग्रहण करके उस दल के मुख्य सिद्धान्तों को स्वीकार कर लेते हैं।

जनमत का रूप

अल्प संख्या के लोगों का खुशी खुशी बिना दबाव के स्वीकार करना:—आचार्य लावेल साहब अपनी पुस्तक Public Opinion and Popular Government में लिखते हैं कि ऐसा कोई सुझाव नहीं होता है जिसको कि सब लोग सर्व सम्मति से स्वीकार कर लें। हरेक सुझाव में दो दल हो जाते हैं, परन्तु वही सुझाव जनमत कहा जा सकता है जिसे कि अल्प संख्या के लोग दबाव या भय के कारण नहीं बल्कि खुशी २ स्वीकार करें। विरोधी दल को यह विश्वास दिलाना आवश्यक है कि सुझाव सारी जनता के लाभ का है किसी विशेष दल

के हित का नहीं। अभी वे उसकी अच्छाइयों को समझ नहीं पाये हैं, परन्तु भविष्य में या तो उनको उसके गुणों का ज्ञान हो जावेगा, या उन लोगों को जिन्होंने उसे स्वीकार किया है उन्हें अपनी गलती का ज्ञान हो जायेगा जिससे या तो वे उसे रद्द कर देंगे या उसमें आवश्यक परिवर्तन कर देंगे। प्रजातन्त्र का मूल सिद्धान्त यह है कि लोगों पर दबाव के द्वारा नहीं बल्कि उनकी राय और सम्मिति के द्वारा कार्य हो। जनमत भी इसी बात पर जोर देती है क्योंकि जनमत के आधार पर बने हुए राज्य को प्रजातन्त्र राज्य कहते हैं।

जनमत और सेक्शनल ओपिनियन में अन्तरः— जनमत (Public Opinion) और सेक्शनल ओपिनियन (Sectional Opinion) में बहुत अन्तर है। जनमत के लिये यह आवश्यक है कि हरेक विचार का ध्येय सारी जनता की भलाई तथा सुधार करना हो परन्तु जब उसमें किसी विशेष व्यक्ति अथवा दल की भलाई का ध्येय रहता है तब वह जनमत नहीं किन्तु सेक्शनल ओपिनियन (Sectional opinion) हो जाता है।

अल्प संख्या के लोगों की धर्म, भाषा सम्बन्धी विषयों में परिवर्तन के समय उनकी स्वीकृति की आवश्यकताः— जब कोई समाज भिन्न भिन्न वर्गों में विभाजित होती है जिनमें कि धर्म संस्कृति तथा भाषा इत्यादि विषयों में काफी भेद भाव होता है। ऐसी स्थिति में यदि अल्प संख्या के वर्ग के लोगों में धर्म, संस्कृति और भाषा सम्बन्धी विषयों में परिवर्तन लाना आवश्यक हो तो यह अल्प संख्या के लोगों की स्वीकृति प्राप्त होने पर ही कार्यान्वित किया जा सकता है। यदि बहुमत दल अपनी संख्या के आधार पर ही परिवर्तन लाये तो यह जनमत नहीं है क्योंकि अल्प संख्या के लोग उसको स्वीकार नहीं कर रहे हैं। इस सबका तात्पर्य यही है कि वास्तविक जनमत वही है जिसमें दबाव बिलकुल न हो।

जनमत के लिये दृढ़ विश्वास होनाः— जनमत के लिये संख्या

पर इतना महत्व नहीं है जितना कि दृढ़ विश्वास पर किसी विषय पर यदि उनन्चास आदमी पूर्ण तथा दृढ़ विश्वास रखते हैं और इक्कावन आदमियों का विश्वास अधूरा है और उस पर वे हिचकिचाहट रखते हैं तो उस पर इक्कावन आदमियों की राय की अपेक्षा उनन्चास आदमियों की राय का ज्यादा महत्व है क्योंकि इनकी ठोस राय न होने के कारण कम संख्या वाले लोग इन्हें अपने पक्ष में कर लेंगे। इस कारण वे व्यक्ति जो कि किसी बात पर दृढ़ विश्वास रखते हैं उनका अधिक महत्व रहता है।

निपुण लोगों की राय:—वे व्यक्ति जिन्होंने किसी विषय पर विशेष ज्ञान प्राप्त किया हो और उसमें निपुण होते हैं तो उन लोगों की राय का अधिक महत्व होता है।

लोकमत के निर्माण के निम्नलिखित साधन

शिक्षा सम्बन्धी संस्थएें:—लोक मत के स्थापित करने के लिये सर्व प्रथम शिक्षा-प्रचार की आवश्यकता है। शिक्षा व्यक्ति को उचित अनुचित का ज्ञान प्रदान करती है और तर्क तथा बुद्धि उस ज्ञान को प्रकट करने की शक्ति है। शिक्षा तीन प्रकार की है, प्रथम तो प्राइमरी शिक्षा जो कि अनिवार्य होनी चाहिये जिससे हर एक व्यक्ति को लिखना पढ़ना तथा उचित, अनुचित के भेद भाव का ज्ञान हो जाये। व्यक्ति को नागरिकता के कर्तव्य की शिक्षा देना आवश्यक है। हर एक व्यक्ति को अपने सदस्य चुनने की योग्यता होनी चाहिये। चुनाव के समय में राजनैतिक दल जो आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक कार्यक्रम जनता के सामने रखते हैं उसको पूरे रूप से समझने की योग्यता होनी आवश्यक है जिससे लाभ दायक या हानिकारक कार्य में अन्तर मालूम हो सके।

सैक्यडरी एज्युकेशन का अच्छा प्रबन्ध होना भी आवश्यक है। लोकमत में मध्य श्रेणी के लोगों की राय का अधिक महत्व है।

यदि शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध हो तो मध्य श्रेणी के लोग लोकमत स्थापित करने में अधिक भाग ले सकते हैं और साधारण व्यक्ति पर अपना प्रभाव डाल कर उन्नतिशील राजनैतिक दल के पक्ष में मत देने के लिये बाध्य कर सकते हैं। यदि शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध नहीं हो तो लोकमत को हानि पहुँचती है।

विश्व-विद्यालय की शिक्षा का भी अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये। यहीं से जो लोग निकलते हैं वह भविष्य में जाकर नेता बनते हैं और राज्य का भविष्य उन्हीं लोगों के हाथ में होता है। उदारता, स्नेह, सहिष्णुता, स्वार्थ हीनता, और कर्तव्य परायणता के भाव विद्यार्थियों में उत्पन्न करने चाहिये जिससे वह देश को अच्छे सुझाव द्वारा उन्नति के मार्ग में आगे ले जायें।

प्रेस व प्रकाशन केन्द्रः—प्रजातन्त्र में जनता की राजनैतिक शिक्षा के लिये समाचार पत्र अधिक महत्व रखते हैं। प्रजातन्त्र जनता की स्वीकृति पर निर्भर है। समाचार पत्र द्वारा सरकार को यह ज्ञान हो जाता है कि जनता उनकी नीति को स्वीकार या अस्वीकार कर रही है। समाचार पत्र जन-भावना को प्रकाशित करते हैं और जन-भावना भविष्य में लोक मत का रूप धारण कर लेती हैं। समाचार पत्रों का महत्व उसी समाज में अधिक होता है जहां पर कि सारी जनता पढ़ी लिखी हो, उनमें उत्तरदायित्व हो। समाचार पत्रों का ध्येय सरकार की गलतियाँ बतलाकर उसमें सुधार कराना है न कि सरकार को बदनाम कराना है, ऐसा कोई भी शब्द उनको प्रयोग में नहीं लाना चाहिये जिससे लोगों पर खराब प्रभाव पड़े। इनका दृष्टिकोण राष्ट्रीय होना चाहिये। इस प्रकार यदि प्रेस इन बातों पर ध्यान दे तो लोकमत जिसको वह जन्म देती है अधिक उपयोगी सिद्ध होती है। प्रेस को सरकार व पूंजीपतियों के प्रभाव में नहीं पड़ना चाहिये उनको स्वतन्त्रता से लोकमत का निर्णय करना चाहिये।

सभायें तथा समुदायः—सार्वजनिक और नीजी सभाओं द्वारा

पने विचार अन्य व्यक्तियों तक पहुंचाये जा सकते है। प्रत्येक देश के लिये इस प्रकार की सभाओं की आवश्यकता है। भिन्न २ समुदाओं के विचार जो लोकमत को जगा देने में सहयोग देते हैं इस प्रकार की सभाओं द्वारा प्रकाशित होते हैं।

रंग मंचः—रंग मंच का लोकमत में अधिक महत्व है। श्री निवास शास्त्री अपनी पुस्तक "कमला लैक्चर" में लिखते हैं कि प्रजातन्त्र राज्य में सार्वजनिक सभा का अधिक महत्व होता है इन सभाओं द्वारा सरकार को यह ज्ञान हो जाता है कि लोग उनकी नीति को स्वीकार या अस्वीकार कर रहे हैं और उनकी भावनाएं क्या हैं। इनके द्वारा लोगों को राजनैतिक शिक्षा भी प्राप्त होती है। सभाओं द्वारा हर एक राजनैतिक दल के व्यक्ति अपने दल के भावों को प्रगट करता है जिनका कि प्रभाव व्यक्तियों पर पड़ता है। जनता उस प्रकार के भावों के प्रति रुची उत्पन्न करती है जो कि वह स्वीकार करते हैं और बुद्धि द्वारा उनकी समझ में आ जाते हैं और दूसरे प्रकार के भाव जिनको कि वह स्वीकार नहीं करते हैं उन पर वह ध्यान नहीं देते हैं, इस प्रकार सभाओं द्वारा लोकमत की स्थापना होती है।

राजनैतिक दलः—राजनैतिक दल भी जनमत स्थापित करने के लिये बहुत आवश्यक हैं। साधारण मनुष्य के पास न तो इतना समय है और न ही उसकी इतनी बुद्धि है कि वह जनता से सम्बन्ध रखने वाले विषयों पर कोई निश्चित राय कायम कर सके। राजनैतिक दलों के द्वारा ही उसको यह मालूम होता रहता है कि देश में क्या हो रहा है और उसको राजनैतिक दल के लोगों के भाषणों द्वारा ही उसको मुख्य विषयों की भिन्न २ बातों का ज्ञान होता रहता है।

अध्याय अठारहवां

राजनैतिक दल

उम्मीदवार तथा मताधिकारी के बीच की कड़ी:—साधारण मताधिकारी में न इतना ज्ञान होता है और न उसमें भिन्न २ उम्मीदवारों में से ठीक उम्मीदवार चुनने की योग्यता ही होती है और प्रायः ऐसा होता है कि वह उम्मीदवार के विषय में निर्वाचन होंने से पहले अनभिज्ञ होता है। इसके अतिरिक्त मताधिकारी को किस प्रकार विश्वास हो कि निर्वाचन समय के वचनों का पालन किया जायगा और वह उस नीति का पालन करेगा जिसके लिये वह खड़ा हुआ है। इस विषय में उसे राजनैतिक दलबन्दी के संगठन सहायता देते हैं। जो मताधिकारी को बतलाते हैं कि वह अमुक उम्मीदवार को अपना मत दे और वह उसके निर्वाचन के बाद के व्यवहार के उत्तरदायित्व का भार ग्रहण करते हैं।

दलबन्दी और उनकी उत्पति:—राजनैतिक दल की परिभाषा इस प्रकार कर सकते हैं कि वह मनुष्यों का एक समुदाय अथवा संघ है जो जनता की समस्याओं पर समान विचार रखते हैं और जो अपने विश्वास के अनुसार नीति और योजना को प्राप्त करने और साथ साथ कार्य करने के लिये सहमत होते हैं। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं कि सहयोग से शक्ति आ जाती है और उद्देश्यों की पूर्ति सरलता से हो जाती है। इसके अतिरिक्त दल-बन्दियों का होना मनुष्य के स्वाभाव का फल है। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं उनको प्रतिक्रियावादी (Reactionary) कहते हैं, कुछ इस प्रकार के होते है। जो वर्तमान संस्थाओं को स्थायी रखना चाहते हैं और उनमें परिवर्तन नहीं करना चाहते हैं। वह अनुदार (Conservative) दल के होते हैं और जो सुधार चाहते हैं वे उदार दल कहलाते हैं और अन्य इस प्रकार के होते हैं जो तुरन्त वर्तमान प्रणालियों में आमूल परिवर्तन चाहते हैं वे क्रान्तिवादी

(Radical) कहलाते हैं। यदि कार्य को वास्तविक रूप देने के लिये पहले दोनों दल तथा अन्त के दोनों दल मिल कर कार्य करने को तत्पर हो जायें तब जनता का मत दो दलों में विभाजित हो जायगा। और यह मनुष्य के स्वभाव के अनुसार होगा।

राजनैतिक दलों के कर्त्तव्य

राजनैतिक प्रश्न उत्पन्न करनाः—राजनैतिक दल जनमत को शिक्षित, प्रतिनिधियों को छाँटने में तथा सरकार के कार्यों के करने में बड़ी सहायता देते हैं। सबसे पहले वह राजनैतिक प्रश्न उत्पन्न करते हैं और उनको जनता के सामने लाते हैं और जनता के ध्यान को उसी ओर केन्द्रित करते हैं, जिसके निर्णय की आवश्यकता होती है। वह इस प्रकार जनता के मस्तिष्क की उस अस्पष्टता को दूर करते है जो समस्याओं की विभिन्नता से और अधिकता से उत्पन्न हो जाती है।

मतदाताओं को राजनैतिक शिक्षा देना—दूसरा वह राजनैतिक शिक्षा तथा प्रचार (Propaganda) का बड़ा महत्वपूर्ण साधन है। प्रत्येक दल अपने कार्य का कार्य-क्रम जनता के सामने रखता है, जिसे दल का प्लेट फार्म कहते हैं। मताधिकारियों को अपने विचारों के अनुसार करने के लिए भिन्न २ दल जनता की समस्याओं को भिन्न २ दृष्टिकोणों से उपस्थित करते हैं और अपने दृष्टिकोण में उनको रुची दिलवाते हैं। ऐसा विशेषतया निर्वाचन के समय किया जाता है जब कि किसी दल की विजय उसके प्रचार की शक्ति तथा अपने कार्य-क्रम से जनता में विश्वास उत्पन्न करने की योग्यता पर निर्भर रहती है।

राजनैतिक दलों का अपने उम्मीदवारों के प्रति कार्यों का उत्तरदायित्व होना—तीसरा वह उम्मीदवारों को भिन्न भिन्न पदों के लिये छाँटते हैं, मनोनीत कराते तथा उनका निर्वाचन कराते हैं और यदि वह निर्वाचित हो गये तो उनको राजनैतिक व्यवहार के उत्तरदायित्व होते हैं। दल (Party) की उन्नति तथा अवनति इस

बात पर निर्भर है कि उसके उम्मीदवार अपने कर्तव्य का किस प्रकार पालन करते हैं।

सरकार संचालन अथवा विरोध करना:—पार्लियामेंटरी सरकार में यदि कोई राजनैतिक दल बहुमत में व्यवस्थापिका सभा में आ जाय तो ऐसी स्थिति में बहुमत दल सरकार का संचालन करता है। देश के शासन के लिये अपने दल के योग्य सदस्यों को उत्तरदायित्व पूर्ण पदों पर नियुक्त किया जाता है और जनता से की गई प्रतिज्ञाओं को पूर्ण करने का साधन अपनाया जाता है। जिस दल को बहुमत प्राप्त न हो वह विरोधी दल का कार्य करता है। सरकार की नीति की आलोचना करता है। सरकार को मनमानी करने से रोकता है। विरोधी दल की आलोचना के भय से सरकारी दल हर एक काम को सोच समझ कर करता है और सरकार के कर्मचारियों को मनमानी करने से रोकता है। घूंस, पक्षपात और बेईमानी आदि दुर्गुणों से राज्य शासन को बचाने का पूरा पूरा प्रबन्ध किया जाता है। इस प्रकार पार्लियामेन्टरी सरकार में राजनैतिक दलबन्दी का अधिक महत्व है।

नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में दलबन्दी का महत्व:—नौन पार्लियामेन्टरी सरकार में अधिकारों का विभाजन होता है, इसमें, व्यवस्थापिका सभा और कार्यकारिणी, सरकार के ये दोनों अंग एक दूसरे से अलग अलग होते हैं। राजनैतिक दलों के द्वारा ही इन अंगों में एकता उत्पन्न होती है और फिर वह मिल जुल कर कार्य करती हैं। यदि राजनैतिक दल नहीं होते तो एक अंग दूसरे अंग के विरुद्ध कार्य करता और फिर सरकार का संचालन कठिन हो जाता। इस प्रकार राजनैतिक दल अंगों को एकता की लड़ में पिरोते हैं और सरकार के संचालन में सहायता देते हैं।

निर्वाचन क्षेत्र का विस्तार अधिक होना:—वर्तमान समय में हर एक व्यक्ति को मत देने का अधिकार प्राप्त है इस कारण

निर्वाचन क्षेत्र का विस्तार अधिक हो गया है इस लिये व्यक्तिगत रूप से निर्वाचन क्षेत्र में लोगों को अपने पक्ष में वोट देने के लिये प्रचार करना सम्भव नहीं है। राजनैतिक दलों ने यह कार्य अपने जिम्मे ले रक्खा है, वह सदस्यों की नियुक्ति करते हैं जहाँ आवश्यकता होती है आर्थिक सहायता देते हैं और स्वंय अपने सदस्यों के पक्ष में वोट देने के लिये अपने कर्म-चारियों द्वारा प्रचार करते हैं। इस प्रकार जो चीज के व्यक्तिगत रूप में सम्भव नहीं है वह राजनैतिक दलों के द्वारा आसानी से सफलता पूर्वक हो सकती है।

दलबन्दी के दोषः—राजनैतिक दल को प्रजातन्त्र का साधन बनने के लिये यह आवश्यक है कि उसको जन हित और समाज सेवा का विचार सबसे उच्च रखना चाहिये। जब ये दल अपना अथवा किसी एक वर्ग का हित सामने रखते हैं, समस्त राष्ट्र के हित की अपेक्षा दल के स्वार्थ की प्रधानता देते हैं तथा अपने स्वार्थ साधन के लिये अनुचित उपायों को प्रयोग में लाते हैं तो वह पथ भ्रष्ट हो जाते हैं और जन हित के सहायक न होने के कारण अपना महत्व खो बैठे हैं। इन्हीं कारणों से लेखकों ने दलप्रथा (Party System) को दूषित बतलाया है।

राजनैतिकदल के आधार पर, न कि योग्यता के आधार पर, पदों की नियुक्तिः—कैबिनट गवर्नमेण्ट में सरकार उसी दल की बनती है जिसकी कि व्यवस्थापिका सभा में बहुमत हो, ऐसी सरकार में दलबन्दी इतनी दृढ़ होती है कि अल्प संख्या के किसी भी व्यक्ति को सर-कार में किसी भी पद पर नियुक्त नहीं किया जाता है चाहे वह पुरुष योग्य, चतुर और अनुभवी ही क्यों न हों। इसका परिणाम यह होता है कि धारा सभा में जिनके पास पद हैं और दूसरे विरोधी दल जो कि पद ग्रहण करने की इच्छा करते हैं, व्यवस्थापिका सभा इन दोनों की संग्राम भूमि बन जाती है और अपने दल की उन्नति के आगे देश की भलाई भूल जाते हैं।

योग्य पुरुषों का महत्व कम होना:—दल बन्दी में स्वतन्त्र विचार वाले तथा अच्छे चरित्र के पुरुष वर्तमान समय के राजनैतिक दलों के अनुशासन के अन्तर्गत अपने को नहीं रख सकते और इसका परिणाम यह होता है कि वह अपने भाग के लोगा की सेवा करने में असफल रहते हैं।

दल के स्वार्थ के आगे देश की उन्नति को भूल जाना:—दलबन्दी वास्तविकता की अपेक्षा ऊपरी बातों पर अधिक ध्यान देती है। राज्य भिन्न भिन्न विरोधी दलों में बंट जाता है जो कि देश सेवा करने के बजाय आपस में एक दूसरे में लड़ते रहते हैं। लोगों के मस्तिष्क में पक्ष-पात हो जाता है, दूसरे दलों से घृणा हो जाती है और अपने दल के स्वार्थ के आगे देश कीउन्नति को भूल जाते हैं।

झूठा प्रचार करना:—वे प्रायः झूठा प्रचार करके जनमत को अनुचित रास्ते पर ले जाते हैं और वास्तविकता को जनता से छिपाते हैं। समस्याओं का निर्णय उनकी वास्तविकता के अनुसार नहीं होता अपितु अधिक से अधिक मत प्राप्त करने के आधार पर किया जाता है और इससे व्यवस्थापिका सभायें दूषित हो जाती है।

पक्षपात की ओर अग्रसर होना:—दल बन्दी पक्षपात की ओर अग्रसर होती है और उसके कारण ही अयोग्य व्यक्तियों को पद दिये जाते हैं और योग्य व्यक्तियों का विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। शक्ति ऐसे मनुष्यों के हाथ में आती है जो अपनी उन्नति के लिये ही उस शक्ति का प्रयोग करते हैं।

सारांश:—कुछ व्यक्तियों ने दल बन्दी को बजाय अच्छे के बुरा बतलाया है। परन्तु इसके बिना प्रजातन्त्र पूरे रूप से संघठित नहीं हो सकता और न राज्य प्रबन्ध ही चलाया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि इसके अन्दर बहुत से दोष है, परन्तु इनका उपाय यही है कि जनमत को शिक्षित किया जाय और जनता के चरित्र का सुधार करे तो उसके दोष दूर हो सकते हैं।

अध्याय उन्नीसवाँ

राष्ट्रवाद, साम्राजवाद और अन्तर राष्ट्रियता

राष्ट्रवादः—राष्ट्रवाद किसे कहते हैं इसकी परिभाषा करना कठिन है। इसमें तीन निम्नलिखित विचार सम्मिलित हैं।

१. स्वतन्त्र होने की भावनाः—जब कि एक राज्य पर किसी निरंकुश राजा का अधिपत्य हो या किसी राज्य में विदेशी लोग राज्य कर रहे हों-या तीन या चार राष्ट्र मिलाकर एक केन्द्रिय शासन उस पर शासन कर रहा हो तो ऐसी स्थिति में यदि राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न हो गई है तो यह भावना उनको अपने देश में प्रजातन्त्र के आधार पर स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने पर जोर देती है। इंगलिस्तान में जब कि ट्युडर औरस्टुअर्ट वंश का राज्य था तो इस भावना ने राजा के अधिकारों को कम करने और प्रजातन्त्र के आधार पर राज्य स्थापित करने पर जोर दिया इसी प्रकार हिन्दुस्तान में जब कि अंग्रेजों का राज्य था, इस भावना ने लोगों को एकता की लड़ में पिरो दिया और अंग्रेजी राज्य का अन्त करके स्वतन्त्र भारत की नींव डालने पर जोर दिया। प्रथम महा युद्ध के पहले हंगरी व आस्ट्रिया एक राज्य था जिसमें करीब चार राष्ट्र सम्मिलित थे। जब कि इस देश के लोगों में राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न हो गई तो उन्होने हर एक राष्ट्र के लोगों को अलग अलग राष्ट्र स्थापित करने पर जोर दिया और प्रथम महा युद्ध के बाद आस्ट्रिया व हंगरी बजाय एक राज्य के पाँच छोटे छोटे राष्ट्र में बंट गये, इस प्रकार राष्ट्रवाद ने अलग अलग मुल्कों में अलग अलग रूप ग्रहण किये।

२. आर्थिक स्थिति को सुधारनाः—जब कि एक राज्य स्वतन्त्र हो जाता है और वहाँ पर प्रजातन्त्र की नींव डल जाती है तो राष्ट्रवाद वहां पर ऐसी स्थिति में लोगों को आर्थिक स्थिति सुधारने पर जोर देता है। राजनैतिक स्वतन्त्रता जातियों की और राज्यों की उन्नति की

पहली सीढ़ि है, उस दिन से उन्नति शुरू होती है और जितना के उस राज्य के लोगों में राष्ट्रवाद की भावना अधिक होती है उतनी ही आर्थिक उन्नति भी तेजी से होती है। नये नये प्रकार की योजनाएं बनती हैं, पैदावार अधिक करने का प्रयत्न होता है, धन का ठीक प्रकार से बटवारा होता है, निर्धनता दूर होती है और देश की रक्षा के लिये पूरा पूरा प्रबन्ध होता है और इस प्रकार एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना होती है।

३. जातीय विशेषता:–(Race Superiority) जब कि राज्य में स्वतन्त्रता स्थापित हो जाती है और आर्थिक स्थिति सुधारने से वह एक शक्तिशाली देश बन जाता है तो राष्ट्रवाद लोगों में एक नई भावना उत्पन्न करता है। जातिय विशेषता की भावना उत्पन्न होती है और अपनी संस्कृति का अभिमान हो जाता है। वह यह विचार करते हैं कि दूसरी नसल के लोग जिनकी आर्थिक स्थिति गिरी हुई है उन देशों को विजय करके हमको उन पर अपना अधिपत्य जमाना चाहिये जिससे वह असभ्य जातियाँ हमारी संस्कृति से प्रभावित होकर आगे तेजी से उन्नति के मैदान में पग रख सकें। यह तीसरा विचार है जो राष्ट्रवाद के द्वारा उत्पन्न होता है।

पहले और दूसरे विचारों से लाभ

१ राष्ट्रों के आत्म निर्णय के अधिकार:-(Right of Self determination of Nations) जहाँ तक स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने की भावना है इस पर किसी प्रकार की आलोचना नहीं हो सकती। जिस प्रकार से कि हर मनुष्य में कुछ न कुछ गुण होते हैं इसी प्रकार राज्य में कुछ न कुछ विषेशता होती है और इन विषेशताओं के विकास के लिये यह आवश्यक है कि वह पूरे रूप से स्वतन्त्र हों। और यदि सब राज्य स्वतन्त्र हों तो वह अपनी अपनी विशेषताओं का विकास करके सम्पूर्ण मनुष्य जाति की उन्नति में सहायता करेगी।

२. अच्छाइयोंका विकासः—राष्ट्रवाद की विचार धारा ने लोगों में प्रेम, सहानुभूति, स्वार्थ-त्याग, सहयोग आदि सद्गुणों को उत्पन्न किया। राज्य की स्वतन्त्रता प्राप्त करने और अत्याचार का अन्त करने, अपने राष्ट्र का भविष्य निर्णय करने के लिये लोग हर प्रकार का बलिदान करने को तैयार रहते हैं। संस्कृति के दृष्टिकोण से राष्ट्रवाद में सद्गुण ही सद्गुण हैं बुराइयाँ नहीं।

राष्ट्रवाद के दोषः—जब कि राष्ट्रवाद में जाति और संस्कृति की विशेषता की भावना उत्पन्न हो जाती है तो यह हानिकारक सिद्ध होता है। इस भावना के कारण ही अधिकतर लोगों की राय इसके विरोध में है पक्ष में नहीं। लोगों का यह कहना कि आधुनिक काल में जितनी भी अशान्ति है उस सब का कारण राष्ट्रवाद की विचार धारा है। प्रथम तो उनका यह कहना कि हमारी जाति और संस्कृति विशेष है मिथ्या विचार है और यदि वास्तव में उनमें कुछ विशेषता है भी तो दूसरी राज्यों की स्वतन्त्रता को कुचल कर उन पर अपना आधिपत्य जमाने से उन राज्यों को कुछ लाभ नहीं होगा। वह राज्य अपनी विशेषताओं का विकास करने में असफल रहते हैं। आर्थिक स्थिती उनकी गिरजाती है। राज्यों में गलत विचार उत्पन्न होते हैं और दूसरे शक्तिशालि देश इस नीति से द्वेष भावना करने लगते हैं, वह देश दूसरे देशों पर जो कि कमजोर हैं उन पर अपना अधिपत्य जमाते हैं और इस प्रकार संसार की शान्ति भंग होती है। उन्नीसवीं और बीसवी शताब्दी में जितनी लड़ाइयां हुई, उसका मुख्य कारण (Aggressive Nationalism) अभिमान से भरी राष्ट्रियता है। अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान पर अपना आधिपत्य जमालिया और हिन्दुस्तान में अपने आधिपत्य को दृढ़ रखने के लिये हिन्दुस्तान और इंगलिस्तान के बीच में जितने देश थे उन सब राज्यों को कम या ज्यादा मात्रा में गुलामी की जंजीरों में जकड़े रखा। इसी प्रकार फ्रांस ने भी एशिया और अफ्रिका के भिन्न भिन्न

स्थानों पर उपनिवेश स्थापित कर रखे है। जर्मनी जो कि इसमें पीछे रह गया था. उसने भी जबकि वह शक्तिशाली हो गया इस नीति को अपनाया और पहले और दूसरे महा युद्ध का कारण ही Aggressive Nationalism था। आज भी दुनियाँ में अशान्ति इसी के कारण है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में यह भावना मनुष्य जाति के लिये हानिकारक है।

बुराइयों और अच्छाइयों की तुलना:—जहां तक कि पहली दो अच्छाइयों का सम्बन्ध है, इसमें कोई संदेह नहीं कि वह समस्त मनुष्य जाति के लिये किसी प्रकार से हानिकारक नहीं है। उनके द्वारा हम भिन्न भिन्न प्रकार की संस्कृतियों को स्थापित रख सकते हैं जो कि सब मनुष्य जाति की उन्नति में सहायक हो, परन्तु Aggressive Nationalism और Racialism यह अवश्य संसार के लिये हानिकारक सिद्ध हुई और यदि हमको संसार में शान्ति स्थापित करनी है तो हमें इनके विरुद्ध आवाज उठानी होगी।

साम्राज्यवाद:—जब कि एक राज्य के लोग स्वतन्त्र होकर अपने राज्य की नींव को दृढ़ कर लेते हैं और एक शक्तिशाली राज्य बन जाते हैं तो उनमें जाति या संस्कृति की विशेषता का भाव उत्पन्न होता है और तब वह दूसरे राज्य जो कि कमजोर है उन पर अपना अधिपत्य स्थापित कर लेता है। इस प्रकार की भावना को साम्राज्यवाद कहते हैं और वह देश जिन पर उनका आधिपत्य होता है उसको साम्राज्य कहते है। साम्राज्य की भावना उत्पन्न होने के निम्नलिखित कारण हैं।

१. जाति और संस्कृति की विशेषता:-जब कि राज्य शक्तिशाली हो जाते है तो उनमें अभिमान पैदा हो जाता है और वह दूसरे कमजोर देशों को विजय करके उन पर अपना आधिपत्य जमाते हैं जिससे वह अपनी संस्कृति का प्रचार कर सकें और गिरे हुए लोगों का उत्थान कर सकें। युरुप की जातियों में यह भावना उसी समय सबसे अधिक थी

जब कि राष्ट्रवाद की भावना लोगों में अधिक मात्रा में पैदा हो गई। इसका उदाहरण स्पेन, पुर्तगाल, इंगलैण्ड, फ्रांस और हॉलेन्ड है।

२. आर्थिक लाभः—दूसरा मुख्य कारण इस रीति का आर्थिक लाभ प्राप्त करना है। दूसरे देशों पर अपना आधिपत्य स्थापित लेने से वहां से कच्चा माल प्राप्त करने में सुविधा प्राप्त होती है। और फिर उस कच्चे माल का अपनी फैक्ट्रियों में सामान बना कर उन देशों में बेचने का अवसर मिलता है जिससे व्यापार की उन्नति होती है और लोग धनवान बनते हैं।

३. अधिक जन संख्या को आबाद होने का स्थानः—जब कि एक राज्य की आबादी अधिक हो जाती है जिसके लिये उस राज्य में काफी स्थान नहीं होता तो ऐसी स्थिति में दूसरे राज्यों की देख भाल करनी होती है जहाँ कि यह जाकर बस सकते हैं। १९ वीं शताब्दी में यह स्थिति जर्मनी और इटली की थी जहाँ कि आबादी की संख्या अधिक हो गई थी और लोगों को बसने के लिये दूसरे देशों की खोज करनी पड़ी। १९३६ में इटली का एबेसिनिया को विजय करने का यही कारण था कि इटली में अधिक संख्या में जो आबादी हो गई थी उसको एबेसिनिया के इलाके में लाकर बसा दिया जाय।

४. धर्म का प्रचारः—देश जीतने और साम्राज्य स्थापित करने का एक कारण अपने धर्म और संस्कृति का प्रचार करना था। भिन्न २ सरकारों ने अपनी अध्यक्षता में, मिशिनरी लोगों को दूर दूर देशों में धर्म का प्रचार करने के लिये भेजा। सोलहवीं और सतरहवीं शताब्दी में स्पेन और पुर्तगाली लोगों का हिन्दुस्तान में आने का ध्येय यहाँ से धन प्राप्त करने का नहीं था। जितना कि यहाँ पर ईसाई धर्म का प्रचार करने का था। वर्तमान काल में भी युरुप की मिशिनरी अफ्रिका, इन्डोचीन, हिन्दुस्तान और दूसरे भयंकर से भयंकर स्थानों तथा देशों तक में पाये जाते हैं जिनका कि दिखलावे के लिये बाईबल के सिद्धान्तों

का प्रचार करके गिरे हुए समाज का उत्थान करना है, परन्तु वास्तव में उनका ध्येय युरुप का इन देशों पर आधिपत्य स्थापित करना है ।

साम्राज्यवाद के निम्नलिखित दोष हैं

१. **अन्तर राष्ट्रिय झगड़ेः**—साम्राज्यवाद अभिमान का परिणाम है, और सैनिक शक्ति अधिक होने के कारण इसकी भावना उत्पन्न होती है । परन्तु इसमें अन्तर-राष्ट्रिय झगड़े होने की अधिक सम्भावना रहती है । हर एक राज्य अपनी सैनिक शक्ति अधिक करना चाहता है, एक दूसरे में द्वेष भावना उत्पन्न होती है और आपस में लड़ाईयाँ होती हैं । संसार में वर्तमान समय में अशान्ति होने का कारण साम्राज्यवाद ही है ।

२. **आर्थिक हानिः**—वह राज्य जिन पर कि अधिपत्य स्थापित किया जाता है उनकी आर्थिक स्थिति गिर जाती है । लोगों का रहन सहन गिर जाता है और वह लोग जो अपना अधिपत्य जमाते हैं, उन पर भी खराब प्रभाव पड़ता है ।

३. **स्वतन्त्रता का अन्त होनाः**—वह लोग जिन पर कि दूसरे राज्य शासन करते हैं, उन लोगों की राष्ट्रिय स्वतन्त्रता का अन्त हो जाता है और फिर वह अपने गुणों का विकास करने में असफल रहते हैं । साथ साथ इसका उन लोगों पर भी खराब प्रभाव पड़ता है जो कि दूसरों पर शासन करते है । क्योंकि स्वेच्छाचारी राज्य करने से प्रजातन्त्र का दृष्टिकोण उनमें कम हो जाता है और फिर उनके देश की उन्नति भी धीमी पड़ जाती है ।

४. **संस्कृति और जाति की विशेषता का गलत विचारः**—साम्राज्यवाद के पक्ष के लोगों में यह गलत विचार है कि उनकी संस्कृति और जाति विशेष है और इस कारण उनका यह ध्येय कि दूसरे राज्यों को जीत कर उन लोगों में अपनी संस्कृति और रीति रिवाज का प्रचार कराया जाय, गलत विचार है । यदि मान भी लिया जाय, कि उनकी

संस्कृति में कुछ विशेषतायें हैं तो यह बात जभी सिद्ध होगी, जबकि दूसरी जातियाँ उनकी संस्कृति को स्वयं खुशी खुशी स्वीकार करें, यदि शक्ति द्वारा कोई जाति अपनी संस्कृति दूसरों पर लागू करती है तो उससे यह सिद्ध होता है कि उसकी संस्कृति वास्तव में विशेष नहीं है। साथ २ यह भी बात है कि एक चीज जो एक जाति के लिये लाभदायक है तो वही चीज दूसरी जाति को इतना लाभदायक सिद्ध नहीं होगी, और यदि जबर्दस्ती से दूसरी कौम पर लागू कर दी गई तो उससे उन लोगों की नैतिक, सामाजिक और संस्कृति सम्बन्धी उन्नति रुक जायेगी। इन सबसे यह सिद्ध हो जाता है कि साम्राज्यवाद में बुराईयाँ ही बुराईयाँ है अच्छाईयाँ कुछ नहीं।

अन्तर-राष्ट्रियता:— (Inter-nationalism) वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है और यातायात की सुविधाओं ने सारे संसार को एकता की लड़ी में पिरों कर एक कुटुम्ब बना दिया है। हर एक राज्य व राष्ट्र अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ती के लिये दूसरे राष्ट्रों और राज्यों की सहायता पर निर्भर है। इसलिये एक नई विचार धारा प्रचलित हुई है जो कि अन्तर राष्ट्रियता कहलाती है। मनुष्यों को संसार भर के राष्ट्रों से परस्पर सहयोग रखने के विचार धारा का नाम अन्तर-राष्ट्रियता है।

अन्तर-राष्ट्रिय संघठन के आधार

राष्ट्रवाद का बोलबाला और साम्राज्य का अन्तः—

अन्तर राष्ट्रियता के लिये पहली बात तो यह है कि सब राज्य पूरे रूप से स्वतन्त्र हों और किसी राज्य पर दूसरे राज्य का आधिपत्य न हो। इसका अर्थ ये है कि सबसे पहले हमें साम्राज्यवाद की नीति और उपनिवेश स्थापित करके उन पर अपना आधिपत्य स्थापित लेने की नीति को छोड़ देना चाहिये। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि पहले हमें राष्ट्रियता की नीति को स्वीकार करना होगा। जिसके अनुसार वह सब देश जिनमें यह भावना उत्पन्न होगई है उनकी स्वतन्त्रता को स्वीकार

करना होगा और इस प्रकार राष्ट्रवाद, अन्तर-राष्ट्रियता की पहली मंजिल है। अन्तर राष्ट्रियता के लिये सब देशों की राजनैतिक समानता आवश्यक है जिससे फिर वह राज्य संसार के दूसरे राज्यों से परस्पर सहयोग करके मनुष्य जाति की उन्नति में बराबर के साझेदार बनें।

भिन्न २ राज्यों से परस्पर का सहयोग स्थापित करनाः— राजनैतिक समानता के स्थापित होने के बाद इस नीति को कार्य रूप में लाना होगा कि जिस विषय का सम्बन्ध सबसे है वह सबके द्वारा ही निर्णय होना चाहिये और फिर वह अपनी इच्छाओं को बलिदान करके संसार के दूसरे राज्यों से सहयोग स्थापित करने के लिये खुशी खुशी तैयार हों।

संघात्मिक सिद्धान्त को अन्तर-राष्ट्रिय विषय में लागू करनाः— जिस प्रकार से राज्य में वह विषय जिनका सम्बन्ध सारे राज्य से होता है वह संघ सरकार के हाथ में होता है और दूसरे विषय जिनका कि सम्बन्ध राज्यों के भाग से होता है उनकी जिम्मेदारी भागों के हाथ में होती है। इसी प्रकार से वह विषय जिनसे संसार का अथवा कुछ राष्ट्रों की शान्ति तथा उनके सुख का सम्बन्ध हो इन विषयों का निर्णय ऐसी संस्था द्वारा हो जिसमें सब देशों के सदस्य हों और स्थानीय लाभ के विषय में हर राष्ट्र अथवा साम्प्रदाय को अपनी नीति निर्धारित करने को पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिये।

राज शक्ति का त्यागः— संसार में शान्ति स्थापित करने के लिये यह आवश्यक है कि राज्य के अधिकारों का अन्त किया जाय, उन विषयों में जिसका सबसे सम्बन्ध है किसी प्रकार की शक्ति राज्यों को न दी जाय। यह जभी सम्भव है जब कि हर एक राज्य अपनी राज्य शक्ति का कुछ भाग अन्तर-राष्ट्रिय संघठन को सौंप दे।

अन्तर-राष्ट्रिय संघठन में सैनिक शक्ति का होनाः— तीसरी बात ये है कि संघ राज्य को काफी शक्ति दी जाय जिससे वह

अपने नियमों को दूसरे से मनवा सकें और राज्यों की सैनिक शक्ति को कम कर दिया जाय जिससे वह संसार की शान्ति को भंग न कर सके।

पूंजीपति प्रथा का अन्त होना:—कम्युनिस्ट विचार धारा के लोगों का यह भी कहना है कि जब तक पूंजीपति प्रथा का अन्त नहीं होगा, अन्तर-राष्ट्रिय संगठन कभी सफल नहीं होगा, परन्तु यह गलत विचार है।

राष्ट्रों का संघ:—(League of Nations) पहले महायुद्ध के पश्चात जनवरी १६२० में अन्तर्राष्ट्रिय सहयोग के लिये एक संघ बनाया था, जिसका नाम लीग आफ नेशन था। इस संघ के उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की उन्नति तथा अन्त-र्राष्ट्रीय शान्ति और रक्षा की प्राप्ती थे। इस उद्देश्य की प्राप्ती के साधन ये थे—(१) पारस्परिक झगड़ों को निपटाने के लिये युद्ध न किया जायगा ऐसा प्रण करना। (२) राष्ट्रों के मध्य उदारता, न्याय और सम्मान पूर्वक सम्बन्ध जोड़ना। (३) संसार के राज्यों वह राष्ट्रों के परस्पर बर्ताव के लिये अन्तर्राष्ट्रिय नियम बनाना (४) सम्पूर्ण संधियों के अनुसार न्याय और सम्मान की स्थापना करना।

लीग अपनी कार्यकारिणी समिति द्वारा कार्य करती थी और इसका कार्यालय जेनेवा में था। कौंसिल के १४ सदस्य थे, जिनमें से पाँच बड़ी शक्तियों के प्रतिनिधि थे और शेष अन्य राष्ट्रों से बारी २ से चुने जाते थे। कौंसिल के अधिवेशन, वर्ष में तीन चार बार जेनेवा में होते थे, परन्तु लीग आफ नेशन को सफलता प्राप्त न हुई क्योंकि बड़े बड़े राष्ट्रों की सच्ची सहायता इसको प्राप्त न थी। आरम्भ में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और रूस इसमें सम्मिलित न हुए और बाद में रूस लीग में सम्मिलित हुआ तो जापान, जर्मनी और इटली ने त्याग पत्र दे दिये। इस प्रकार इस अन्तर्राष्ट्रीय संस्था को अपने उद्देश्य की प्राप्ती में सफलता न हुई।

अटलांटिक चार्टर:—(The Atlantic charter) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को मित्रता और सम्मानपूर्वक दृढ़ न कर सकने के कारण युरुप में शत्रुता, ईर्ष्या और स्पर्धा के भावों को बढ़ने का अवसर मिल गया और १९३९ में युरुप का दूसरा महान युद्ध प्रारभ हुआ। युद्ध भी होता रहा और साथ ही नये अन्तराष्ट्रीय संगठन की भी चर्चा होती रही। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के प्रधान रुजवेल्ट और इंगलैंड के प्रधान मन्त्री चर्चिल ने अटलांटिक चार्टर की घोषणा की, जिसमें युद्ध के पश्चात संसार के नऐ संगठन की रूपरेखा दर्शाई। रुजवेल्ट ने चार स्वतन्त्रताओं, भाषण की स्वतन्त्रता, धर्म की स्वतन्त्रता, दरिद्रता से स्वतन्त्रता और भय से स्वतन्त्रता को अटलांटिक चार्टर के सतम्भ बताया। ७ सितम्बर १९४४ को डमबर्टन ओक्स के स्थान पर संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, इंगलैंड रूस और चीन ने मिल कर दूसरे अन्तर्राष्ट्रीय संघ की स्थापना की और उसका नाम संयुक्त राष्ट्र का संघ (United Nations Organisation) रखा।

१. संघ के उद्देश्य:—संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य ये हैं--(१) अन्तर्राष्ट्रिय शान्ति और रक्षा को स्थिर रखना, (२) राष्ट्रों के मध्य मैत्री सम्बन्ध को उन्नत करना, (३) संसार की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और मनुष्य मात्र के हित की समस्याओं पर अन्तर्राष्ट्रिय सहयोग प्राप्त करना (४) इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये अन्तर्राष्ट्रिय केन्द्र स्थापित करना।

इन उद्देश्यों के सम्बन्ध में निम्नलिखित सिद्धान्तों की स्वीकृति संघ के सदस्यों से आवश्यक है:—

(क) संघ के सभी सदस्य राष्ट्रों की सर्वोच्च सत्तात्मक समानता को दूर करना। (ख) अटलांटिक चार्टर के अनुकूल सदस्य राष्ट्रों के अधिकारों और कर्तव्यों को पूरा करने में सहायता देना। (ग) पारस्परिक झगड़ों को शान्तिपूर्वक साधनों से निपटाना। (घ) किसी अन्य राष्ट्र के देश और स्वतन्त्रता पर सैनिक आक्रमण न करना। (ङ) चार्टर के

अनुसार यदि संघ शान्ति स्थापना करने पर कोई कार्यवाही करे तो उस कार्यवाही में संघ को सहायता देना। इन उद्देश्यों की पूर्ती के लिये निम्नलिखित समितियां स्थापित हुई।

१. जनरल असेम्बली:—(General Assembly) जनरल असेम्बली में हर एक राष्ट्र का एक प्रतिनिधि होता है। यह असेम्बली दुनियां भर की साधारण अवस्था का अध्ययन करती है और अपनी सिफारिशों को रक्षा समिति के पास भेज देती है।

२. रक्षा समिति:—(Security Council) रक्षा समिति के कुल सदस्य ११ हैं, जिनमें से पाँच सदस्य इंगलैण्ड, रूस, संयुक्त अमेरिका, फ्रांस और चीन हैं। ये पांच तो स्थाई सदस्य हैं और शेष छः सदस्यों को क्रम से अन्य संयुक्त राष्ट्रों में से दो वर्ष के लिये चुना जाता है। इसका मुख्य काम अन्तर्राष्ट्रिय झगड़ों की छान बीन करना है।

३. आर्थिक और सामाजिक समिति:—(Economical & Social Council) इस समिति के १८ सदस्य हैं, जिनको जनरल असेम्बली चुनती है। इस समिति का उद्देश्य देश की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना है और संसार के आर्थिक और सामाजिक जीवन के स्तर (Standard) को ऊंचा करना है।

५. कार्यालय:—(Secretariat) यह संघ का कार्यालय एक सेक्रेटरी जनरल के आधीन काम करता है। वह सारे संयुक्त राष्ट्रों से पत्र व्यवहार करता है और अपनी रिपोर्ट जनरल असेम्बली और रक्षा समिति को भेजता है।

इन समितियों के अतिरिक्त कई अन्य संस्थाएँ हैं जो भोजन, कृषि, यातायात, शिक्षा, समाज सुधार आदि समस्याओं का अध्ययन अन्तर्राष्ट्रिय दृष्टिकोण से करती है। यह आशा की जाती है कि भविष्य में संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा संसार में शान्ति उत्पन्न होगी।

अध्याय बीसवां

तानाशाही सरकार (Dictator-ship)

तानाशाही राज्य की परिभाषाः—तानाशाही राज्य वह राज्य है जिसमें सरकार की सारी जिम्मेदारी एक ही व्यक्ति के हाथ में एकत्रित होती है। यह व्यक्ति या तो शक्ति द्वारा या अपने गुणों की विशेषता के कारण लोगों की स्वीकृति प्राप्त करके या इन दोनों चीजों के द्वारा अपना पद प्राप्त कर लेता है। राज्य की सर्वोच्चसत्ता इस व्यक्ति के हाथ में होती है। सारे कार्य की जिम्मेदारी उसी के कन्धों पर होती है। वह किसी व्यक्ति या व्यक्ति के समूह के समक्ष उत्तरदायित्व नहीं होता। उसके पद का कोई निश्चित समय नहीं होता और उस पर किसी प्रकार का अंकुश नहीं होता। वह अपना आधिपत्य मनमाने रूप से हुक्म द्वारा निर्मित करता है। इसमें कानून की अपेक्षा हुक्म का बोल बाला होता है। इस प्रकार की सरकार को तानाशाही राज्य कहते है और वह व्यक्ति जिसका कि हुक्म चलता है तानाशाह कहलाता है।

व्यक्ति की अपेक्षा राज्य पर महत्वः—इसमें राज्य को विशेष स्थान प्राप्त है और व्यक्ति को किसी प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं है। जो कुछ हुक्म राज्य निर्मित करे, व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि उस हुक्म वह पूरे रूप से पालन करे। यदि वह किसी प्रकार का विरोध करे तो राज्य को उसके विरोध करने पर दण्ड देने का पूरा २ अधिकार है।

व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का लोपः—इसमें व्यक्ति को भाषण देने, सरकार की नीति की आलोचना करने, समुदाय स्थापित करके उसका सदस्य बनने, सभायें एकत्रित करके सरकार की नीति का विरोध करने, यह अधिकार तानाशाही राज्य में प्राप्त नहीं होते हैं। शिक्षा के भिन्न २ क्षेत्रों पर जैसे स्कूल कॉलेज, रेडियो, सिनेमा आदि पर सरकार अपना आधिपत्य रखती है। व्यक्ति का स्थान दास के समान होता है। व्यक्ति का कर्तव्य, त्याग और नियम पालन कहा गया है।

राष्ट्रीयता का उत्थानः—इसके कार्यक्रम के अन्तर्गत राष्ट्रियता को महत्व दिया जाता है। उसे अन्य देशों के उत्थान और पतन से कुछ लेना-देना नहीं होता है, केवल अपने देश-प्रेम का संकुचित रूप व्यक्तियों के मस्तिष्क में भर दिया जाता है।

एक दल, एक नेता, एक कार्यक्रमः—इसमें सर्वोच्चसत्ता, एक नेता में या एक राजनैतिक दल में होती है। इसमें नेता अपने ध्येय से सहमत रखने वाले लोगों को एक राजनैतिक दल के रूप में एकत्रित कर लेता है और इस दल में ही सारी शक्ति एकत्रित होती है जो नीति यह दल निर्मित करे उसको तमाम लोगों को स्वीकार करना होता है। इस दल में राज्य के लोगों का बहुमत नहीं होता है। इसके विपरीत राज्य के लोगों की अल्प संख्या होती है। वही लोग इस दल के सद-स्य हो सकते हैं जो कि वास्तव में नेता की विचार धारा को पूरे रूप से स्वीकार करते हैं। इस कारण से अपना आधिपत्य दृढ़ रखने के लिये सैनिक शक्ति पर पूरा पूरा आधिपत्य होता है। इसके पश्चात् खुफिया पुलिस (Secret Police) का सारे राज्य में जाल सा बिछा रहता है जिससे कि राज्य प्रबन्ध करने वालों को लोगों के कार्य और विचारों का पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त होता है और राज्य हर प्रकार का प्रोपेगन्डा करके अपना आधिपत्य जमाये रखता है।

योगात्मक राज्यः—यह एक योगात्मक राज्य होता है। इसमें व्यक्ति के व्यक्तित्व सम्बन्धी प्रत्येक वस्तु को सरकार अपने आधीन रखती है। राज्य व्यक्ति की प्रत्येक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शिक्षा व सभ्यता सम्बन्धी क्रिया को अपने आधीन रखता है। उसमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का कोई स्थान नहीं होता है। "सब कुछ राज्य में ही है और राज्य के बाहर कुछ नहीं है" यह उसका मुख्य सिद्धान्त है।

तानाशाही राज्य के गुण

उन्नति तेजी से होनाः—इसमें सारी शक्ति एक ही व्यक्ति के हाथ

में होती है। उसे किसी से राय लेने की आवश्यकता नहीं। न इसमें कोई लम्बे चौड़े वाद-विवाद होते हैं। यदि नेता योग्य पुरुष है तो वह स्वयं ही उपाय सोच कर तुरन्त ही लागू कर सकता है। नीति का स्वीकार करना हर एक के लिये अनिवार्य होता है। इस कारण उन्नति तेजी से हो सकती है।

राज्य प्रबन्ध करना कला के समान है:—जिस प्रकार कला में कलाकार ही अपना ध्येय प्राप्त करने में सफल हो सकता है इसी प्रकार इन लोगों के विचार के अनुसार राज्य प्रबन्ध करना भी एक कला है। साधारण व्यक्ति को कुछ योग्यता नहीं होती उनको एक नेता की आवश्यकता है। जो कि अपनी नीति के आधार पर राज्य से भूख, बेकारी, निर्धनता इत्यादि दूर करने के उपाय सोचता है और लोगों का कर्तव्य यह है कि वह नेता की आज्ञा का पालन करे और इस प्रकार देश की निर्धनता दूर होकर देश का मान दूसरी जातियों में होने लगेगा।

योग्य पुरुष द्वारा अच्छा प्रबन्ध होना:—यदि नेता वास्तव में योग्य पुरुष है तो राज्य का अच्छा प्रबन्ध होने लगता है, खराब कानून जिससे कि देश की उन्नति रुकती है वह रद्द कर दिये जाते हैं नये प्रकार की योजनायें बनाई जाती हैं जिससे कि देश में हर प्रकार की उन्नति होती रहती है। योग्य पुरुषों को भिन्न भिन्न जगह नियत किया जाता है जिससे उन्नति तेजी से हो।

तानाशाही राज्य के दोष

व्यक्ति के चरित्र का विकास न होना:—इसमें हर एक चीज़ ऊपर से लागू की जाती है और व्यक्ति को राज्य प्रबन्ध में भाग लेने का अवसर प्राप्त नहीं होता इसका कर्तव्य तो कानून का पालन करना और नेता की प्रशंसा करना है और इस कारण से उसकी अच्छाईयों का विकास नहीं होता। आर्थिक उन्नति अवश्य हो जाती है परन्तु

व्यक्ति स्वयं को सोच विचार करने का और अपना कार्य खुद करने की भावना उसमें उत्पन्न नहीं होने पाती। उसके हृदय में एक प्रकार की अशान्ति सी रहती है और समय पाकर वह ऐसी सरकार के विरुद्ध कार्य करने में नहीं हिचकता है।

सभ्यता को पीछे ले जाना:—व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, भाषण देने, सभाएँ एकत्रित करने, समाचार पत्र द्वारा प्रचार करना और इस प्रकार की अन्य स्वतन्त्र विचारों के अन्त कर देने से समाज उन्नति के मार्ग से पीछे हटती है, आगे नहीं। व्यक्तित्व के अन्त होने से मनुष्य के विकास में धक्का लगता है। तमाम मनुष्य एक ही ढाँचे में नहीं ढाले जा सकते हैं। प्रकृति से मनुष्य में भिन्नता है और मनुष्यों को अपने विचारों को प्रगट करके और स्वयं सोच विचार करने से समाज की उन्नति होती है, अवनति नहीं। तानाशाही राज्य सबको एक ढाँचे में ढाल कर समाज की उन्नति में रुकावट पैदा करता है।

प्रजातन्त्र और तानाशाही सरकार में से कौनसी सरकार भारत के लिये लाभदायक है

व्यक्ति के स्वभाव तथा दृष्टिकोण के आधार पर सरकार का निर्भर होना:—व्यक्ति में दो प्रकार के दृष्टिकोण होते है। एक तो प्रजातन्त्र और दूसरा तानाशाही। प्रजातन्त्र दृष्टिकोण उस दृष्टिकोण को कहते हैं जिसमें लोगो के स्वतन्त्र विचार हों और हुक्म की अपेक्षा समझौते द्वारा कार्य करना लोगों को स्वीकार होता हैं, ऐसे राज्य में प्रजातन्त्र अधिक सफल होते हैं। जहाँ पर व्यक्तियों में स्वतन्त्र विचार की भावना नहीं होती है और उनका सारा ध्यान अपनी आर्थिक स्थिति सुधार कर अपने राज्य का मान बढ़ाने पर सीमित रहती है ऐसे राज्य में व्यक्ति स्वतन्त्र विचारों को भूल जाता है और अपने नेता की आज्ञा पालन करने पर अधिक महत्व देता है जिससे कि राज्य की उन्नति तेजी से हो। ऐसे राज्य में तानाशाही सरकार अधिक सफल होती है। व्यक्ति

का दृष्टिकोण तथा स्वभाव किस प्रकार का है, इसका ज्ञान उस राज्य के इतिहास द्वारा प्राप्त होता है।

सरकार के लिये इतिहास का महत्व:—हिन्दुस्तान के इतिहास में पाँच राजा अधिक शक्ति शाली और प्रसिद्ध हुए हैं। उनके नाम अशोक, अकबर, अलाउद्दीन खिलजी, मुहम्मद तुगलक और औरंगजेब हैं। अशोक और अकबर एक ही प्रकार के राजा थे। अशोक अपने को प्रजा का सेवक बतलाता था और अपने कर्मचारियों को भी इसी बात पर जोर देता था। कि वह मालिक नहीं बल्कि सेवक हैं और उनका कार्य लोगों के दुखों को सुनना और उनको दूर करना है। इसी प्रकार अकबर भी अपने आपको सेवक ही गिनता था और उसके प्रबन्ध की नींव समझौते और मेल जोल पर निर्भर थी। यह प्रजातन्त्र के सिद्धान्त हैं। लोगों ने इन दोनों राजाओं की नीति को स्वीकार किया क्योंकि यह लोगों के दृष्टिकोण के आधार पर थी। आज भी हमारे हृदय में इनके लिये मान है और इन्हीं के नाम पर हमारा देश अशोक और अकबर का हिन्दुस्तान कहलाता है। आज भी हमारे राष्ट्रिय झन्डे पर अशोक चक्र का चिन्ह है।

अलाउद्दीन खिलजी, मुहम्मद तुगलक और औरंगजेब ये तीनों एक ही प्रकार के राजा थे जिन्होंने तानाशाही दृष्टिकोण के आधार पर राज्य करने का प्रयत्न किया और इन तीनों के राज्य प्रबन्ध को लोगों ने स्वीकार नहीं किया, इससे लोगों में काफी अशान्ति रही। इनमें अलाउद्दीन खिलजी सबसे अधिक प्रसिद्ध है जिसने कि वर्तमान तानाशाह के समान काफी सफलता पूर्वक कार्य किया। इसके समय में व्यक्ति के प्रत्येक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्रियाओं पर पूरा पूरा आधिपत्य था। देश में शान्ति रही और लोगों की आर्थिक स्थिति भी काफी सुधर गई थी, परन्तु स्वतन्त्रता न होने के कारण लोगों के हृदय में अशान्ति थी। जब केन्द्रीय शासन कमजोर हो गया तो लोगों ने इस सरकार का विरोध किया। राज्य में उसके मृत्यु पर इतना अधिक भ्रष्टाचार हुआ

जैसा कि पहले किसी समय में नहीं हुआ था। इसी प्रकार मुहम्मद तुगलक और औरंगजेब भी तानाशाही दृष्टिकोण के आधार पर राज्य करने में असफल रहे। हमारा इतिहास पुकार पुकार कर यह बतला रहा है कि हमारा दृष्टिकोण प्रजातन्त्र के आधार पर है और प्रजातन्त्र सरकार ही यहाँ पर सफल हो सकती है।

धर्म का महत्व:—हमारा धर्म भी हमको पूरी स्वतन्त्रता देता है। हमारा धर्म व्यक्ति को जन्जीरों में नहीं जकड़ता। वह विश्व के सभी धर्मों का आदर करता है और उसकी अच्छी बातों को सर्वदा ग्रहण करने के लिये प्रस्तुत रहता है। उसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने विश्वास के अनुसार ईश्वर की पूजा कर सकता है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि स्वतन्त्रता के विचार हमारे मस्तिष्क में कूट कूट कर भरे हैं और ऐसी स्थिति में तानाशाही राज्य यहाँ पर सफल नहीं हो सकता।

लोगों में अधिक भेद-भाव का होना:—हमारे यहाँ हर प्रकार के लोग पाये जाते हैं। कुछ लोग तो अधिक उन्नति शील हैं जो कि अपने विचार और रहन सहन और योग्यता में युरुप के लोगों से किसी प्रकार पीछे नहीं हैं। इसके विपरित भिन्न भिन्न स्थिति के लोग हैं और अधिक मात्रा में ऐसे लोग हैं जो कि बिलकुल अज्ञान और मूर्ख हैं। इसके पश्चात् जात पात का भेद भाव, हरिजन लोगों की गिरी स्थिति, परिवार का असमानता के आधार पर होना, स्त्रियों की गिरी हुई स्थिति होना, गाँव में अधिक मात्रा में लोगों का अज्ञान और मूर्ख होना, भाषा के आधार पर भेद भाव होना, यह सब बातें समाज में उलझने पैदा कर देती हैं। यह बुराइयाँ आज की नहीं परन्तु एक हजार वर्ष पुरानी एकत्रित बुराइयां हैं, जो कि धीरे धीरे दूर हो सकती हैं, और तुरन्त ही दूर नहीं की जा सकती। तानाशाही राज्य में सबको एक ही लाठी से हाँक कर एक ही ढाँचे में ढालने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार की नीति से लाभ के बजाय हानि होने की अधिक

सम्भावना है। यह बुराइयां प्रजातन्त्र के आधार पर लोगों की स्वीकृति प्राप्त करके धीरे २ ही दूर की जा सकती हैं और इसी में राज्य को लाभ है। शीघ्रता करने पर लोगों में अशान्ति उत्पन्न होगी और फिर नये प्रकार की कठिनाइयां उपस्थित हो जायेंगी जो कि देश के लिये हानिकारक हैं।

तानाशाही राज्य की उत्पत्ति का कारण:—प्रथम महायुद्ध के पश्चात् युरुप में कई राज्यों की आर्थिक स्थिति अधिक मात्रा में गिर गई थी और इन राज्यों में लोगों ने निराश होकर देश का राज्य प्रबन्ध कुछ व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के हाथ में सौंप दिया गया था, जिससे कि राज्य की उन्नति तेजी से हो। कुछ सीमा तक तानाशाह, स्थिति सुधारने में सफल हुए परन्तु उनकी उन्नति ठोस नहीं थी। इटली में एक ही झौंके में तानाशाही राज्य का अन्त हो गया। जर्मनी ने काफी सफलता पूर्वक प्रजातन्त्र राज्यों का काफी समय तक सामना किया। परन्तु अन्त में उसकी भी हार हुई। रुस में तानाशाही राज्य को काफी सफलता प्राप्त हुई क्योंकि यह राज्य वहां के इतिहास और लोगों के दृष्टिकोण पर निर्भर है, परन्तु वहां पर सफलता होने से हम यह परिणाम नहीं निकाल सकते हैं कि हर राज्य में तानाशाही राज्य से ही उन्नति होगी। रुस की वर्तमान उन्नति उसके तीस साल के ठोस कार्य का परिणाम है और शुरू के दस साल तक में वह इतनी अधिक मात्रा में उन्नति नहीं कर पाया था।

हिन्दुस्तान की स्थिति:—हिन्दुस्तान को स्वतन्त्र हुए अभी सात ही साल हुए और इस कम समय में इसने इतनी अधिक मात्रा में उन्नति कर ली है कि सारे संसार को इस पर आश्चर्य होता है। सबसे पहले हमने खुराक की कमी को पूरा कर लिया है। आज हमारे राज्य में हमारी आवश्यकताओं की पूर्ती के लिये काफी अनाज पैदा होने लगा है और दूसरे राज्यों से अनाज मंगाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

ग्यारह गवेषणशालाओं का खुलना:--वैज्ञानिक उन्नति के लिये वर्तमान समय में ग्यारह गवेषणशालायें खोली गई हैं क्योंकि वर्तमान समय में राज्य की उन्नति विज्ञान पर निर्भर है और इन विज्ञान-शालाओं में तीन हजार से अधिक विद्यार्थी दिन रात नई बातों की छानबीन में लगे हुए हैं।

परिवहन और संचार:--देश की आर्थिक उन्नति के लिये याता-यात का अच्छा प्रबन्ध होना पहली आवश्यक चीज है इस लिये रेलों के विकास के प्रोग्राम पर अधिक जोर दिया जा रहा है। चितरंजन इंजन का कारखाना एशिया में अपने ढंग का सबसे बड़ा कारखाना खोला गया है जो कि साल में एक सौ बीस इंजन बनायेगा। मद्रास के प्रैम्बूर नामक स्थान पर जून सन् १९५२ को रेल के धिब्बे बनाने का एक नया कारखाना स्थापित हुआ है और हर साल ३५० हलके वजन के मिले जुले ढंग के डिब्बे तैयार होंगे। कल्याण पावर हाउस में बिजली बनाने की शक्ति ४०००० किलोवॉट से बढ़ा कर ६४०००० किलोवॉट कर दी गई है जिससे सैन्ट्रल और वेस्टर्न रेल्वे को बम्बई में बिजली की ट्रेन चलाने में सहुलियत होगी। बाहरी देशों से व्यापार करने के लिये काँडला में बन्दरगाह बनाया है जोकि देश के व्यापारिक केन्द्रों से रेल के द्वारा मिला दिया गया है ब्राडकास्टिंग के प्रोगाम को बहुत उन्नति दी जा रही है।

सिंचाई और बिजली की उन्नति:--वर्तमान समय में किसी देश की उन्नति इस बात पर निर्भर होती है कि वहाँ बिजली की शक्ति कितनी है और जितनी अधिक मात्रा में बिजली की शक्ति होगी देश उतनी ही शीघ्रता से उन्नति करता है। भाखरा नाँगल, दामोदर घाटी योजना, हीराकुड योजना और इस प्रकार की दूसरी योजनाओं पर कार्य तेजी से हो रहा है। भाखरा नाँगल योजना एक साल पहले ही पूरी हो गई है। इनके पूरे होने पर देश में सिंचाई का काम

तेजी से होगा और देश के लिये हजारों किलोवॉट बिजली पैदा होगी जिनके द्वारा मशीनों के बड़े-बड़े कारखानें खुल पायेंगे। इन सब बातों से सिद्ध हो जाता है कि हमारे यहाँ प्रजातन्त्र के आधार पर काफी सफलता पूर्वक कार्य हो रहा है। यह सब बुनियादी (Foundation) काम है और इसका परिणाम भविष्य में मिलेगा। पूर्ण रूप से व्यक्ति को स्वतन्त्रता है और साथ-साथ देश की उन्नति का कार्य भी तेजी से हो रहा है। इस प्रकार ठोस कार्य हो रहा है और वह सन्तोषजनक है।

सामूहिक विकास योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का महत्व:—इन योजनाओं के द्वारा हिन्दुस्तान को जड़ से नये आधार पर संघठित कर रहे हैं। "अपनी सहायता आप करो" की भावना को प्रोत्साहन दे रहे हैं। श्रम, धन, अथवा सामग्री के रूप में गाँववालों से सहायता प्राप्त करके नये भारत का निर्माण हो रहा है। अभी तक इसका विस्तार सीमित है परन्तु दूसरी पाँच वर्षिय योजना में सारे भारत में लागू कर दी जायगी और फिर देश में एक नया वातावरण उत्पन्न हो जायेगा। प्रजातन्त्र के आधार पर कार्य करने में समय अवश्य लग रहा है, परन्तु लोगों का सहयोग प्राप्त करके कार्य करने से उन्नति की ठूँस नींव डल रही हैं। तानाशाही राज्य में सब बातें ऊपर से ठोस दी जाती है। उसमें लोगों का सहयोग प्राप्त नहीं होने पाता। घृणा या हिंसा या आपस के झगड़ों द्वारा हम असली प्रगति नहीं कर सकते।

वर्ग हीन समाज की स्थापना करना:—हमारा ध्येय एक वर्ग हीन समाज की स्थापना करना है जिसमें शोषन न हो, गरीबी न हो, बेरोजगारी नहों और अन्याय न हो। जिसमें निजी लाभ और लालच का बोलबाला न हो और जिसमें राजनैतिक तथा आर्थिक शक्ति विकेन्द्रित हो। इसके आधार सहकारी प्रयत्न हो और जिसमें सब के लि- सम न अवसर हों। यही लक्ष्य रूस के तानाशाही राज्य का भी है,

परन्तु इसको प्राप्त करने के लिये रास्ते भिन्न हैं हमारा रास्ता शान्ति प्रिय और लोक मत के आधार पर है। उनका रास्ता तानाशाही आधार पर घृणा और हिंसा का है। हमने अपना ध्येय प्राप्त करने के लिये काफी ठोस नींव डाली है। धन को एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह में एकत्रित होने से रोकने के लिये नये नये उपाय सोचे जा रहे है जिससे आर्थिक असमानता नहीं हो। ज्यादा आय वालों पर इन्कमटैक्स द्वारा अधिक, कर (income tax) लिया जाता है। इस पर भी यदि धन किसी व्यक्ति के हाथ में एकत्रित हो जाये, तो उसको रोकने के लिये एक नया कानून एस्टेट ड्यूटी एक्ट (Estate duty act) १९५३ से लागू किया है। ६ अक्टूबर १९५३ को राष्ट्रपति ने यह कानून स्वीकार किया था और उसी दिन से यह कानून तमाम हिन्दुस्ताव में लागू किया गया। इस कानून के अनुसार यदि कोई व्यक्ति बीस लाख से अधिक धन छोड़ कर मरे तो उसके धन का चालीस प्रतिशत सरकारी खजाने में जमा कराना होगा। कर की दर हमेशा के लिये लागू नहीं की गई है। इन्कमटैक्स के समान अर्थ मन्त्री हर साल अपने सालाना फाइनेन्स एक्ट ससंद के सामने पेश करते समय इसकी दर संसद की स्वीकृति के आधार पर निर्णय करेगा। ऐसी आशा की जाती है कि यदि जनमत इसके पक्ष में हुआ तो धीरे धीरे यह दर दूसरे उन्नतिशील देशों के समान, सत्तर प्रतिशत तक बढ़ा दिया जायगा इस प्रकार किसी पूँजीपति की मृत्यु पर उसका अधिक धन सरकारी खजाने में जमा होगा और उसके उत्तराधिकारियों के हाथ में सीमित रकम मिलेगी। यदि वह योग्य है तो उद्योग-धंधों में अपने धन द्वारा उन्नति करेंगे और धनवान बन जायेंगे जिससे उनको भी लाभ होगा और राज्य को भी और लोगों में किसी प्रकार की घृणा न होगी। यदि वह अयोग्य हैं तो धन का अच्छा प्रयोग न होने पर वह भी साधारण व्यक्ति के समान बन जायेंगे। इस प्रकार हम धीरे धीरे एक वर्ग हीन समाज की नींव डाल रहे हैं इसका परिणाम आज नहीं भविष्य में मिलेगा। रूस ने

यह कार्य खून की नदियाँ बहा कर किया है और हम शान्ति पूर्ण रीति के आधार पर कर रहे हैं। हमारी नीति प्रजातन्त्र के आधार पर होने के कारण तानाशाही राज्य की नीति की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है।

हिन्दुस्तान की संस्कृतिः—पं० जवाहरलाल नेहरू का कहना है कि यह हमारा महान देश वही है जिसकी कि रोशनी एक समय तेजी से चमक थी। उसने न खुद तेज रोशनी देखी, बल्कि उसके दूसरे देशों में अन्धेरे को दूर करने के लिये भेजा। यदि आज स्वतन्त्र होने पर हम अपनी संस्कृति और रोशनी को ठुकरा कर दूसरे देश की संस्कृति से हम अपने देश को चमकाने का प्रयत्न करें तो बुद्धिमानी का काम नहीं है, मूर्खता है। इससे मनुष्य जाति की सभ्यता को हानि पहुँचेगी, लाभ नहीं। इसी कारण हमने प्रजातन्त्र को अपनाया है, तानाशाही को नहीं और इसमें हमें काफी सफलता प्राप्त हो चुकी है।

सबसे अच्छी सरकार कौनसी है

For forms of government let fools contest what is administered is always the best.

सरकार का भिन्न भिन्न अवस्थाओं पर निर्भर होनाः—१९५२ में प्रश्न नं० ६ में उपरोक्त कथन के द्वारा यह सिद्ध करने को कहा था कि सबसे अच्छी सरकार कौनसी है। हमने पृष्ठ ११६ पर अच्छे विधान की विशेषता का वर्णन करते हुए लिखा है कि सरकार की रूप रेखा उस राज्य की भूगोलिक स्थिति, उसका इतिहास, संस्कृति, लोगों के मस्तिष्क का विकास, राजनैतिक, सामाजिक, तथा आर्थिक स्थितियों पर निर्भर है और जब कि इन स्थितियों में परिवर्तन हो तो सरकार में भी परिवर्तन आवश्यक हो जाता है। वही सरकार सबसे अच्छी है जो कि इन स्थितियों पर निर्भर है और जिसमें कि राज्य की स्थिति के परिवर्तन होने पर सरकार में भी तुरन्त ही परिवर्तन हो जाये।

भूगोलिक स्थिति का महत्वः—पृष्ठ १५५ पर हमने यह सिद्ध

किया है कि इंगलैन्ड में सबसे पहले प्रजातन्त्र की स्थापना हुई और वह प्रजातन्त्र की जन्मदाता गिनी जाती है। जब कि उस समय हमारे देश में शक्तिशाली निरंकुश, एकतन्त्र सरकार थी। इसका कारण भूगोलिक स्थिति थी। अज्ञान लोग अपनी अज्ञानता के कारण इस भेद भाव पर वाद विवाद करते हैं और दुख प्रगट करते हैं कि हमारा देश पीछे रह गया और अंग्रेज लोग हमसे आगे बढ़ गये परन्तु यह सब अज्ञानता है क्योंकि यह भेद भाव भूगोलिक स्थिति के कारण था और हमारे लिये उस समय एक तन्त्र सरकार ही सबसे अच्छी सरकार थी। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि जब तक विज्ञान ने दूरी और समय को अपने काबू में नहीं किया था। उस समय तक भूगोलिक स्थिति का सरकार की राज्य प्रणाली पर अधिक प्रभाव रहा।

इतिहास का महत्व:—हमने ऊपर यह सिद्ध किया है कि सरकार की राज्य प्रणाली व्यक्ति के दृष्टिकोण का पता इतिहास से लगता है। हमारा इतिहास पुकार २ कर यह बतला रहा है कि हमारा दृष्टिकोण प्रजातन्त्र के आधार पर है और यहाँ पर प्रजातन्त्र सरकार ही सफल हो सकती है और तानाशाही राज्य को यहाँ के लोग कभी स्वीकार नहीं करेंगे और उस सरकार से देश में अवनति होगी उन्नति नहीं। इसी प्रकार जर्मनी का इतिहास यह बतला रहा है कि वहां के लोगों का दृष्टिकोण तानाशाही आधार पर है। जर्मनी में तानाशाही सरकार ही लोग स्वीकार करते हैं। जब कभी वहाँ पर प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हुआ तो वह तुरन्त ही तानाशाही राज्य में बदल गया। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि सरकार की राज्य प्रणाली उस राज्य के इतिहास और संस्कृति पर निर्भर है। प्रजातन्त्र के विचार धारा वाले लोग तानाशाही राज्य और तानाशाही के विचार धारा वाले लोग प्रजातन्त्र पर वाद विवाद करते हैं और एक दूसरे सरकार की निन्दा करते हैं, परन्तु यह अज्ञानता है। यदि सरकार उस देश के इतिहास और संस्कृति पर

निर्भर है तो उस देश के लिये वही सरकार सबसे अच्छी है और उसी सरकार द्वारा उन्नति शीघ्रता से होगी।

मस्तष्क के विकास का महत्वः—पृष्ठ १३२ पर हमने यह सिद्ध किया है कि हमारा देश और हमारा पड़ौसी देश दोनों राज्यों में एक ही दिन राष्ट्रिय स्वतन्त्रता स्थापित हुई। हमने विधान बना कर राजनैतिक स्वतन्त्रता स्थापित करली है। लोगों को नागरिक स्वतन्त्रता दे दी है और आर्थिक स्वतन्त्रता स्थापित करने के लिये शीघ्रता से कार्यवाही हो रही है, परन्तु हमारे यहाँ लोगों के मस्तिष्क का विकास और उन्नति अधिक होने के कारण लोगों में अब भी अशान्ति है और वह सरकार को शीघ्रता से कार्य करने पर जोर दे रहे हैं। हमारा पड़ौसी देश अभी तक उसी जगह है जहाँ से वह हमसे अलग हुआ था। न तो वहां राजनैतिक स्वतन्त्रता स्थापित हुई और न लोगों को नागरिक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और आर्थिक स्वतन्त्रता में भी स्थिति गिरी रही है उन्नति कुछ नहीं हुई है। इस पर भी वहां के लोग इस सरकार स्वीकार को कर रहे है क्योंकि यह सरकार उनके मस्तिष्क के विकास के अनुसार है, अज्ञान लोग इस पर वाद विवाद करते हैं और आँसू बहाते हैं, परन्तु यह मूर्खता हैं क्योंकि उनके मस्तिष्क के विकास के अनुसार वर्तमान सरकार उनके लिये सबसे अच्छी सरकार है और हमारे उन्नति के आधार पर हमारी सरकार सबसे अच्छी सरकार है।

अच्छी सरकार में आवश्यक बातें:—पृष्ठ ११६, ११७, ११८ पर हमने विधान की विशेषतायें वर्णन की है जो कि अच्छी सरकार में होनी आवश्यक हैं। जैसे परिवर्तन शील विधान का होना, लोगों को मौलिक अधिकार प्राप्त होना, न्यायपालिका का स्वतन्त्र होना, लोक सेवा आयोग की स्वतन्त्रता, नियन्त्राणमहालेखा परिक्षक के स्वयं और उसके विभाग की स्थिति का स्वतन्त्र होना, निर्वाचन आयोग स्वयं की और उसके विभाग की स्वतन्त्र स्थिति का होना, यह सब बातें प्रजातन्त्र के आधार पर बनी हुई सरकार की राज्य प्रणाली में आवश्यक हैं।

अध्याय इक्कीसवाँ

एशिया में राष्ट्रवाद की भावना

चीन के प्रधान मंत्री चाऊ-एन लाई ने ता० २८ जून सन् १९५४ को दिल्ली में, उनके स्वागतार्थ जो भोज दिया गया था, उसमें भाषण देते हुए कहा कि एशिया की जनता शान्ति प्रिय है। एशिया में शान्ति भंग होने का भय बाहरी-देशों के कारण है। परन्तु आज एशिया वह नहीं है जो भूतकाल में था। वह युग जब कि एशिया बाहरी शक्तियों के हाथ में कठपुतली बनकर बेबस, समय का परिवर्त्तन देखता था और स्वयं अपना भविष्य निर्णय करने में असमर्थ था, उस युग का अब हमेशा के लिए अंत हो चुका है। मुझे पूरा विश्वास है कि एशिया के शान्ति प्रिय देश और उसकी जनता, युद्ध को उकसानेवाले और शान्ति भंग करने वाले विदेशी-लोगों के जाल में नहीं फंसेंगे और किसी भी कारण से विदेशियों के एशिया की शान्ति भंग होने के स्वप्न को पूरा नहीं होने देंगे।

एशिया के भिन्न २ राज्यों में यूरोप की जातियों का आधिपत्य:—

आज से पाँच सौ वर्ष पहले यूरोप में विद्या का प्रचार और धार्मिक सुधार की लहर फैली थी जिसने यूरोप की उन्नति का बीज बोया। यूरोप में राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न हुई और इसने साम्राज्य-वाद का रूप ग्रहण किया। एशिया में उन्नति रुक चुकी थी। यूरोप की जातियों ने एशिया को दुर्बल स्थिति में पाकर एशिया के सारे राज्यों पर अपना आधिपत्य कम या अधिक मात्रा में स्थापित कर लिया।

एशिया में राष्ट्रवाद की उत्पत्ति :

बीसवीं शताब्दी में एशिया के भिन्न २ राज्यों में राष्ट्रवाद की

भावना उत्पन्न हुई और द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् एशिया ने अधीनता की बेड़ियाँ तोड़ कर स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। एशिया में राष्ट्रवाद की भावना को दृढ़ कराना और अधीनता की बेड़ियों से उसको छुटकारा दिलवाने का सौभाग्य जापान को प्राप्त हुआ। इस शताब्दी में जापान ने समस्त विभागों में पूर्ण रूप से उन्नति की थी। परन्तु वह एशिया में होते हुए एशिया का आध्यात्मिक दृष्टिकोण भूल गया था और उसकी अज्ञानता के कारण यूरोप का भौतिक दृष्टिकोण उस पर इतना अधिक प्रभावित था कि वह यूरोप के विनाशात्मक साम्राज्यवाद की भावना के चक्र में फँस गया। रविन्द्रनाथ टाकुर, श्री जवाहरलाल नेहरू और हिन्दुस्तान के अन्य नेताओं के इस अनुचित मार्ग—ग्रहण करने पर जापान को चेतावनी भी दी थी परन्तु अपनी शक्ति के अभिमान के कारण उसनें एक न सुनी। एशिया में जापान का साम्राज्यवाद स्थापित करने के लिये वह युद्ध में बिना सोचे समझे कूद पड़ा; जिस नीति से जापान का स्वयं का तो नाश हुआ ही परन्तु साथ-साथ एशिया में यूरोप की पश्चिमी देशों की साम्राज्यवाद की नींव को जड़-मूल से हिला दिया।

हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, सीलोन और ब्रह्मा इन तीनों राज्यों में पंद्रह अगस्त सन् १९४७ को स्वतन्त्र राज्य स्थापित हुए।

सन् १९४७ को स्वतन्त्र राज्य स्थापित हुए। चीन में पहली अक्टूबर १९४९ को पीपुल्स रिपब्लिक आफ चाइना (People's Republic of China) की स्थापना हुई इसकी राजधानी पैकिंग (Paking) है। (Mao-Tse-Toung) यहां के राष्ट्रपति हैं और चाउ-एन-लाई (Chou-En-Lai) यहां के प्रधान मंत्री हैं (Chu-Ten) यहाँ के सेनापति हैं। इन्डोनेशिया में भी स्वतन्त्र राज्य स्थापित हो गया और यहां के राष्ट्रपति डाक्टर सोकरनो हैं और प्रधान मन्त्री डाक्टर (Ali Sastroawidjoys) हैं। इन्डोचीन में फ्रांस का राज्य

था, परन्तु दूसरे महायुद्ध के बाद इन्डोचीन के लोग स्वतन्त्र होने के लिये लगातार लड़ रहे थे। जैनेवा कांन्फ्रेन्स ने अब इस लड़ाई का अन्त करा दिया है और आज से बीस महीने के बाद चुनाव होकर वहाँ पर स्वतन्त्र राज्य स्थापित हो जायगा। थाई लैन्ड में (Marshal-Pibul Songgram) का फौजी राज्य स्थापित है जिन्होंने करीब आठ साल पहले (Nai-Pridi) को हटा कर अपना राज्य स्थापित किया था। Nai-Pridi और उनके साथी आजकल चीन में है जिनका कि मारशल पीबल को भय लगा रहता है और यहां की कुल अठारह लाख आबादी में तीन लाख चीनी लोगों की आबादी है। (Nai-Pridi) के भय के कारण S. E. A. T. O कॉन्फ्रेन्स जो कि मनीला में हुई थी उसमें थाइलैंड ने भाग लिया।

वर्तमान समय में एशिया की भूमि में यूरोप का आधिपत्य :—

हिन्दुस्तान में गोआ, डामन, डयू की भूमि पर अभी तक पुर्तगाल सरकार का आधिपत्य है और पुर्तगाल के प्रधान मन्त्री डाक्टर सालाजार अभी तक इन इलाकों को हिन्दुस्तानी सरकार को सौंपने को तैयार नहीं हैं। दूसरे, मलाया और सिंगापुर के इलाकों पर अभी तक अंग्रेजी सरकार का आधिपत्य है और वहां पर कठोर नीति ग्रहण कर के स्वतन्त्रता की भावना को कुचल रखा है।

न्यू वेस्टगिनी जिसको वेस्ट इरियन (New-Westguinea or West Irian) भी कहते हैं, जो इन्डोनेशिया का इलाका है, परन्तु डच सरकार ने अपना आधिपत्य इस इलाके पर अभी तक जमा रखा है। चौथे फारमूसा में चांग काई शेख का आधिपत्य अमेरिका की सहायता से स्थापित है। अमेरिका का सातवां जहाजी बेड़ा इस टापू की रखवाली कर रहा है जिससे कि चीन की सरकार में अधिक अशान्ति है। पाँचवें, पीपुल्स रिपब्लिक आफ चाइना जिसका कि आधिपत्य सारे चीन पर है, इस सरकार को अमेरिका अभी तक स्वीकार नहीं कर रहा है और संयक्त

राष्ट्र संघ में जब चीन को सदस्य बनाने का प्रस्ताव आता है तो अमेरिका और उसके साथी घोर विरोध करते हैं और सदस्य नहीं बनने देते हैं। इसके बजाय वो फारमूसा की सरकार को स्वीकार कर रहे हैं। अमेरिका की इस नीति से एशिया में बड़ी अशान्ति है। छठे, जापान और फिलिपाइन्स पर अमेरिका का अधिक प्रभाव है। ऐसा मालूम होता है कि अमेरिका की नीति इन दोनों राज्यों को हथियार देकर लड़ाई के लिये तैयार कराना है जो कि एशिया की शान्ति प्रिय नीति के विरोध में है।

मई १९५४ को एशिया के राज्यों की कोलम्बो में कॉन्फ्रेंस:—

इन्डोचीन की समस्या सुलझाने के लिये यूरोप और अमेरिका के राजनीतिज्ञ यूरोप के स्थान जेनेवा में एकत्रित हुये जिसमें कि एशिया के राज्यों में से चीन ही को इस कान्फ्रेंस में भाग लेने के लिये निमन्त्रण दिया गया था। एशिया में राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न हो चुकी है। ऐसी स्थिति में एशिया की समस्या यूरोप और अमेरिका के राजनीतिज्ञों की नीति के आधार पर हल करना अनुचित बात है। एशिया की समस्या लन्दन, वाशिंगटन, और जेनेवा में अब निर्णय नहीं हो सकती। वो तो देहली, कोलम्बो, जयकारटा (Jakarte) और पेकिंग में ही निश्चित होगी। यूरोप और अमेरिका की इस नीति को देखकर एशिया के राज्यों ने कोलम्बो में एक सभा की जो कि इस बात को सिद्ध करती है कि एशिया में राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न हो चुकी है और वो अब एशिया की समस्याओं को यूरोप में बैठ कर यूरोप की स्वेच्छाचारी और साम्राज्यवादी दृष्टिकोण से हल करने की नीति को किसी भी कारण स्वीकार नहीं करेंगे। इस सभा में भारत, पाकिस्तान, बर्मा, इन्डोनेशिया और सिलोन के राज्यों ने भाग लिया था, उन्होंने इस सभा में निर्णय किया कि शान्ति का वातावरण उत्पन्न किया जाय, युद्ध का अन्त किया जाय और शान्ति स्थापित होने पर

इन्डोचीन में स्वतन्त्रता की घोषणा करदी जाय। एशिया की इस आवाज का जेनेवा कान्फ्रेंस पर बड़ा प्रभाव पड़ा। इस नीति के आधार पर ही जेनेवा कान्फ्रेंस में समझौता हुआ जिससे कि ७ साल की लड़ाई का अन्त हुआ।

मनीला में एस. ई. ए. टी. ओ. सम्मेलन का सितम्बर १९५४ को होना

अमेरिका का दृष्टिकोण:—

इन्डोचीन की समस्या जेनेवा कान्फ्रेंस से हल हुई थी। इससे युद्ध का भय कुछ मात्रा में कम हुआ परन्तु अमेरिका ने इसके पश्चात ही एक दूसरी कान्फ्रेंस बुला कर जेनेवा कान्फ्रेंस से जो शान्ति स्थापित हुई थी उसका अन्त कर दिया और फिर अशान्ति का भय लोगों में उत्पन्न कर दिया। अमेरिका के मन्त्री श्री Dulles ने वाशिंगटन में ८ सितम्बर १९५४ ई० को भाषण देते हुए यह कहा कि दक्षिणी-पूर्वी एशिया में कम्यूनिस्ट दल की विजय हो जाने से पश्चिमी प्रशान्त पैसिफिक में प्रजातन्त्र राज्य और वहां के लोगों में भय उत्पन्न हो जायेगा और विशेष रूप से यह भय फिलिपाईन, न्यूजीलैंड, आस्ट्रिया में अधिक मात्रा में होगा। अमेरिका की इन देशों से एक-दूसरे की रक्षा करने की नीति पहले से चली आ रही है जापान को भी इससे भय हो जायेगा क्योंकि विदेशी व्यापारी मण्डियों से इसका लेन-देन बन्द हो जायेगा। वहां पर अनाज और कच्चे सामान की कमी हो जायगी इसलिये पूर्वी-दक्षिणी एशिया के लिये एक बड़े विस्तार में स्थाई राज्यों की मिली-जुली रक्षा का प्रबन्ध करना आवश्यक है जिसके होने से कम्यूनिस्ट पार्टी पूर्वी-दक्षिणी एशिया पर अपना आधिपत्य नहीं जमा सकेगी।

मनीला में भाग लेने वाले राज्यों का वर्णन:—

मनीला फिलीपाईन्स की राजधानी है। फिलीपाईन्स के राष्ट्रपति का नाम Magsoysay हैं। यहां पर सितम्बर के महिने में एक सभा हुई थी जिसकी कि समाप्ति ८ सितम्बर को हुई। इस सभा में इंगलैंड अमेरिका, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, पाकिस्तान, फिलिपाईन्स और थाईलैंड के राज्यों ने भाग लिया था। कोलम्बो कान्फ्रेंस के दूसरे राज्यों ने भाग लेने से इन्कार किया।

सन्धि की शर्तें:—

भाग लेनेवाली रियासतों में एक संधि हुई जिसमें उन्होंने यह प्रतिज्ञा की कि उसमें से किसी एक पर आक्रमण होने पर दूसरे सारे राज्य मिल कर उसकी रक्षा करेंगे। एक और धारा के आधार पर यह निर्णय किया गया था कि बाहरी आक्रमण के बिना भी यदि किसी राज्य में इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो जाय जिससे कि उस राज्य की शान्ति भंग हो तो दूसरे सारे राज्य एक-दूसरे से तुरन्त ही बात-चीत करके उस राज्य की रक्षा के लिये आवश्यक कार्यवाही करेंगे तीसरे, अलग से यह भी सन्धि हुई कि यदि कम्बोडिया, लाऊस और विटनेम के इलाके पर कोई आक्रमण हुआ तो सारे राज्य मिलकर उसकी रक्षा करेंगे।

सन्धि का एशिया पर प्रभाव:—

एशिया में सन्धि से, शान्ति की अपेक्षा अशान्ति उत्पन्न हुई। एशिया के लोगों का कहना है कि इस सन्धि से एशिया की राष्ट्रवाद की भावना को कुचला गया है। उपनिवेश और साम्राज्यवाद की प्रथा जिसका कि एशिया में अन्त हो चुका है उसको फिर से दृढ़ करना है। एशिया में फौजी अड्डे स्थापित करके चीन को चारों ओर से घेर लेना जिससे कि उसको हमेशा युद्ध का भय लगा रहे, अमेरिका की नीति

यह बात सिद्ध करती है कि यदि वो शान्ति चाहता भी है तो शक्ति के आधार पर । इस प्रकार की नीति से स्थाई रूप में शान्ति स्थापित नहीं हो सकती ।

एशिया का अमेरिका पर एशिया में युद्ध का बीज बोने का दोष लगाना :-

एशिया के लोगों का यह कहना है कि अमेरिका एशिया की राष्ट्रवाद की भावना को कुचलने और शान्ति भंग करने के लिये दिन प्रति दिन नये नये प्रयत्न कर रहा है फोरमूसा के टापू का दूसरा नाम (Taiwan) टेवान भी है। अमेरिका ने इस टापू में चांग काई शेख का राज्य स्थापित करा रक्खा है। कोरिया के युद्ध के आरम्भ में सन् १९५० ई० को जब कि अमेरिका का सातवाँ जहाजी बेड़ा फोरमूसा की खाड़ी में आया था तब से ये वहीं हैं और अमेरिका ने टेवान, (Penghuisland) पेनगू टापू और दूसरे आस पास के टापुओं पर अपना आधिपत्य जमा रक्खा है। हवाई आक्रमण करने के लिये यहाँ पर सैनिक अड्डे स्थापित कर रक्खे हैं और चीन पर आक्रमण करने के लिये टेवान में पूरी तैयारी कर रक्खी है। चांग काई शेख की फौजें जोकि Kumantang forces कहलाती हैं वो अमेरिका के बल पर चीन के समुद्री किनारे और चीन के व्यापारी जहाजों पर लगातार आक्रमण कर रही हैं जिससे कि चीन में अधिक मात्रा में अशान्ति उत्पन्न हो गई है। एशिया के लोग यह भी कहते हैं कि चांगकाई-शेख की सेना ही बर्मा, थाईलैण्ड और दक्षिणी-पूर्वी एशिया में शान्ति भंग कर रही है।

भेद-भाव का चक्र:-

इन बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि एशिया में एक प्रकार का चक्र चल रहा है जिसमें एक-दूसरे को दोष लगाया जा रहा है।

एशिया के सारे लोगों में अशान्ति है क्योंकि यह भेद-भाव किसी समय भी एक भयंकर महायुद्ध का रूप ग्रहण कर सकता है जिससे कि एशिया में खून की नदियां बहेंगी। जिन्दगी रोयेगी और मौत हँसेगी। अमेरिका अपने युद्ध के हथियार बेच कर और अधिक धनवान होता जायेगा। इस स्थिति में हिन्दुस्तान की मिल-जुल कर कार्य करने की नीति, अनुचित विचारों को दूर करा कर शान्ति का वातावरण उत्पन्न कराने में सफल हो सकती है। हमारे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू इस भेद-भाव को दूर करने का दिन-रात प्रयत्न कर रहे हैं। आपके प्रयत्नों से ही भारतवर्ष में शान्ति स्थापित हुई, हैदराबाद की कठिन समस्या शान्ति-प्रिय नीति से हल हुई, काश्मीर में युद्ध समाप्त हुआ, कोरिया और इन्डीचीन में भी शान्ति स्थापित करने में आपने बहुत बड़ा भाग लिया। आज फिर आप शान्ति का सन्देशा लेकर चीन की यात्रा को रवाना हुए हैं।

एशिया की नीति :--

जून सन् १९५४ जब कि चीन के प्रधान मंत्री (Chou-En-Lai) हिन्दुस्तान आये थे हिन्दुस्तान और चीन के बीच इन पाँच सिद्धान्तों को पालन करने का निर्णय किया गया था।

१. एक दूसरे के राज्यों और उनकी सर्वोच्च शक्ति का आदर करना।

२. एक-दूसरे पर आक्रमण नहीं करना।

३. एक-दूसरे के घरेलू समस्याओं में हस्तक्षेप नहीं करना।

४. समानता के आधार पर एक-दूसरे के लाभ के कार्य करना।

५. हर एक राज्यों को भिन्न २ विचार धारा के आधार पर अपने राज्य की उन्नति कराने की स्वतंन्त्रता देते हुये एक-दूसरे से मिल-जुल कर और सहानुभूति से रहना।

दोनों प्रधान-मंत्रियों ने इस बात पर जोर दिया कि इन ५ सिद्धान्तों के आधार पर एशिया में ही नहीं बल्कि यूरोप में भी शान्ति स्थापित हो सकती है। यहां से जाने के बाद (Chou-En-Lai) ब्रह्मा गये जहां पर प्रधान U. M. से भी बात-चीत की। उन्होंने भी पांच सिद्धान्तों को स्वीकर कर लिया। इसी प्रकार इन्डोनेशिया ने भी इन पाँच सिद्धान्तों को स्वीकार कर लिया। कोलम्बो भी इस नीति से सहमत है। इस प्रकार इस नीति का विस्तार दिन प्रति दिन बढ़ रहा है जिससे कि शान्ति का वातावरण दृढ़ हो रहा है। श्री जवाहर-लाल के शब्दों में यदि हम युद्ध और आक्रमण का भय दूर करदें जिससे कि लोगों में अशान्ति उत्पन्न हो रही है और प्रत्येक राज्य को इस बात का विश्वास करा दें कि उसको अपनी इच्छा अनुसार अपने राज्य की उन्नति कराने का पूरा पूरा अधिकार है और कोई दूसरा राज्य उसके घरेलू समस्याओं में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगा तो यह मनुष्य जाति की महत्वपूर्ण सेवा होगी और इस नीति से हम एक शान्ति की दृढ़ और ठोस नीव डाल देंगे। इस समय सम्पूर्ण मानव-समाज के लिये शान्ति अनिवार्य है। परन्तु यूरोप और अमेरिका की अपेक्षा एशिया के लिये शान्ति अधिक आवश्यक है क्योंकि हमें अपने राज्य के लोगों की उन्नति करानी है। भूखे, निर्धन और बेकार मनुष्यों की आर्थिक स्थिति सुधारनी है। नगें आदमी के लिये कपड़ों का प्रबन्ध करना, बे घर लोगों के लिये घर का प्रबन्ध करना है, रोगको दूर करन के लिये औषधालय बनाने हैं, अज्ञानी और मूर्ख लोगों को ज्ञान देना है। इन सब बातों के लिये आवश्यक है कि हम अपनी सारी शक्ति रचनात्मक कार्यों में लगायें और जहां तक हो सके लड़ाई से दूर रहें।

एशिया के सारे लोगों में अशान्ति है क्योंकि यह भेद-भाव किसी समय भी एक भयंकर महायुद्ध का रूप ग्रहण कर सकता है जिससे कि एशिया में खून की नदियां बहेंगी । जिन्दगी रोयेगी और मौत हँसेगी । अमेरिका अपने युद्ध के हथियार बेच कर और अधिक धनवान होता जायेगा । इस स्थिति में हिन्दुस्तान की मिल-जुल कर कार्य करने की नीति, अनुचित विचारों को दूर करा कर शान्ति का वातावरण उत्पन्न कराने में सफल हो सकती है । हमारे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू इस भेद-भाव को दूर करने का दिन-रात प्रयत्न कर रहे हैं । आपके प्रयत्नों से ही भारतवर्ष में शान्ति स्थापित हुई, हैदराबाद की कठिन समस्या शान्ति-प्रिय नीति से हल हुई, काश्मीर में युद्ध समाप्त हुआ, कोरिया और इन्डीचीन में भी शान्ति स्थापित करने में आपने बहुत बड़ा भाग लिया । आज फिर आप शान्ति का सन्देशा लेकर चीन की यात्रा को रवाना हुए हैं ।

एशिया की नीति :—

जून सन् १९५४ जब कि चीन के प्रधान मंत्री (Chou-En-Lai) हिन्दुस्तान आये थे हिन्दुस्तान और चीन के बीच इन पाँच सिद्धान्तों को पालन करने का निर्णय किया गया था ।

१. एक दूसरे के राज्यों और उनकी सर्वोच्च शक्ति का आदर करना ।

२. एक-दूसरे पर आक्रमण नहीं करना ।

३. एक-दूसरे के घरेलू समस्याओं में हस्तक्षेप नहीं करना ।

४. समानता के आधार पर एक-दूसरे के लाभ के कार्य करना ।

५. हर एक राज्यों को भिन्न २ विचार धारा के आधार पर अपने राज्य की उन्नति कराने की स्वतंन्त्रता देते हुये एक-दूसरे से मिल-जुल कर और सहानुभूति से रहना ।

दोनों प्रधान-मंत्रियों ने इस बात पर जोर दिया कि इन ५ सिद्धान्तों के आधार पर एशिया में ही नहीं बल्कि यूरोप में भी शान्ति स्थापित हो सकती है। यहां से जाने के बाद (Chou-En-Lai) ब्रह्मा गये जहां पर प्रधान U. M. से भी बात-चीत की। उन्होंने भी पांच सिद्धान्तों को स्वीकर कर लिया। इसी प्रकार इन्डोनेशिया ने भी इन पाँच सिद्धान्तों को स्वीकार कर लिया। कोलम्बो भी इस नीति से सहमत है। इस प्रकार इस नीति का विस्तार दिन प्रति दिन बढ़ रहा है जिससे कि शान्ति का वातावरण दृढ़ हो रहा है। श्री जवाहर-लाल के शब्दों में यदि हम युद्ध और आक्रमण का भय दूर करदें जिससे कि लोगों में अशान्ति उत्पन्न हो रही है और प्रत्येक राज्य को इस बात का विश्वास करा दें कि उसको अपनी इच्छा अनुसार अपने राज्य की उन्नति कराने का पूरा पूरा अधिकार है और कोई दूसरा राज्य उसके घरेलू समस्याओं में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगा तो यह मनुष्य जाति की महत्वपूर्ण सेवा होगी और इस नीति से हम एक शान्ति की दृढ़ और ठोस नीव डाल देंगे। इस समय सम्पूर्ण मानव-समाज के लिये शान्ति अनिवार्य है। परन्तु यूरोप और अमेरिका की अपेक्षा एशिया के लिये शान्ति अधिक आवश्यक है क्योंकि हमें अपने राज्य के लोगों की उन्नति करानी है। भूखे, निर्धन और बेकार मनुष्यों की आर्थिक स्थिति सुधारनी है। नगें आदमी के लिये कपड़ों का प्रबन्ध करना, बे घर लोगों के लिये घर का प्रबन्ध करना है, रोगको दूर करन के लिये औषधालय बनाने हैं, अज्ञानी और मूर्ख लोगों को ज्ञान देना है। इन सब बातों के लिये आवश्यक है कि हम अपनो सारी शक्ति रचनात्मक कार्यों में लगायें और जहां तक हो सके लड़ाई से दूर रहें।

अध्याय बाइसवाँ

समाजवाद तथा साम्यवाद

कार्ल मार्क्स १८१८ से १८८३ :—

कार्ल-मार्क्स ने दो पुस्तकें लिखी हैं, एक तो "कम्युनिस्ट मेनीफेस्टो" और दूसरी "कैपीटल"। इन दोनों पुस्तकों के कारण संसार में क्रान्ति उत्पन्न हो गई है। कार्ल-मार्क्स के पाँच सिद्धान्त हैं जिनका कि नीचे वर्णन है—

१. इतिहास का भौतिक दृष्टि कोण :—

मार्क्स के अनुसार ऐतिहासिक घटनाओं का आधार मनुष्य की दैनिक आवश्यकतायें हैं। जैसे जैसे मनुष्य की दैनिक आवश्यकताओं में परिवर्तन होता है वैसे वैसे मनुष्य के सामूहिक जीवन में भी परिवर्तन होता है। इस प्रकार मनुष्य जाति का इतिहास उसकी आर्थिक व्याख्या है, कुछ सीमा तक मार्क्स का यह कथन ठीक है परन्तु इसमें दोष यही है कि वह इस विचार में अत्यधिक मात्रा में चला गया है।

२. अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त :—

उत्पादन के सभी साधन पूँजीपतियों के हाथ में होते हैं जो कि मजदूरों को कम वेतन देते हैं और खर्चा निकालने के बाद जो रुपया बच जाता है वह अतिरिक्त मूल्य कहलाता है, उसको वे खुद हड़प कर जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि पूंजीपति दिन प्रति दिन अधिक धनवान होता जाता है और मजदूर जिसके कि खून पसीने की मेहनत से उत्पादन की वस्तुएँ बनती हैं उसकी आर्थिक स्थिति गिरी रहती है।

३. विरोधी वर्गों की व्यापकता :—

वर्तमान समय में समाज का स्वरुप इस प्रकार का है कि इसमें दो विरोधी वर्गों का होना आवश्यक है, एक तो पूंजीपति वर्ग जिसके कि हाथ में उत्पादन के सभी साधन होते हैं और दूसरा मजदूर वर्ग जिसके परिश्रम से वस्तुएँ बनाई जाती हैं। इन दोनों में झगड़ा चलता रहता है।

४. सामाजिक क्रान्ति की अनिवार्यता :—

कार्ल-मार्क्स का यह कहना है कि इन दोनों वर्गों में झगड़े चलते रहेंगे। पूँजीपति वर्ग दिन प्रति दिन अधिक धनवान होता जायगा और मजदूर दल की आर्थिक स्थिति गिरती जायगी। अन्त में मजदूर दल संगठित होकर एक क्रान्ति के द्वारा पूंजीपति वर्ग का अन्त कर देगा और फिर सारे उत्पादन के साधन मजदूर वर्ग के हाथ में आ जायेंगे।

५. राज्य-सत्ता गरीबों के कुचलने की संस्था है:—

राज्य में शक्ति उन लोगों के हाथ में होती है जिनका कि उद्योग-धन्धों पर प्रभाव होता है और यह लोग इस प्रकार कानून बनाते हैं जिससे कि उनकी स्वयं की स्थिति दृढ़ होती है और मजदूर की स्थिति दिन प्रतिदिन गिरती है। इस कारण कार्ल मार्क्स का यह कहना है कि राज्य के होते हुए मजदूर की स्थिति कभी सुधर नहीं सकती। श्रमिकों की स्थिति सुधारने के लिए मजदूरों का प्रथम कर्तव्य है कि वो राज्य का क्रान्ति द्वारा अन्त करदे।

कार्ल-मार्क्स के सिद्धान्तों का समाजवाद की विचारधारा पर प्रभाव

जहाँ तक समाजवादवाले लोगों का सम्बन्ध है वो कार्ल-मार्क्स के अतिरिक्त मूल्यवाले सिद्धान्त से सहमत हैं और पूंजीपति वर्ग का अवश्य विरोध करते हैं। परन्तु इसके अतिरिक्त कार्ल-मार्क्स के अन्य सिद्धान्तों से सहमत नहीं है।

समाजवाद की परिभाषा:—

समाजवाद वह नीति अथवा सिद्धान्त है जिसका उद्देश्य भूमि एवं उत्पादन तथा वितरण के समस्त साधनों और औद्योगिक संगठनों के ऊपर सार्वजनिक स्वामित्व स्थापित करना होता है।

समाज की भिन्न-भिन्न विचार-धारायें:—

समाजवाद विचार-धारा को किस प्रकार से कार्य-रूप में लाया जाय, इसके सम्बन्ध में भेदभाव होने के कारण इसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के विचार उत्पन्न हो गये हैं। एक तो सम्मिलित समाजवाद (जो कि राज्य-समाजवाद अथवा राष्ट्रीय समाजवाद भी कहलाता है) दूसरा गिल्ड समाजवाद, तीसरा, गिल्ड सिंडीकेलिज्म (व्यवसायिक-संघवाद) आदि को जन्म दिया है। परन्तु भेदभाव होते हुए भी ये तीनों प्रकार के समाजवाद निम्नलिखित सिद्धान्तों पर जोर देते हैं—

समाजवाद की तीन महत्वपूर्ण बातों का वर्णन

१. भूमि तथा उत्पादन पर सार्वजनिक नियन्त्रण का होना:—

भूमि तथा उत्पादन के साधनों पर से व्यक्तिगत स्वामित्व को नष्ट कर देना चाहिए और उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये मुख्य-मुख्य औद्योगिक धन्धों तथा सेवाओं का स्वामित्व और नियन्त्रण सार्वजनिक होना चाहिए।

२. व्यक्तिगत लाभ की अपेक्षा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उद्योग-धन्धों का चलाना.—

उद्योग-धन्धे जाति की आवश्यकताओं को पूरा करने के उद्देश्य से चलाने चाहिये, न कि व्यक्तिगत लाभ को बनाने के ध्येय से। अतः उत्पादन का प्रसार तथा विस्तार सामाजिक आवश्यकताओं के आधार पर निश्चित होना चाहिये, व्यक्तिगत लाभ के आधार पर नहीं।

३. समाज-सेवा की भावना उत्पन्न करना:—

व्यक्तिगत लाभ की इच्छा के स्थान पर समाज-सेवा की भावना स्थापित करनी चाहिये। यह भावना आजकल पूंजीपतियों द्वारा रोकी जा रही है।

सम्मिलित समाजवाद की परिभाषा:—

सम्मिलित समाजवादी चाहते हैं कि उद्योग-धन्धों का स्वामी और नियन्त्रण करने वाला राज्य हो और इस कार्य को राज्य धीरे-धीरे अपनी क्रिया विस्तृत करता हुआ व्यक्तिगत पूंजी तथा लाभ को हटाकर वैधानिक साधनों द्वारा प्राप्त करे। राज्य प्रजातन्त्र हो और राजनैतिक शक्ति जनता के हाथ में हो। जनमत को समाजवाद के लिये शिक्षित करना चाहिये और भूमि तथा उत्पादनों के साधनों का राष्ट्रीयकरण ही प्रधान लक्ष्य होना चाहिए और व्यवस्थापिका सभा द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिये।

सम्मिलित समाजवाद के पक्ष की बातें:—

प्रथम तो यह कि वो उद्योग-धन्धे जिनमें एकाधिकार प्राप्त होता है उनमें प्रतियोगिता न होने के कारण जनता के स्वार्थ को बचाने के लिये उन उद्योग-धन्धों का राष्ट्रीयकरण करना आवश्यक है। दूसरे एकाधिकार उद्योग धन्धों को राष्ट्रीय-करण करने पर प्रतियोगिता के कारण प्रचार में रुपया अनर्थ खर्च होता है उसकी बचत होगी और वो रुपया जनता के लाभ में लगाया जा सकेगा। तीसरे उद्योग-धंधों पर पूंजीपति का आधिपत्य होने के कारण वो अच्छे प्रकार की वस्तुएँ तो अधिक मात्रा में निकालते हैं और सार्वजनिक प्रयोग की वस्तुएँ कम निकलती हैं जिससे पूंजीपति को तो लाभ होता है परन्तु साधारण व्यक्ति को उसकी आवश्यकताओं की चीजें सस्ते दामों में प्राप्त नहीं हो सकती। राष्ट्रीयकरण होने के कारण सार्वजनिक प्रयोग की वस्तुएँ अधिक मात्रा में बनाई जायेंगी, जिससे साधारण व्यक्ति को लाभ

होगा । चौथे इस नीति से लोगों का चरित्र सुधरेगा और उनमें नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न होगा । वर्तमान समय में भिन्न-भिन्न उद्योग-धन्धों में प्रतियोगिता रहती है और वो अधिक लाभ प्राप्त करने के लिये अनुचित कार्य करते हैं जिससे उनके चरित्र का विकास नहीं हो सकता । राष्ट्रीयकरण होने के कारण इन सब बातों का अन्त हो जायेगा । मजदूर-दल अपने को एक प्रकार के परिवार के सदस्य के समान समझेंगे और फिर फिर वो अधिक उपज करने का प्रयत्न करेंगे क्योंकि अधिक उपज होने से सब को बराबर का लाभ होगा । इस प्रकार उनका चरित्र सुधरेगा और नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न होगा ।

समाजवाद के विपक्ष की बातें:—

प्रथम तो यह कि वर्तमान राज्य का ढांचा इस प्रकार का है कि वो आर्थिक जिम्मेदारियों को सफलतापूर्वक संचालन नहीं कर पायेगा जिससे उत्पादन अधिक होने की अपेक्षा कम होगा । दूसरे, सरकार की जिम्मेदारियाँ अधिक होने से उसमें भ्रष्टाचार बढ़ेगा और उससे राज्य-प्रबन्ध खराब होगा । तीसरे, व्यक्ति निजी लाभ की भावना के कारण कार्य करता है । निजी लाभ न होने के कारण व्यक्ति को अपने कार्य में पूरी रुचि न होगी । जिस प्रकार आजकल सरकारी दफ्तरों में कर्म-चारी बिना उत्तरदायित्व के अपना काम कर रहे हैं । ठीक उसी प्रकार से मजदूर वर्ग कारखानों में कार्य करेंगे जिससे उत्पादन कम होगा और आर्थिक स्थिति सुधरने के बजाय गिरेगी ।

साम्यवाद

साम्यवाद का कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों पर निर्भर होना:—

समाजवाद पूंजीपति प्रथा का अवश्य विरोध करता है और इस दृष्टिकोण से वह कार्लमार्क्स के अतिरिक्त मूल्यवाले सिद्धान्त से सहमत है, परन्तु इसके अतिरिक्त वह कार्ल मार्क्स के दूसरे सिद्धान्तों से सहमत नहीं है । साम्यवाद, कार्ल मार्क्स के उन सारे सिद्धान्तों से

सहमत हैं जिनका कि हमने इस अध्याय के शुरू में वर्णन किया है। कार्ल मार्क्स का 'कम्यूनिस्ट मेनीफेस्टो' और 'कैपिटल' ये दोनों पुस्तकें साम्यवाद के लिये बाईबल के समान हैं।

राज्य का कठोर विरोध:-

साम्यवाद का यह विश्वास है कि राज्य के होते हुए पूंजीपति प्रथा का अन्त नहीं हो सकता। पूँजीपति प्रथा का अन्त करने के लिये राज्य का अन्त होना सब से प्रथम सिद्धान्त है।

राज्य का क्रान्ति द्वारा अन्त होना:-

राज्य का शान्ति प्रिय नीति के आधार पर अन्त नहीं हो सकता। उसका क्रांति द्वारा ही अन्त हो सकता है। राज्य का अन्त करने के लिये क्रांति पूर्ण रूप से संगठित होनी चाहिये। यह क्रांति साम्यवादी दल के सदस्यों के द्वारा ही हो सकती है। जिसके लिये वो विशेष रूप से शिक्षा देते हैं।

साम्यवाद के आधार पर समाज की अन्तिम रूपरेखा

वर्गहीन और बिना राज्य का समाज स्थापित करने का अन्तिम आदर्श:-

कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसार पूंजीपति के विरुद्ध इस प्रकार की क्रांति किसी विशेष देश की वस्तु नहीं है। बल्कि इससे संसार के श्रमिकों को उत्पादन की शक्तियों पर विजय प्राप्त करनें के लिये प्रयत्न करना है और जब कि यह क्रांति सारे संसार में सफलतापूर्वक हो जायगी तो एक वर्गहीन समाज स्थापित होगा जिसमें राज्य का भेद-भाव न होगा तथा वहाँ पर एक सच्चा साम्यवाद उत्पन्न होगा। वहां सच्चा प्रजातन्त्र स्थापित होगा। प्रत्येक व्यक्ति अपने इच्छुक समुदाय में रह कर वास्तविक स्वतन्त्राओं का अनुभव करेगा।

भिन्न-भिन्न प्रकार के समुदायः—

मजदूर, कारीगर, किसान, अध्यापक, विद्यार्थीगण इत्यादि हर एक के व्यवसाय के आधार पर भिन्न-भिन्न समुदाय होंगे। हर एक व्यक्ति अपनी रुचि के आधार पर समुदाय का सदस्य बन कर कार्य करेगा। रुचि के आधार पर काम करने के कारण कोई भी व्यक्ति आलसी बैठना स्वीकार नहीं करेगा। ऐसे समाज में वितरण का माध्यम नहीं होगा। हर एक समुदाय दूसरे समुदायों के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये सारी वस्तुओं का प्रबन्ध कर देगा। हर एक व्यक्ति अपनी योग्यता के आधार पर कार्य करेगा और वह समाज से उतनी ही वस्तुएं लेगा जो कि उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक हैं। इस प्रकार एक ऐसे समाज की नींव डलेगी जिसमें सम्पूर्ण समानता हो और वह वास्तविक रूप से वर्गहीन समाज हो।

बुरे व्यक्तियों का न होनाः—

साम्यवाद के सिद्धान्तों के अनुसार मनुष्य में प्रकृति से ही अच्छाइयां हैं, बुराइयाँ नहीं। राज्य का वातावरण मनुष्य में बुराइयां उत्पन्न कर देता है। जब कि राज्य का अन्त हो जायगा तो बुराई के विकास के लिये कोई अवसर प्राप्त नहीं होगा। पुलिस, खुफिया पुलिस, सेना, न्यायालय आदि की कोई आवश्यकता न होगी। यदि कभी साधारण भेद-भाव हुआ भी तो समुदायों के द्वारा ही नियत किये पंचों द्वारा उसका निर्णय हो जायेगा। इस प्रकार साम्यवाद का ध्येय एक आदर्श समाज उत्पन्न करना है जिसमें कि पूर्ण रूप से आर्थिक समानता स्थापित होगी और उसमें राज्य का कोई महत्व न होगा।

बीच के समय में तानाशाही राज्य स्थापित होनाः—

अन्तिम स्थिति से पहले और क्रांति के पश्चात् इस बीच के समय में एक तानाशाही राज्य स्थापित होगा। यह साम्यवादी दल का तानाशाही राज्य होगा, जब कि साम्यवादी दल मजदूर और किसान के

हित में राज्य-संचालन होगा। यह कठोर राज्य होगा जिसमें पूँजीपति वर्ग का अन्त किया जायगा। उद्योग-धंधों और भूमि पर राष्ट्रीय-करण होगा। भिन्न पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा मजदूर और किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने के उपाय किये जायँगे। इस प्रकार स्थिति सुधारने से आर्थिक समानता स्थापित होगी, जिससे कि राज्य की नींव कमजोर होती जायगी। अन्त में जब कि सम्पूर्ण आर्थिक समानता स्थापित हो जायेगी तो राज्य का अपने आप अन्त हो जायगा। क्योंकि उसका महत्व जाता रहेगा।

रूस में साम्यवाद की स्थापना

रूस एक कृषि-प्रधान देश था, जो कि उद्योग-धंधों के दृष्टि-कोण से बहुत पीछे था, परन्तु वहाँ पर किसान और साधारण जनता की स्थिति अधिक मात्रा में गिरी हुई थी। कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों को स्वीकार करनेवाले लोगों ने एक दल साम्यवादी-दल के नाम से स्थापित कर रखा था। जिसने कि प्रथम महायुद्ध के समय में रूस की इस गिरी हुई स्थिति का पूरे रूप से लाभ उठाया। १६१७ में रूस में क्रांति करके पूँजीपति का अन्त किया और कम्युनिस्ट पार्टी का तानाशाही राज्य स्थापित किया। रूस में इस प्रकार की क्रांति का होना, कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों को अनुचित सिद्ध करता है। इस प्रकार की क्रांति तो उस देश से शुरू होनी चाहिये थी जहाँ कि उद्योग-धंधों की पूर्ण रूप से उन्नति होचुकी हो, परन्तु ऐसे राज्य में क्रांति नहीं हुई। रूस के साम्यवादी दल के लोगों ने पूर्वी यूरोप की गिरी हुई स्थिति देखकर वहाँ भी क्रांति करानी चाही, परन्तु इसमें वे असफल रहे। बाद में उन्होंने इस अन्तर-राष्ट्रीय सिद्धान्त को राष्ट्रवाद का रूप दे दिया और दूसरे पूंजीपति राज्य जिनका कि नष्ट करना उनका ध्येय है उनसे हर प्रकार के सम्बन्ध स्थापित कर लिये। इस पर भी उनका अन्तिम ध्येय एक वर्गहीन और राज्यहीन समाज की स्थापना करना है।

कमीटर्न या तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना:—(१९१९-१९४३)

पूंजीपति राज्यों में क्रांति उत्पन्न करके अन्तिम आदर्श की प्राप्ति के लिये उन्होंने इस नाम की संस्था स्थापित की थी। इसमें साम्यवाद के सिद्धान्तों में विश्वास करनेवाले सारे लोग इस संस्था के सदस्य हैं। समय २ पर इसके अधिवेशन होते हैं और हर एक साम्यवादी-व्यक्ति को इन अधिवेशनों में जो निर्णय होता है उसको स्वीकार करके उनके आधार पर कार्य करना होता है। यह संस्था दूसरे प्रजातन्त्र राज्यों में अपने विचारों के प्रचार के लिये सदस्य भेजती है, आर्थिक सहायता देती है, सस्ते दामों में अधिक मात्रा में पुस्तकें बेची जाती हैं जिसमें कि इसके सिद्धान्तों का वर्णन इस प्रकार से किया जाता है कि साधारण जनता को यह मालूम हो कि साम्यवाद के स्थापित होने पर आसमान पर से स्वर्ग उतर कर पृथ्वी पर आ जायेगा और हर एक व्यक्ति ऐसे राज्य में सुख-शान्ति से अपना जीवन व्यतीत करेगा। दूसरे महा-युद्ध के समय में इस संस्था को भंग कर दिया गया था, परन्तु अब फिर वो नये रूप में Cominform के नाम से स्थापित हो गई है। इसका मुख्य स्थान तो Belgrad है और कहने को वो सूचना-विभाग है किन्तु वास्तव में उसका ध्येय अन्तर-राष्ट्रीय क्रान्ति उत्पन्न करना है।

समाजवाद और साम्यवाद की विशेषताएँ और उनका तुलनात्मक अध्ययन

(१) समाजवाद राज्य के पक्ष में और साम्यवाद इसके विरोध में:—

समाजवादी विचार-धारा के पक्ष में जो लोग हैं उनका यह विश्वास

है कि समाज-सुधार के लिये राज्य सबसे अधिक महत्वपूर्ण और उच्चतम संस्था है जिसके उत्तरदायित्व का विस्तार अधिक से अधिक मात्रा में बढ़ाना चाहिये। इसके विपरीत साम्यवादी विचारधारा के पक्ष के लोगों का यह विश्वास है कि राज्य मजदूर-दल को कुचलने के लिये पूंजीपति वर्ग का एक षड़यंत्र है और समाज-सुधार के लिये यह आवश्यक है कि इसका तुरन्त ही अन्त कर दिया जाय क्योंकि राज्य के होते हुए समाज में किसी प्रकार का सुधार नहीं हो सकता।

(२) दोनों पूंजीपति प्रथा के विरुद्ध में हैं:—

परन्तु साम्यवाद पूँजीपति प्रथा की अपेक्षा राज्य का अधिक विरोध करता है। समाजवादी विचारधारा के लोगों का यह विश्वास है कि पूंजीपति प्रथा के होते हुए मजदूर दल की स्थिति किसी भी दशा में नहीं सुधर सकती। इस कारण यह उद्योग-धंधों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में हैं। साम्यवाद पूँजीपति प्रथा का विरोध तो अवश्य करता है परन्तु राष्ट्रीयकरण की नीति के पक्ष में नहीं है। वह समाजवाद की इस नीति को पूँजीपति प्रथा के साम्राज्य की अन्तिम मंजिल बतलाता है। साम्यवाद का यह विश्वास है कि पूंजीपति प्रथा का अन्त करने के लिये राज्य का अन्त करना आवश्यक है।

(३) समाजवाद शान्तिप्रिय नीति के और साम्यवाद क्रांति के पक्ष में हैं:—

समाजवादी शान्ति-प्रिय नीति से अपना ध्येय प्राप्त करने की नीति के पक्ष में है और क्रान्ति के विरोध में है। साम्यवादी विचारधारा के लोगों का यह विश्वास है कि शान्ति-प्रिय नीति किसी भी स्थिति में सफल नहीं हो सकती है और पूंजीपति प्रथा का अन्त करने के लिए राज्य को क्रान्ति द्वारा समाप्त करना आवश्यक है।

(४) समाजवाद राष्ट्रीयता के पक्ष में और साम्यवाद अन्तर्राष्ट्रीयता और मनुष्यता के पक्ष में :—

समाजवाद राष्ट्रवाद के पक्ष में है। परन्तु अभिमान से भरा हुआ राष्ट्रवाद जो कि साम्राज्यवाद कहलाता है, उसके विरोध में है। परन्तु साम्यवाद राष्ट्रवाद के विरोध में है और इसका दृष्टिकोण अन्तर्राष्ट्रीयता और मनुष्यता से सम्बन्धित है। पूँजीपति के विरुद्ध क्रान्ति किसी विशेष देश की वस्तु नहीं है बल्कि संसार के सारे राज्यों में पूंजीपति वर्ग मजदूरों पर अत्याचार कर रहा है और इस समान अत्याचार की नीति के कारण वह एकता की लड़ी में जुड़ गये हैं जिस कारण से वह राष्ट्रवाद की भावना से प्रभावित नहीं होते हैं। श्रमिक-दल तो यह चाहता है कि किसी प्रकार से हर एक राज्य में मजदूरों को पूंजीपति प्रथा से छुटकारा मिल जाय। इस कारण साम्यवाद का अन्तर्राष्ट्रीय और मनुष्यता का दृष्टिकोण है उसका ध्येय समस्त संसार में एक क्रान्ति लाकर जब तक कि अन्तिम स्थिति उत्पन्न नहीं हो— मजदूर दल का तानाशाही राज्य स्थापित करना है।

५. समाजवाद उत्पादन पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के पक्ष में है, और साम्यवाद उत्पादन और वितरण दोनों पर आधिपत्य के पक्ष में हैं।

समाजवाद के दृष्टिकोण से केवल उत्पादन पर ही राज्य का आधिपत्य होगा परन्तु जहाँ तक कि वितरण का प्रश्न है इसके लिये हर एक व्यक्ति को स्वतन्त्रता होगी। परन्तु साम्यवाद उत्पादन और वितरण दोनों के आधिपत्य के पक्ष में हैं। सारी वस्तुएँ सार्वजनिक गोदाम में एकत्रित होगीं और हर एक व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुसार उसमें से वस्तुएँ लेगा।

६. समाजवाद में भिन्न-भिन्न वर्ग अवश्य होंगे परन्तु भेद-भाव कम होगा परन्तु साम्यवाद वर्गहीन समाज के पक्ष में हैं :—

समानता के बारे में समाजवाद का प्रजातन्त्र के आधार पर दृष्टि-कोण है। अर्थात् समान उत्तरदायित्व के लिये समान वेतन और असमान के लिये असमान वेतन। इस सिद्धान्त के आधार पर व्यक्तियों के उत्तरदायित्व पर महत्त्व है न कि उनकी आवश्यकताओं पर। समाजवाद में भिन्न २ प्रकार के वर्ग अवश्य होगें परन्तु एक वर्ग का दूसरे वर्ग से अधिक मात्रा में भेद-भाव नहीं होगा परन्तु हर एक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति अवश्य होगी। साम्यवाद इसके विरुद्ध सिद्धान्त में विश्वास करता है। हर एक व्यक्ति से उसकी योग्यता के अनुसार काम लिया जायगा परन्तु उसकी सेवाओं के बदले में उसे उतना ही दिया जायगा जितना कि उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक है। इस प्रकार वह सम्पूर्ण आर्थिक समानता के पक्ष में है जिससे कि एक वर्गहीन समाज की स्थापना हो जाय।

७. समाजवाद वितरण के माध्यम के पक्ष में है, साम्यवाद इसके विरुद्ध है।

समाजवाद वितरण के माध्यम के पक्ष में है, जिसका कभी अंत नहीं हो सकेगा। परन्तु साम्यवाद का यह कहना है कि अन्तिम स्थिति में जब कि बिना राज्य का वर्गहीन समाज स्थापित हो जायगा और हर एक चीज सार्वजनिक गोदाम से मिलेगी उस समय वितरण के माध्यम की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी।

अन्त में इन सब बातों से यह सिद्ध हो जाता है कि समाजवाद एक वास्तविक विचार-धारा है जिसको कि एक कार्य रूप का वस्त्र पहनाया जा सकता है परन्तु साम्यवाद सैद्धान्तिक है, एक प्रकार का स्वप्न है, धोखे की टट्टी है जिसको कि वास्तविकता का रूप देना असम्भव है।

दक्षिणी-पूर्वी एशिया में साम्यवाद का भय :—

मलाया, इन्डोनेशिया, इन्डोचीन, थाईलैन्ड और ब्रह्मा इन सब राज्यों में वहाँ के नागरिकों के अतिरिक्त चीनी और भारतीय मनुष्य भी अधिक संख्या में बसे हुए हैं। जहां तक भारतीय मनुष्यों का सम्बन्ध है, भारत-सरकार ने अपनी नीति की घोषणा स्पष्ट शब्दों में करदी है कि वे भारतीय जो इन राज्यों में बसे हुए हैं उनको वहाँ की नागरिकता स्वीकार करके वहां के नागरिकों के साथ मिल-जुल कर रहना चाहिये।

चीनी लोगों की स्थिति :—

जहां तक चीनी लोगों का सम्बन्ध है अभी तक चीन सरकार की यह नीति थी कि किसी चीन के नागरिक को जो कि दूसरे राज्य में रह रहा हो, चीन की नागरिकता को अस्वीकार करके उस राज्य की नागरिकता ग्रहण करने का अधिकार नहीं है। इस प्रकार यह लोग अनागरिकता की स्थिति के आधार पर वहां रह रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि चीन के लोग उस राज्य के देश भक्त नहीं है जहां कि वे रह रहे हैं, बल्कि वो चीन-राज्य के देश भक्त हैं। इस नीति से राज्यों में इनके कारण अशान्ति होना कुछ आश्चर्य की बात नहीं है, जब कि चीन में साम्यवाद की विचार-धारा के आधार पर राज्य स्थापित हो गया है तो चीन के लोग इन राज्यों की सरकारों की आँखों में और भी अधिक खटकने लगे। चाउ-एन-लाई जब कि देहली आए थे, तब यह समस्या उनके सामने भी रखी गई थी और उन्होंने इस पर सोच-विचार करके इसको सुलझाने का आश्वासन दिया था। कुछ समय पहले अक्टूबर के माह में चीन-सरकार के वार्षिक उत्सव के समय पर चीन के राष्ट्रपति (Mao-Tse-Tung) माओ टिसी टंग और चीन के प्रधान-मंत्री चाऊ-एन-लाई ने इन समस्याओंको हल करने के उपाय भी बतलाये थे। उन्होंने कहा था कि चीनी लोग जो कि इन देशों में रह रहे हैं

उनको इन दो में से एक पद ग्रहण करना होगा । प्रथम तो यह उन लोगों को जहां वो रह रहें हैं उस राज्य की नागरिकता स्वीकार कर लेनी चाहिये और फिर चीन सरकार को उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा । द्वितीय, यह कि यदि वो उस राज्य की नागरिकता अस्वीकार करते हैं और चीन के नागरिक होना ही स्वीकार करते हैं तो ऐसी स्थिति में उनको उस राज्य में अनागरिक बन कर रहना होगा और उस राज्य की प्रथा, कानून और अन्य बातों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करना होगा । उस नीति के आधार पर यदि कार्य किया गया तो कुछ सीमा तक दक्षिणी-पूर्वी एशिया में अशान्ति कम हो सकती है ।

प्रजातन्त्र राज्यों का साम्यवाद के विरोध करने का कारण :—

पहले समय में या तो एक राज्य दूसरे राज्य का मित्र होता था या उसका शत्रु । इस प्रकार हर एक राज्य को अपनी स्थिति का पूरा २ ज्ञान होता था । वर्तमान समय में हर एक राज्य के राष्ट्रीय दलों में एक अन्तर-राष्ट्रीय दल की स्थापना हुई है, जो कि राष्ट्रीय दलों का विरोध करता है और यह अन्तर-राष्ट्रीय दल, मानसिक, भावात्मक, बौद्धिक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से दूसरे राज्य के राष्ट्रीय दल से बंधा हुआ है । इस कारण हर एक राज्य को यह भय लगा रहता है कि वो राज्य जिनसे कि इन राष्ट्रीय दल का सम्बन्ध है, उसके ये लोग गुप्तचर हैं और वो राज्य इनको अपने हित की प्राप्ति के लिये उपयोग में लायेगा । इस भय के कारण हर एक राज्य में अशान्ति है । अमेरिका के एक प्रसिद्ध लेखक विक्टर एल० एलबर्ज (Victor L. Alberg) ने अपनी पुस्तक १९१४ से वर्तमान समय तक के यूरोप में ८०७ पृष्ठ पर लिखा है कि रूस के बाहर १,२०,००,००० साम्यवाद को स्वीकार करनेवाले लोग हैं जो कि भिन्न २ प्रजातन्त्र राज्यों में बसे हुए हैं और इन लोगों को प्रजातन्त्र राज्य रूस का गुप्तचर समझते हैं । कोमिन फोर्म जो कि युद्ध से पहले स्थापित थी उसका ध्येय स्पष्ट शब्दों में

अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्ति कराना था। वर्तमान समय में 'कोमिन-फार्म' जो स्थापित हुई है, कहने को तो वह सूचना विभाग है, परन्तु लोगों का यह विश्वास है कि यह पुरानी संस्था नये नाम से स्थापित की गई है। जिसका ध्येय अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्ति उत्पन्न कराना है। इन सब बातों के कारण प्रजातन्त्र राज्यों को इस दल का हमेशा भय लगा रहता है और वे इसका विरोध करते है। इस स्थिति का अनुभव भारत के नागरिकों को पूरे रूप से हो सकता है। भारत में जो मुसलमान रहते हैं वे भारत के नागरिक हैं, परन्तु मुसलमान होने के कारण हममें से कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जो इनको पाकिस्तान का गुप्तचर समझते हैं। जब कोई अनुचित घटना हमारे यहाँ हो जाती है तो उसके लिये हम मुसलमानों पर दोष लगाते हैं और उनको जिम्मेदार ठहराते हैं। ठीक यही स्थिति साम्यवाद दल की प्रजातन्त्र राज्यों में है।

हिन्दुस्तान व चीन की आर्थिक नीति की विशेषताएँ और उनका तुलनात्मक अध्ययन

भारत की मिश्रित आर्थिक नीति

सरकारी क्षेत्र का वर्णन:—

भारत ने मिश्रित आर्थिक नीति ग्रहण की है जिसके तीन क्षेत्र हैं। सरकारी क्षेत्र में उच्च कोटि के व्यवसायिक कारखानों और एकाधिकार वस्तुओं की उत्पत्ति के लिये राष्ट्रीयकरण और राष्ट्रीय आधिपत्य की नीति ग्रहण की है। मशीनों औजारों के नमूनों का कारखाना अंबरनाथ में स्थापित किया गया है। जहाँ पर कि शस्त्रास्त्रों के कारखानों में उपयोग के लिये आवश्यक मशीनों के औजार और विशेष किस्में तैयार की जायेंगी। बंगलौर के पास जलहल्ली एक कारखाना बना है जिसमें औद्योगिक कार्यों के लिये उपयोग में आनेवाले सूक्ष्म व मशीनी

औजार तैयार किये जा रहे हैं। पश्चिमी बंगाल में रूपनारायण के स्थान पर एक अंग्रेजी फर्म की टैकनिकल सहयोग से एक टेलीफोन केबिल कारखाना स्थापित हुआ है जो कि हर साल ४६० मील लम्बे पेपर इन्स्यूलेटेड केबिल तैयार करेगा। इसी प्रकार टेलीफोन बनाने का कारखाना भी तैयार किया गया है। एक फ्रांसीसी फर्म की सहायता से वायरलैस कारखाना भी बना है जिसमें वायरलैस यंत्र सम्बन्धित भाग और वल्व तैयार होंगे। परिवहन और संचार की उन्नति के लिये चितरंजन लोकोमोटिव वर्क्स का कारखाना बना है जो एशिया में अपने ढंग का सबसे बड़ा कारखाना है और १९५५ तक भारत में आवश्यकतानुसार इंजन और डिब्बे तैयार किये जायेंगे। मद्रास के प्रेम्बूर नामक स्थान पर एक रेल के डिब्बे बनाने का कारखाना स्थापित किया गया है। स्टीम नेवीगेशन शिपयार्ड कम्पनी को केन्द्रिय सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया है और उसकी उन्नति के लिये पूरी कोशिश हो रही है। सार्वजनिक स्वास्थ्य की उन्नति के लिये मलेरिया के रोकथाम के लिये डी. डी. टी. बनाने का कारखाना देहली में खोला गया है और स्वास्थ्य को सुधारने के लिये पेंसिलीन बनाने का कारखाना पूना के पास खोला गया है। नदी घाटी योजनाओं के द्वारा जमीन की सिंचाई का प्रबन्ध हो सकेगा और बिजली की शक्ति से कारखानों को सहायता पहुंचेगी। यह सब सरकारी क्षेत्र हैं जिसमें कि साम्राज्यवाद के आधार पर राष्ट्रीयकरण की नीति स्वीकार की गई है।

गैर सरकारी क्षेत्र:—

कपड़े बनाने का कारखाना, शक्कर बनाने का कारखाना, जूट या सन बनाने का कारखाना और इस प्रकार के दूसरे कारखाने जो कि पहले से स्थापित हैं उनका प्रबन्ध ठीक रूप से चल रहा है और अधिक मात्रा में उत्पादन करके समाज सेवा कर रहे हैं। यह सब गैर सरकारी मनुष्यों के हाथ में ही रहेंगे और राष्ट्रीयकरण की नीति इन

पर लागू की गई हैं। गैर-सरकारी क्षेत्र को देखते हुए सरकार की नीति पूँजीपति प्रथा को भी साथ-साथ जारी रखने की है।

सरकार और सार्वजनिक जनता को कुछ क्षेत्रों में मिलकर कार्य करना:—

फौलाद के दो प्रसिद्ध कारखाने काफी सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं। एक तो मैसूर लोहा और इस्पात वर्क्स, दूसरा टाटा लोहा और इस्पात कम्पनी लिमिटेड। इसके अतिरिक्त दो और कारखाने हैं। स्टील कार्पोरेशन बंगाल और इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी। ये दोनों कम्पनियाँ मिला दी गई हैं और मिलजुल कर अधिक मात्रा में लोहे के उत्पादन की क्षमता को बढ़ायेंगे। ये तीन कारखाने भी राज्य की आवश्यकता को पूर्ण नहीं कर पायेंगे। इन तीन कारखानों पर भी राष्ट्रीयकरण की नीति स्वीकार नहीं की जायेगी और गैर सरकारी व्यक्तियों के हाथ में प्रबन्ध होते हुए भी इसका काम बढ़ाने का प्रबंध हो रहा है। परन्तु यह सब उपाय करने पर भी इस्पात की माँग और उसकी प्राप्ति के बीच खाई फिर भी बाकी रह जायगी। इस कमी को पूरा करने के लिये सरकार एक फौलाद का कारखाना खोलने का प्रबन्ध कर रही है। जिससे उत्पादन इतनी अधिक मात्रा में हो जावे कि देश की मांग पूर्ण हो सके।

भूमि और खेती के सम्बन्ध की नीति.—

खेती बाड़ी की उन्नति के लिये एक सही भूमि-नीति का होना आवश्यक है। जमींदारी और जागीरदारी की प्रथा को अन्त करने की एक स्थायी नीति इस सम्बन्ध में ग्रहण की है और कई प्रान्तों में जागीरदारी और जमींदारी की प्रथा का अन्त हो गया है और जमीन के मामले में हमको सब तरह के बिचवैयों को हटाना है। इसके पश्चात् भूमि की लम्बाई, चौड़ाई की हद नियत करनी है, जिससे कि सहकारी

खेती हो सके और नये-नये खेती के उपायों से लाभ उठाकर उत्पादन को अधिक करना है। इस प्रकार खेती और उद्योग-धन्धों दोनों के उत्पादन को बढ़ाना है। और भारत कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत सरकार देहाती और घरेलू विकास और उन्नति का पूरा पूरा प्रबन्ध कर रही है।

सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्र में अन्तर:—

इन दोनों में मात्रा का ही अन्तर है। गैर-सरकारी क्षेत्र में भी उद्योग धन्धों का प्रबन्ध भी जनता के हित में किया जा रहा है उनको राज्य के कानून और नियम के आधिपत्य में ही अपना प्रबन्ध करना होता है। इस प्रकार दोनों का भेदभाव कम हो रहा है। कुछ क्षेत्र में दोनों एक साथ कार्य कर रहे हैं। इस प्रकार आपस की मित्रता दिन-प्रति दिन अधिक हो रही है और दोनों का ध्येय उत्पादन बढ़ाना है जिससे निर्धनता दूर हो।

चीन की आर्थिक नीति :—

चीन की सरकार ने जो १९५३ की आर्थिक नीति का वक्तव्य प्रकाशित किया है उससे यह प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि चीन की आर्थिक नीति भी हिन्दुस्तान की आर्थिक नीति से बहुत कुछ मिली-जुली है। चीन के राष्ट्रीय उद्योग-धन्धों में ५३ प्रतिशत सरकार का उत्पादन हो रहा है। दूसरे वह उद्योग-धन्धे जिसमें राज्य और पूंजीपति मिलकर कार्य कर रहे हैं उनसे ९ प्रतिशत उत्पादन हो रहा हैं। तीसरे, पूँजीपति द्वारा जो उत्पादन हो रहा है वह ३८ प्रतिशत है। चीन की कृषि-नीति भी इसी आधार पर है।

दोनों राज्यों की आर्थिक नीति की तुलना :—

चीन की सरकार तानाशाही दृष्टिकोण के आधार पर है और भारत सरकार प्रजातन्त्र के आधार पर। चीन में उत्पादन भारत की

अपेक्षा कम है । चीन की सरकार को पूँजीपति प्रथा का तुरन्त ही अन्त करके राष्ट्रीयकरण करने का पूर्ण अधिकार है; परन्तु उसने यह नीति ग्रहण नहीं की है । इससे यह सिद्ध हो जाता है कि स्थिति के आधार पर ही इनमें परिवर्तन करके प्रारम्भ करने से ही लाभ हो सकता है । दोनों देश भिन्न-भिन्न विचार धारा को स्वीकार करते हुए भी एक ही प्रकार की आर्थिक नीति को ग्रहण कर रहे हैं इससे प्रत्यक्ष है कि साम्राज्यवाद, साम्यवाद और इस प्रकार के अन्यवाद ये सब सैद्धान्तिक हैं और इनका वास्तविक रूप में महत्व बहुत कम है । इसी सिद्धान्त का अध्ययन करके उसके पक्ष या विरोध में हो जाना मूर्खता है, बुद्धिमता नहीं । विचार-धारा वास्तविक वस्तु नहीं है, परन्तु मनुष्यों की परिश्रम करने की इच्छा, उनका अनुशासन और लोगों में समाज-सेवा की लगन, जितनी अधिक मात्रा में यह गुण लोगों में होंगे उतनी ही शीघ्रता से देश की उन्नति होगी । भारत की उन्नति इन गुणों के विकास पर ही संभव है ।

जवाहर लाल नेहरू का कथन :—

लोग बड़ी-बड़ी बातें करते हैं कि रूस में यह हालत है और वहाँ यह होता है लेकिन वे यह नहीं देखते कि रूस उन्नति के मार्ग पर तभी अग्रसर हो सका है जब वहाँ के लोग उसे समृद्ध बनाने में तन-मन-धन से जुट गये और उसके लिये २०-२५ साल तक फ़ाके भी किये, अधपेट भी रहे । लोग कोरी बातें करना छोड़ दें, दूसरे देशों का अनुकरण परिश्रम व त्याग म करना चाहिये । जब तक इस विशाल देश के सब निवासी एक होकर और सच्चे दिल से अधिक सम्पत्ति पैदा करने के लिये तत्पर नहीं होगें और उसकी वृद्धि को बनाये नहीं रखेंगे तब तक देश आगे नहीं बढ़ सकता और गरीबों की हालत नहीं सुधर सकती । जब तक कि लोग स्वंय परिश्रम न करें केवल विचार-धारा से उन्नति नहीं हो सकती ।

———————

अध्याय तेईसवाँ

सर्वोदय समाज तथा भूमिदान

मेरी प्रार्थना है कि अब देने का जमाना आया है। यह ईश्वरीय प्रेरणा है। आप सब लोग दिल खोलकर दीजिए। भूमिदान, सम्पत्तिदान, बुद्धिदान, श्रमदान, जो कुछ भी दे सकें दीजिये। देने से एक दैवी सम्पत्ति प्रकट होती है। उसके सामने आसुरी सम्पति टिक नहीं सकती।

दान देने में भ्रातृ-भाव की मैत्री की भावना प्रकट होती है। जहाँ दूसरों की फिक्र की भावना जागती रहती है, वहां समत्व बुद्धि प्रकट होती है, वहाँ बैर-भाव टिक नहीं सकता। पुण्य में ताकत होती है, पाप में कोई ताकत नहीं होती।

यह भूदान-यज्ञ जीवन-परिवर्तन का प्रयोग है। यदि हमारी समाज-रचना में फौरन परिवर्त्तन नहीं होता है तो हम सब नष्ट हो जायेंगे। अतएव समय रहते चेत जाइये।

—विनोबा।

सर्वोदय समाज की स्थापना :

गांधीजी की मृत्यु के पश्चात् सन् १९५१ ई० में उनके साथियों ने वर्धा में सर्वोदय नाम की एक संस्था स्थापित की है, जिसका कि ध्येय गाँधीजी के सिद्धान्तों का प्रचार करना है।

रामराज्य स्थापित करने का प्रयत्न :—

राम राज्य से गाँधीजी का अर्थ एक ऐसा समाज स्थापित करना है जिसमें कि धनवान और निर्धन हर प्रकार के मनुष्य के लिये बराबर

का स्थान हो। यह एक प्रकार से वर्ग-हीन समाज होगी जिसमें कि हर एक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्त्ति होगी। धनवान व्यक्ति अपने धन को समाज की अमानत समझेगा और अपनी आवश्यकताओं की पूर्त्ति के पश्चात् जो धन बच जायेगा उसको समाज के लाभ में खर्च करेगा। यह समाज प्रेम, सत्य और अहिंसा के आधार पर होगी। हर एक व्यक्ति पहले अपने में परिवर्त्तन लायेगा। कष्ट और दुःख पहले स्वयं उठायेगा और उसका प्रभाव दूसरों के हृदय पर पड़ेगा। उनमें भी एक प्रकार का परिवर्त्तन आ जायेगा। इस प्रकार गाँधीजी का ध्येय इस नीति के आधार पर लोगों में उत्तर-दायित्व उत्पन्न करना था। सर्वोदय समाज का ध्येय भी इसी नीति के आधार पर पहले व्यक्ति स्वयं में और फिर समाज में परिवर्त्तन लाना है।

सर्वोदय समाज का कार्य-क्रम :—

सर्वोदय समाज के कार्य-क्रम में भिन्न-भिन्न बातें सम्मिलित हैं। साम्प्रदायिकता को मिटाना, और हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करना।

छूत-छात की भावना को दूर करना, खादी का प्रचार, देहाती और घरेलू उद्योग-धंधों का विकास कराना, गाँव में सफाई का वातावरण उत्पन्न कराना, औरतों, किसान और मजदूरों की स्थिति को सुधारना, आर्थिक समानता स्थापित करना और इस प्रकार के दूसरे कार्य करना जिससे समाज का स्तर ऊँचा हो।

श्री विनोबा भावे का भूमिदान-यज्ञ :—

विनोबा भावे का सन् १९१६ में गाँधीजी से परिचय हुआ था। जब ही से विनोबाजी ने गांधीजी के आश्रम में रहना शुरू कर दिया। गाँधीजी पर आपका बहुत प्रभाव पड़ा और सन् १९४० ई० में कान्ग्रेस में महात्मा गाँधीजी की अध्यक्षता में व्यक्तिगत सत्याग्रह आरम्भ

हुआ । महात्माजी ने विनोबा भावे को सबसे पहला सत्याग्रही चुना था और अपने हरिजन पत्र में विनोबाजी की बहुत प्रशंसा की थी ।

भूदान-यज्ञ की प्रेरणा, आरंभ और विकास :—

सन् १९५१ ई० में शिवराम पल्ली (हैदराबाद में) सर्वोदय सम्मेलन में भाग लेने विनोबाजी वर्धा से पैदल रवाना हुए और असेम्बली में भाग लेने के पश्चात् वो तैलिंगाना गये जहाँ पर कि उन्होंने एक सभा में ८० एकड़ भूमि की मांग रक्खी । उनको यह विश्वास नहीं था कि यह मांग स्वीकार हो जायेगी, परन्तु रामचन्द्र नाम के व्यक्ति ने कहा, महाराज यह लीजिये, यह सौ एकड़ भूमि आपको देता हूं । विनोबाजी ने यह हरिजन लोगों को कृषि के लिये दे दी, परन्तु इनसे उनकी आँखें खुलीं और विनोबाजी को यह विश्वास हो गया कि इस प्रकार की प्रार्थना और लोगों से की जाय तो दूसरे लोग भी सहायता करने को तैयार हो जायेंगे । तब से सर्वोदय समाज ने भूमि दान का रूप ग्रहण कर लिया है ।

भूदान-यज्ञ की गंगा का प्रवाहित होना :—

इसी समय से प्रेम के द्वारा श्री विनोबाजी भूमि का दान देने के लिये लोगों को प्रभावित कर रहे हैं । तैलिंगाना में ही १०,००० एकड़ भूमि मिली । तैलिंगाना से वर्धा आये और वर्धा से देहली गये । देहली के पश्चात् उन्होंने उत्तर प्रदेश का दौरा किया और आजकल वो बिहार में दौरा कर रहे हैं । अभी तक उनको २४ लाख एकड़ भूमि मिल चुकी है । वो चाहते हैं कि सन् १९५७ तक ५ करोड़ एकड़ भूमि का जो संकल्प किया है वो पूरा हो जाय और इस समय तक इसका वितरण भी हो जाय ।

भूमिदान-यज्ञ के विचार का विस्तार:—

आरंभ में तो यह भूमि पर ही सीमित था, परन्तु अब उसका

विस्तार अधिक हो गया है। इसमें सम्पत्तिदान, श्रमदान, बुद्धिदान और जीवनदान भी सम्मिलित है। इसका ध्येय समाज में हर प्रकार का परिवर्त्तन लाना है। पहले व्यक्ति में परिवर्त्तन आना चाहिए और उसमें परिवर्त्तन आने पर समाज में स्वयं ही परिवर्त्तन आ जायगा। इस प्रकार इसका ध्येय सत्य, प्रेम और अहिंसा के आधार पर व्यक्ति में नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न करना है जिसके उत्पन्न होने पर व्यक्ति अपने धन, अपनी बुद्धि, कार्य करने की शक्ति और अपने जीवन को समाज से दी हुई अमानत समझेगा और फिर वो हर प्रकार से समाज की सेवा करने के लिये तैयार रहेगा, इस प्रकार समाज में एक नया वातावरण उत्पन्न होगा।

भूदान की विशेषतायें और साम्यवाद से तुलनात्मक अध्ययन:—

दोनों का ध्येय एक वर्गहीन और बिना राज्य की समाज स्थापित करना है, परन्तु दोनों के रास्ते भिन्न रहे हैं। साम्यवाद तलवार के आधार पर गुप्त षड़यन्त्र रच कर राज्य का अन्त करना चाह रहे हैं। भूदान इस नीति के विरोध में है। वो सत्य, अहिंसा और प्रेम द्वारा ही परिवर्त्तन चाहता है।

हिंसा द्वारा परिवर्त्तन का प्रभाव:—

तलवार के आधार पर हम पूँजीपति का धन छीन कर अवश्य उसको साधारण व्यक्ति बना सकते हैं, परन्तु इस नीति से उसके हृदय से लोभ, मोह और तृष्णा का भाव कम नहीं होता। यह भाव उसके हृदय में होने के कारण किसी न किसी समय पर वो एक भयानक रूप ग्रहण कर लेगा। इस प्रकार साम्यवाद से समाज का बाहरी रूप बदला जा सकता है, परन्तु मनुष्य के हृदय में परिवर्त्तन न आने के कारण यह स्थायी नहीं है।

भारत के सन्यासियों का उदाहरण:—

भारत के नागरिकों को इस नीति का पूरा अनुभव है। हमारे

भारत में कई ऐसे व्यक्ति हैं जो गेरुआ कपड़े पहन लेते हैं और संसार को त्याग देते हैं, परन्तु उनके हृदय में काम, क्रोध, लोभ, मोह और तृष्णा के भाव रहने के कारण वो गेरुए कपड़े की आड़ में हर प्रकार का भ्रष्टाचार करते हैं। ठीक यही स्थिति साम्यवाद की है, उनके समाज का ढांचा गेरुए कपड़े का महत्व रखता है और इस कारण वो अन्दर खोखला और अस्थायी है।

भूमिदान से अर्थ मनुष्य में परिवर्तन लाकर समाज में परिवर्तन लाना है।—

भूदान का ध्येय मनुष्य के हृदय में परिवर्तन लाना है, क्रोध, लोभ, मोह और तृष्णा की भावना को कम करना है। प्रथम तो उसके कर्मचारी स्वयं अपनी सब चीजों का बलिदान करते हैं और इस प्रकार अपने आदर्श से दूसरों को प्रभावित करते हैं। उनके हृदय में परिवर्तन लाते हैं और इस प्रकार उनमें एक नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न होता है। इसका प्रभाव समाज पर अवश्य स्थायी रूप से पड़ता है।

भूमि द्वारा परिवर्तन आरम्भ करने का कारण:—

इस यज्ञ का आरम्भ भूमि से अवश्य हुआ है क्योंकि प्रथम तो यह हिन्दुस्तान की कठिन समस्या थी और द्वितीय सब लोग आसानी से स्वीकार कर सकते हैं, कि वायु और जल के समान, भूमि भी समाज की एक वस्तु है, जिससे सभी लोगों को इससे लाभ उठाने का अवसर मिलना चाहिये। इस कारण भूमि के मांग के द्वारा इस नयी विचार-धारा का प्रचार करना आसान था। यह विचार अब पांच लाख व्यक्तियों में प्रचलित हो चुका है जिससे एक नया वातावरण उत्पन्न हुआ है और इसका नये क्षेत्रों में प्रचार होना शुरू हुआ है।

इस नीति का वर्तमान विस्तार:—

भूमि के आधार पर एक नया वातावरण उत्पन्न करके अब

विनोबाजी सम्पत्तिदान की ओर समाज का ध्यान दिला रहे हैं ! वो किसी से सम्पत्ति नहीं माँगते। उनका कहना है अपनी सम्पत्ति का ⅙ हिस्सा समाज की भलाई में खर्च करो और इसका हिसाब भी तुम्हीं रक्खो ! इस प्रकार उनका ध्येय व्यक्ति में नैतिक उत्तरदायित्व उत्पन्न कराना है ! जिनके पास जमीन और धन नहीं है वो श्रमदान द्वारा समाज की सेवा करें। बुद्धमान लोगों से उनका कहना है कि अपनी बुद्धि द्वारा रचनात्मक योजनायें बनाकर समाज सेवा करो। वो लोग जिनको विश्वास हो गया है। यह भूदान द्वारा एक ठोस और स्थायी रूप से समाज में क्रांति हो सकती है। उनको इसकी प्राप्ति के लिये अपना जीवन बलिदान कर देना चाहिये। इस प्रकार का परिवर्तन साम्यवाद द्वारा स्थापित नहीं हो सकता। उसकी नीति से समाज का ऊपरी ढांचा बदला जा सकता है परन्तु मनुष्य के हृदय में परिवर्तन नहीं आ सकता है।

वर्गहीन और राज्यहीन समाज की स्थापना करना:—

भूमिदान का अर्थ एक राजनैतिक दल बनाकर व्यवस्थापिका सभा में सदस्यों का बहुमत करके राज्य संचालन करना नहीं है। हर एक व्यक्ति को अपने में काम, क्रोध, लोभ, मोह, तृष्णा और स्वार्थ की मात्रा को कम करना है और अपने में परिवर्तन लाकर समाज में परिवर्तन लाना है। इसका ध्येय लोगों में सरकार पर निभर न होकर अपना कार्य स्वयं करने की भावना को विकास देना है। जितनी कि ये भावना लोगों में अधिक मात्रा में हो जायेगी उतना ही वो राज्य पर कम निर्भर होंगे और इस प्रकार राज्य का महत्व दिन प्रति दिन कम होता जायगा। भविष्य में क्या होगा यह कोई नहीं कह सकता, परन्तु यह अवश्य निश्चित है कि यदि हम इस मार्ग पर चलें और अपने में परिवर्तन करते जाँय और जब हम अपना पूरा परिवर्तन करलें तो अवश्य हम एक वर्गहीन समाज स्थापित करने में सफ़ल

होंगे और फिर राज्य का महत्व जाता रहेगा। इसके लिये अपने पर अंकुश लगाना, मेलजोल स्थापित करना, एक दूसरे से सहानुभूति प्रकट करने की आवश्यकता है। इसका अर्थ चरित्र को सुधारना है। जितना हम उसमें सफल होंगे उतना ही हम अपने ध्येय के नजदीक पहुँचेंगे।

साम्यवाद का वर्गहीन समाज स्थापित करने का ध्येयः–

साम्यवाद का भी ध्येय अंतिम स्थिति में एक वर्गहीन समाज स्थापित करना है। यह साध्य आवश्यक उच्च कोटि का है परन्तु उसके साधन गलत हैं। साम्यवाद के लोग पहले तो षड्यन्त्र द्वारा समाज में एक परिवर्तन लायेंगे और फिर एक तानाशाही राज्य स्थापित करके अन्त में वर्गहीन समाज स्थापित करेंगे। उनका विश्वास है कि तानाशाही राज्य का स्वयं ही अन्त हो जायेगा, परन्तु जो वर्तमान समय में हो रहा है वो इसके विपरीत है। तानाशाही राज्य कमजोर होने की अपेक्षा दिन प्रति दिन अधिक शक्तिशाली बन रहा है, जिसमें व्यक्ति का महत्व कम हो रहा है। इस नीति के आधार पर यह विश्वास करना असम्भव है कि भविष्य में किसी भी समय पर राज्य का अन्त हो जायेगा। यदि हमें राज्य का अन्त करना है तो आज ही से ऐसी नीति ग्रहण करनी चाहिये कि लोग राज्य पर कम निर्भर हों और अपने ऊपर अधिक; जो कि भूमिदान की नीति है।

भूमिदान और साम्यवाद का महत्वः–

भूमिदान की प्रथा हमारे देश की परम्परा के आधार पर है। वो एक ठोस नीति है जिससे कि मनुष्य का चरित्र ऊंचा उठता है। शान्ति का वातावरण उत्पन्न होता है और समस्त मनुष्य जाति उन्नति के मार्ग में एक पग आगे रखती है। इसके विचार भावात्मिक,

बौद्धिक और मानसिक दृष्टिकोण से किसी दूसरे राज्य की राष्ट्रीय दल से बँधे हुए नहीं है और इस कारण इसका अधिक महत्व है। साम्यवाद एक-दूसरे देश के परम्परा के आधार पर है। यहाँ की स्थिति विपरीत होने के कारण इसका महत्व कम है, इससे मनुष्य का चरित्र गिरता है। दूसरे देश की भावात्मिक, बौद्धिक और मानसिक दृष्टिकोण से बँधी होने के कारण इसके स्वीकार करने वाले विदेशी देश के जासूस के समान समझे जाते हैं। लोगों को हमेशा भय और बहम लगा रहता है, समाज में अशान्ति रहती है, मनुष्य जाति की उन्नति रुकती है। किसी विदेशी विचारधारा को अपनी देश की स्थिति के विपरीत होने पर भी उसका प्रचार करना अज्ञानता है, बुद्धिमता नहीं। भूमिदान की विधारधारा ठोस सिद्धान्तों पर निर्भर है और इसी से भारत और सरकार का कल्याण होगा। सत्य मेव जयते।

Bring to this Country once Again

That Blessed name which made

The land of thy birth

Sacred to all distant lands,

INTER CIVICS—First Paper, 1951 (Civics Theory)

1. Explain the term 'Society' and discuss the relation between Man and Society. (Read pages 51 to 57)

2. Explain the influence of religion on civic life with particular reference to Indian conditions. Has it been a help or hindrance ? (Read pages 59 to 69)

3. Define the rerm 'Sovereignty of State' What are its chief charcteristics ? (Read pages 71 to 73)

4. Explain the term 'Equality'. How is it realated to liberty ? (Read pages 123 to 130)

5. What are the chief functions which legislatures perform in modern States ? (Read pages 100)

6. What is meant by 'Local Self-government' ? Explain its importance in civic life (Read pages 218 to 221)

7. What do you understand by Imperialism' ? what are its chief evils ? (Read pages 240 to 243)

8. What do you understand by 'citizenship' ? what are the qualitities of a good citizen ? (Read pages 199 to 204)

9. Explain the distinction between cabinet and presiden tial governments. Which do you consider to be the better type and why ? (Read yages 191 to 197)

10. 'The State is a growth and not an artificial product'. Discuss this statement (Read pages 92 to 95)

11. Writy short essay of not more than three pages each on any two of the following topics:—

(a) Social Contract Theory. (Read pages 85)

(b) Dicatorship and Democracy. (Read pages 249 to 260)

(c) Freedom of the press. (Read pages 213 to 214)

नागरिकशास्त्र के सिद्धांत

तथा

भारतीय शासन-प्रणाली

(प्रथम भाग)

के० एम० कौल

अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग,

गवर्नमेन्ट कॉलेज, अजमेर

प्रकाशक—

महेश बुक डिपो

पुरानी मण्डी, अजमेर